हिन्दी के सपूत

हिन्दू—मुसलमान

[आदि काल से वर्तमान काल तक की
हिन्दी कविता का अनूठा संग्रह]

*

संग्रहकर्ता :
डा. सूर्यकान्त एम.ए., एम. ओ. एल, डी.लिट् (पंजाब)
डी. फिल. (ऑक्सन)
यूनिवर्सिटी रीडर इन संस्कृत
पंजाब विश्वविद्यालय,
लाहौर

१९४५

एस. चन्द एंड कम्पनी
दिल्ली लाहौर

दो शब्द

भारत एक है और अखँड है। अखंड भारत की आत्मा समान रूप से हिन्दू और मुसलमान इन दो जातियों में अनुस्यूत है। आत्मा का वाणी के रूप में सचिर प्रकाशन ही साहित्य है। फलतः भारत के राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य के निर्माण में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों का समान भाग है। प्रस्तुत सग्रह में हिन्दी के हिन्दू और मुसलमान दोनों ही सपूतो की सचिर रचनाओं का संकलन है।

कवित्व क्या है, ? और कवित्व की गिनती कौन-सी और कैसी विधाएं हैं इन समस्याओं के मार्मिक विवेचन के बिना गृहीत कवियों की रस चर्वणा असम्भव सी है। हमारी साहित्य मीमासा' इसी उद्देश्य को पूरा करती है। विदग्ध रसिकता के संपादन के लिये उसका परिशीलन अनिवार्य है।

ऐतिहासिक तथा आलोचनात्मक सामग्री उक्त कवियों में इष्ट मात्रा में मिल जाती है इस लिये उसका प्रस्तुत संग्रह में पिष्टपेषण नहीं किया गया। और जब कि बी० ए० में पढ़ाए जाने वाले शेक्सपीअर के नाटको पर छात्र अभिलाषित मात्रा में आलोचनात्मक विश्लेषण करना स्वीकार करते हैं तब एफ. ए. और बी. ए. मे पढ़ाए जाने वाले हिंदी कवियों की रचनाओ का रसिक विश्लेषण उनके लिये मान्य होना स्वाभाविक सा बन जाता है।

प्रस्तुत संग्रह के संकलन में इन सब बातों को मन में रखा गया है और अध्यापक तथा छात्रवर्ग से आशा की गई है कि वे हिंदी को उसके उचित आसन पर आरूढ़ करने के लिये उसकी समुचित वीराजना करेंगे और उसे समृद्ध, समुल्लसित तथा ममवेत बनाने के लिये भरसक प्रयत्न करेंगे।

अंत में हम उन सब अतीत तथा वर्तमान हिदी कवियों को हृदय से धन्यवाद देते हैं जिनकी रचनाओ को हमने प्रस्तुत संग्रह में स्थान दिया है।

—सूर्यकान्त

विषय-सूची

मध्यम युग—रीतिमार्गी शाखा

संख्या लेखक पृष्ठ

आधुनिक युग—बहुमुखी अनेक शाखाएँ

संख्या	लेखक	पृष्ठ

उत्तरार्ध—मुसलमान कवि-आदि युग—वीरगाथा

अमीर खुसरो—मध्य युग-भानाश्रयी शाखा

मध्यम युग—प्रेम मार्गी सूफी भक्ति शाखा

★

जगनिक

जम्बै की लड़ाई

सुमिरन करिकै श्री गणपति को, औ गिरिजा के चरण मनाय।
लिखौ लड़ाई अब जम्बै की, यारो सुनियो कान लगाय॥
एक हरकारा दाखिल ह्वै गयो, जहँ दरबार बनाफर क्यार।
कागज लैकै कलमी वालो, अपनो कलमदान लै हाथ॥
लिखी हकीकति तब आल्हा ने, पढियौ याहि बघेले राय।
होवै इच्छा जो लड़ने की, तो तुम लड़ो हमारे साथ॥
रारि मिटावनि की इच्छा हो, तो सुन करौ हमारी बात।
हार नौ लखा लाखापातुर, डोला साजि बिजैसिन क्यार॥
बावन बचुका पशमीना के, हमरी नजरि गुजारौ आय।
खुपरी लावो हमरे बाप की, औ आधीनी करो बनाय॥
दूजी करिहौ जो हमरे सग, पगिया बद बचैयो नाहि।
चिट्ठी लिखिकै यह आल्हा ने, सो धावन को गई गहाय॥
धावन चलि गयो तब लश्कर से, औ माडौ मे पहुचो जाय।
जहा कचहरी नृप जम्बै की, धावन उतरि परो अरगाय॥
बड बड क्षत्री बगाला बैठे, अजगर लागि रह्यौ दरबार।
बात बनाफर की होती रहि, सब पर रही उदासी छाय॥
धावन पहुचि गयो समुहे पर, लचि जम्बै को कियो सलाम।
सात पैग से कुन्नज करिकै, पाती गद्दी दई चलाय॥
नजरि बदल गई तब जम्बै की, पाती तुरतै लई उठाय।
खोलि कै पाती जम्बै बाची, मन मे बहुत खफा होइ जाय॥
तुरत बुलायो तब पडित को, साइति हमे देउ बतलाय।

तोप लगैहों लोहा गढ मे, महुबेबारन दऊँ उड़ाय ॥
साढे साती पड़ो सनीचर, अठयें पड़ी बृहस्पति आय ।
अब ना बचि हौ रणखेतन मे, समुहे काल बिराजो आय ॥
करौ मित्रता तुम आल्हा से, जो मागे सो देउ पठाय ।
भलो तुम्हारो है याही मे, इतनी मानो कही हमारि ॥
इतनी सुनिकै राजा बोले, पडित सुनो हमारी बात ।
एक दिन मरना है सब ही को, खटिया परिकै मरै बलाय ॥
सनमुख रण मे हम मरि जैहै, होइहै जुगन जुगन लौ नाम ।
डोला मागत है बेटी को, ओछी जाति बनाफरि केरि ॥
टुकडखोर है चदेले के, परिमाल के अहै गुलाम ।
दाग लागि है रजपूती मे, हमरो जियत मरन होइ जाय ॥
जीवत डोला हम ना दइ है, चाहै प्राण रहै या जाय ।
इतनी कहि कै राजा जम्बै, फिर पाती को लिखो जवाब ॥
लिखी हकीकत यह जम्बै ने, पढियो याहि बनाफर राय ।
जीवत डोला हम ना दैहै, नाहक रारि बढाई आय ।
चुप्पै लौटि जाउ महुबे को, नाही मूड लऊं कटवाय ॥
जो गति कीन्ही जस्सराज की, सो गति करौ तुम्हारी आय ॥
पाती लिख दई यह जम्बै ने, औ धावन को दई गहाय ।
पाती बाची जब आल्हा ने, गुस्सा गई देह मे छाय ॥
तुरत नगड़ची को बुलवायो, सोने कड़ा दिए डरवाय ।
बजै नगारा हमरे दल मे, सिगरी फौज होय तैयार ॥
तोपदरोगा को बुलवायो, सिगरी तोपै करौ तयार ।
हाथिनवाले को बुलवायो, हाथी सिगरे होयँ तयार ॥
घोड़नवाले को बुलवायो, घोड़ा सबै लेउ सजवाय ।

हुक्म मानि कै चलौ दरोगा, लश्कर सबै सजावन लाग ।।
जितनी तोपे थी महुबे की, सो चरखिन पर दई चढाय।
जितने हाथी थे महुबे के, हौदा एक साथ धरि जाय ।।
जितने घोडा थे लश्कर मे, काठी एक साथ खिच जाय।
बजो नगाडा जब लश्कर मे, क्षत्री सबै भये हुशियार ।।

... ...

दगी सलामी आल्हा दल मे, तोपन बत्ती दई लगाय।
धुआं उडानो आसमान लों, चहुँ दिशि रही अंधरिया छाय ।।
गोला चलन लगे दोऊ दल, अधाधुध कहो ना जाय।
ओला के सम गोला बरसै, मानो मघा बूद झरलाय ।।
खलभल परिगौ दोनों दल मे, क्षत्री गिरे भूमि भहराय।
तकि तकि गोला मलिखे मारै, लोहागढ मे ना अनियाय ।।
गोला छूटै लोहागढ से, कोऊ कुँवर न आडे पाँव।
गोला लागै लोहागढ मे, तुरतै टूकटूक होइ जाय ।।
तोपे धँधै लाली होइ गई, औ लोहागढ़ टूटा नाहि।
कन्ने झरि गए सब तोपन के, तोप दरोगा दियो जवाब ।।

... ...

दोनो सेना एक मिल होइ गई, खटखट चलन लगी तलवार।
चलै दुधारा दक्खिन वाला, कोता खानी चलै कटार ।।
खाडा बाजै रण के भीतर, गोली चलै दनाक दनाक।
कहँ लग बरनौ मै त्यहि औसर, रण मे चले सबै हथियार ।।
झुके सिपाही दोनों दल के, सबके मारु मारु रट लागि।
मुर्चन मुर्चन नचे बेदुला, ऊदनि कहँ पुकारि-पुकारि ।।
नौकर चाकर तुम नाही हो, तुम सब भैया लगो हमार।

जीति कै चलिहौ जो महुबे को, सोने कड़ा दऊँ डरवाय ॥
दियो बढावा नर ऊदनि ने, क्षत्री वीर रूप होइ जाय ।
जैसे लड़िका गबड़ी खेलै, गिनिगिनि धरै अगारू पाय ।
झुके सिपाही महुबे वाले, दोनों हाथ करे तलवार ।
जम्बै बढिगै तब आगे को, औ ऊदनि को दी ललकार ।
कौन सूरमा है महुबे को, सो आगे बढि देइ जवाब ।
घोडा बढायो तब ऊदनि ने, दुइ मस्तकि अड़ाए पाव ।
देही पजर गई जम्बै की, लिया हाथ मे गुर्ज उठाय ।
चोट चलाई नर ऊदनि पर, घोडा पाच कदम हटि जाय ।
लगो चपेटा इक घोडा के, घोड़ा खड़ो-खडो थर्राय ।
खैचि सिरोही लइ ढेवा ने, सो जम्बै पर दई चलाय ।
चोट बचाई तब जम्बै ने, अपनो दीन्हो गुर्ज चलाय ।
लगो चपेटा तब घोड़ा के, सो समुहे ते गयो बराय ।
राजा जम्बै की डपटिन मे, लश्कर तिड़ी-बिडी ह्वै जाय ।
क्षत्री हटिगै सब समुहे ते, कोई वीर न आडे पाव ।
अकिले जम्बै की मारन से, भागन लगे महोबिया ज्वान ।
ऊँचे खाले भागन लागे, औ नारेन की पकरी राह ।
बाधि लगोटा कोउ कोऊ क्षत्री, देही अग विभूति रमाय ।
हमैं न मारियो हमैं न मारियो, हम भिक्षा के मागनहार ।
भिक्षा मागन हम आए थे, तौ लो चलन लगी तलवारि ।
कोऊ लरिकन को रोवत है, कोऊ पुरिखन को चिल्लाय ।
कठिन लड़ाई भइ जम्बै संग, औ बहि चली रक्त की धार ।

... ...

भगे सिपाही माड़ौ वाले, अपने डारि-डारि हथियार ।

भगत सिपाही जम्बै देखे, अपनो हाथी दियो बढाय।
जम्बै बोले तब आल्हा ते, सुन लेउ दस्सराज के लाल।
हमरी तुम्हारी अब बरनी है, देखैं कापर राम रिसाय।
चोट अपनी आल्हा कर लेउ, नाही सरग बैठ पछताउ।
बोले आल्हा तब जम्बै ते, तुम सुन लेउ बघेलेराय।
चोट अगाऊ हम ना करते, ना भागे के परै पिछार।
हा-हा खाते को ना मारैं, ऐसी आन चदेले क्यार।
इतनी सुनि कै तब जम्बै ने, कर मे लीनी लाल कमान।
तीर निकासो एक तरकस ते, सो हौदा पर दियौ जमाय।
बाण चलाय दियो समुहे पर, आल्हा लीनो वार बचाय।
सागि चलाई तब जम्बै ने, आल्हा हाथी दियौ हटाय।
बचिगै आल्हा तब हौदा मे, नीचे गिरी साग अरराय।
पाच कदम जब आल्हा रहिगे, तब जम्बै ने कह्यो सुनाय।
रक्षा कर लइ परमेश्वर ने, अबहू लौट महौबे जाउ।
आल्हा ज्वाब दियो जम्बै को, तुम सुन लेउ बघेलेराय।
पाव पिछारू हम ना धरिहै, चाहे प्राण रहे की जाउ।
इतनी सुनि कै तब जम्बै ने, अपनी खैंच लई तलवारि।
मिलकर चोट करी आल्हा पर, आल्हा दीनी ढाल अडाय।
तानि सिरोही जम्बै मारी, तुरते टूट गई तलवारि।
देखि हकीकत राजा जम्बै, मन मे गए सनाका खाय।
आजु सिरोही धोका दे गई, हमरो काल पहूचो आय।
तब ललकार दई आल्हा ने, जम्बै सावधान ह्वइ जाव।
इतनी कहिकै नर आल्हा ने, अपनी लीन्ही ढाल उठाय।
औझड मारी तब जल्दी से, तुरत महावत दियो गिराय।

गिरत महावत परलै ह्वइ गई, जम्बै लई कटारी काढि ।
हौदा मिलि गयो है हौदा सग, हाथिन अड़ो दात से दात ।
चारि पहर तक चली कटारी, मन मे कोउ न माने हारि ।
हाथी पचशावद से बोले, आल्हा मडलीक अवतार ।
बैरी समुहे यह ठाढ़ो है, ताको लेउ जंजीरन बाधि ।
आल्हा बाधि लियो जम्बै को, लश्कर भगो बघेले क्यार ।।

चंदबरदाई

चद का पृथ्वीराज की प्रशसा करना कि जैसे मोरध्वज के यहा अर्जुन ब्राह्मण बनकर शरण गया, भगवान् ने सिह बनकर मास मागा, शरणागत द्रौपदी का चीर वढाया, वैसे ही तुमने शरणागत को रखकर क्षत्रिय धर्म की रक्षा की; तुम्हारे माता-पिता धन्य है ।

मोरध्वज कै सरन गयौ, दुज होइ सु अर्जुन ।
सिह रूप धरि कन्ह, मस मग्यौ करि गर्जन ।।
दैन चीर अरधग, नृपति सिर करवत धार्‌यौ ।
देखि महा सतवत, प्रगट गोविद उचार्‌यौ ।।
धनि-धनि मात-पित धनि तुम, सरनागत भ्रम तै रखिय ।
क्षत्री कहते कविचद सौ, सभरि बै तिहि सम लषिय ।।

... ...

सुलतान का कहना कि काफिर चौहान को जीतना कौन बड़ी बात है :—

कहै सुरतान अहो तुम क्रूर, भये भय मृत्यु सु झषहु नूर ।
कहा बल युद्ध कहौ पृथिराज, कितौ बल सामत युद्धिह साज ।

हनौ रन सूर जिके चहुआन, गहौ युद्धराज सुषडिय प्रान ।
कहा डर काफर दासहु मुज्झ, कहा मर आवध आगरि जुज्झ ।
नमनि चमकि चढ्यौ सुरतान, टमकिय गज्जिय नद्द निसान ।
जल थ्थल होय थल जल मार, अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ।
मिल्यौ इक साहन लष्ष समुद, समुझ्झिन कन भयो सुर मुद ।
चल्यौ सुरतान मिलान-मिलान, बढ़ी अति चित दुनी चहुआन ।

सुलतान की चढ़ाई का वर्णन

चढ्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज, बजे बर बज्जन बीर असोज ।
भयौ गज घुमर घट निघोर, मनौ झुकि क्रन्न भयौ सुह रोर ।
गजै गज मद्द मनौ घन भद्द, चिकार फिकार भये सुर रुद्द ।
तुरंग महीस कडक्क लगाम, खरक्किय पष्षर तोन सुतान ।
चमकत तेज सनाह सनाह, धरै धर पद्धर राह बिराह ।
भलक्कत टोप सुटोप उतग, मनौ रज जोति उद्योत बिहग ।
दमकत तेज कमान कमान, चित चित मीर रही मझमान ।
भले भर साइय भ्रम सगत्ति, लषैं धर जीयन जात्तिन गत्ति ।
नमैं निज साइय पच बषत्त, सिगारह तीस पढै दिन रत्त ।
नमैं निज सेष धरंम धरम, क्रमैं रह रीति कुरान करम ।
दिढबर बाचरु काछह मीर, तरुनिय एक रतैं बरबीर ।
सबद्दय बेध करै तम ताह, ममतिय पषि हनैं छित छाह ।
धरै इक एक सुवान सुवान, झलक्कत मुड तबल्लह मान ।
धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस, सिरक्कहि बबर घुमर दीस ।
अनेक सुवान अनेकय रग, चढे सब मीरह सेन अभंग ।
अनेक सुवान अनेकय ब्रन, समुझ्झि न हीय सुमुझ्झिन क्रंन ।

करतित झडिय रग अनेक, फुरक्कहि झषहि झषह तेग।
चले धर बान सुसद्धिय दिट्ठ, अगे हथ नारि अमूल गरिट्ठ।
ढलै सिर ढाल अनेक सुरग, फरै फर हारि उभारिय अग।
... ...

पृथ्वीराज का शहाबुद्दीन को पाच दिन आदर के साथ रखकर तीन बार सलाम कराके मीर हुसैन के पुत्र को उसको सौपकर यह प्रण करा कर कि अब हिंदुओ पर न चढूगा, छोड़ना, शाहका गाजी को लेकर कुशल से गजनी पहुचनाः—

रष्षि पच दिन साहि, अदब आदर बहु किन्नौ।
मुअ हुसैन गाजी सुपुत्त, हत्थै ग्रहि दिन्नौ॥
किय सलाम तिय बार, जाहु अप्पने सुथानह।
मति हिंदू पर साहि, सज्जि आओ स्वथानह॥
बैठाइ साह मुष्षासनह, लाय अप्प गाजी सुसथ।
सपत्त जाइ गज्जन पुरह, करो षैर उद्धार अथ॥

—

मध्ययुग - सगुणभक्तिधारा

राम-भक्ति-शाखा

तुलसीदास

परशुराम-लक्ष्मण-संवाद

तेहि अवसर सुनि शिवधनुभगा । आए भृगुकुलकमलपतगा ।।
देखि महीप सकल सकुचाने । बाज झपट जनु लवा लुकाने ।।
गौर सरीर भूति भलि भ्राजा । भाल विशाल त्रिपुड विराजा ।।
सीस जटा ससि बदन सुहावा । रिसि बस कछुक अरुन होइ आवा ।।
भृकुटी कुटिल नयन रिसराते । सहजहु चितवत मनहु रिसाते ।।
वृषभ कध उर बाहु विशाला । चारु जनेउ माल मृगछाला ।।
कटि मुनिबसन तून दुइ बाधे । धनु सर कर कुठार कल काधे ।।

संतवेष करनी कठिन, बरनि न जाइ सरूप ।
धरि मुनितनु जनु वीररसु, आयउ जह सब भूप ।।

देखत भृगुपति वेपु कराला । उठे सकल भय विकल भुवाला ।।
पितु समेत कहि निज निज नामा । लगे करन सब दड प्रणामा ।।
जेहि सुभाय चितवहि हित जानी । सो जानइ जनु आइ खुटानी ।।
जनक बहोरि आइ सिरु नावा । सीय बोलाइ प्रणाम करावा ।।
आसिष दीन्हि सखी हरिषानी । निज समाज लेइ गई सयानी ।।
बिस्वामित्र मिले पुनि आई । पदसरोज मेले दोउ भाई ।।
राम लषन दशरथ के ढोटा । देखि असीस दीन्ह भल जोटा ।।

बहुरि विलोकि विदेह सन, कहहु काह अति भीर ।
पूछत जानि अजान जिमि, ब्यापे कोप सरीर ।।

समाचार कहि जनक सुनाए । जेहि कारण महीप सब आए ।।
सुनत बचन तब अनत निहारे । देखे चापखड महि डारे ।।

अति रिस बोले बचन कठोरा । कहु जड जनक धनुष केइ तोरा ॥
बेगि देखाउ मूढ न त आजू । उलटउ महि जह लगि तव राजू ॥
अति डर उतर देत नृप नाही । कुटिल भूप हरषे मन माही ॥
सुर मुनि नाग नगर नर नारी । सोचहि सकल त्रास उर भारी ॥
मन पछताति सीय महतारी । बिधि अब सगरी बात बिगारी ॥
भृगुपति कर प्रभाव सुनि सीता । अरध निमेप कलप सम बीता ॥

सभय बिलोके लोग सब, जानि जानकी भीर ।
हृदय न हरषु विषादु कछु, बोले श्री रघुवीर ॥

नाथ सभु धनुभजनिहारा । होइहि कोउ एक दास तुम्हारा ॥
आयसु काह कहिय किन मोही । सुनि रिसाय बोले मुनि कोही ॥
सेवक सो जो करइ सेवकाई । अरि करनी करि करिय लराई ॥
सुनहु राम जेइ सिवधनु तोरा । सहसबाहुसम सो रिपु मोरा ॥
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा । नत मारे जइहैं सब राजा ॥
सुनि मुनि बचन लषन मुसुकाने । बोले परसुधरहि अपमाने ॥
बहु धनुही तोरी लरिकाई । कबहु न असि रिस कीन्हि गोसाई ॥
एहि धनु पर ममता केहि हेतू । मुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू ॥

रे नृपबालक ! कालबस, बोलत तोहि न सभार ।
धनुही सम त्रिपुरारिधनु, बिदित सकल ससार ॥

लषन कहा हसि हमरे जाना । सुनहु देव सब धनुष समाना ॥
का छति लाभु जून धनु तोरे । देखा राम नए के भोरे ॥
छुवत टूट रघुपतिहु न दोषू । मुनि बिनु काज करिय कत रोषू ॥
बोले चितइ परसु की ओरा । रे सठ ! सुनेहि सुभाउ न मोरा ॥
बालक बोलि बधउ नहि तोही । केवल मुनि जड जानहि मोही ॥
बाल ब्रह्मचारी अति कोही । बिस्वबिदित छत्रियकुलद्रोही ॥

भुजबल भूमि भूप बिन कीन्ही। विपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ।।
सहसवाहु भुज छेदनिहारा । परसु बिलोकु महीपकुमारा ।।
मातु पितहि जनि सोच बस, करसि महीपकिसोर ।
गरभन के अरभकदलन परसु मोर अति घोर ।।
बिहसि लषन बोले मृदु बानी । अहो मुनीस महा भटमानी ।।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूकि पहारू ।।
इहा कुम्हडबतिया कोउ नाहीँ। जे तरजनी देखि मरि जाही ।।
देखि कुठार सरासन बाना । मै कुछ कहेउँ सहित अभिमाना ।।
भृगुकुल समुझि जनेउ विलोकी । जो कछु कहेहु सहउ रिस रोकी ।।
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरे कुल इन्ह पर न सुराई ।।
बधे पाप अपकीरति हारे । मारतहू पा परिय तुम्हारे ।।
कोटि कुलिससम बचन तुम्हारा। व्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा ।।
जो बिलोकि अनुचित कहेउ, छमहु महामुनि धीर ।
सुनि सरोप भृगुबसमनि, बोले गिरा गभीर ।।
कौसिक सुनहु मद यह बालक । कुटिल काल बस निजकुलघालक ।।
भानु - बस - राकेसकलकू । निपट निरकुस अबुध असकू ।।
कालकवलु होइहि छन माही । कहउ पुकारि खोरि मोरि नाही ।।
तुम्ह हट कहु जौ चहहु उबारा। कहि प्रताप बल रोष हमारा ।।
लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनइ पारा ।।
अपने मुह तुम्ह आपनि करनी। बार अनेक भाति बहु बरनी ।।
नहि सतोष तौ पुनि कछु कहहू । जनि रिसि रोकि दुसह दुख सहहू ।।
बीरबृत्ति तुम धीर अछोभा । गारी देत न पावहु सोभा ।।
सूर समर करनी करहि, कहि न जनावहि आपु ।
विद्यमान रिपु पाइ रन, कायर करहि प्रलापु ।।

तुम्ह तौ काल हाक जनु लावा। बार बार मोहि लागि बोलावा ॥
सुनत लषन के बचन कठोरा। परसु सुधारि धरेउ कर घोरा ॥
अब जनि देइ दोष मोहि लोगू। कटुबादी बालक वधजोगू ॥
बाल बिलोकि वहुत मैं बाचा। अब यह मरनहार भा साचा ॥
कौसिक कहा छमिय अपराधू। बालदोष गुन गनहि न साधू ॥
कर कुठार मैं अकरनकोही। आगे अपराधी गुरुद्रोही ॥
उतर देत छाडउं बिनु मारे। केवल कौसिक सील तुम्हारे ॥
नतु एहि काटि कुठार कठोरे। गुरुहि उरिन होतेउ स्रम थोरे ॥

गाधिसूनु कह हृदय हसि, मुनिहि हरि अरइ सूझ।
अजगव खडेउ ऊख जिमि, अजहुं न बूझ अबूझ ॥

कहेउ लषन मुनि सील तुम्हारा। को नहिं जान बिदित ससारा ॥
मातपितहि उरिन भये नीके। गुरुरिन रहा सोच बड जी के ॥
सो जनु हमरेहि माथे काढा। दिन चलि गयउ ब्याज बहु बाढा ॥
अब आनिय ब्यवहरिया बोली। तुरत देउं मैं थैली खोली ॥
सुनि कटुबचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा ॥
भृगुबर परसु देखावहु मोही। बिप्र बिचारि बचउ नृपद्रोही ॥
मिले न कबहु सुभट रन गाढे। द्विज देवता घरहि के बाढे ॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सैनहि लषन निवारे ॥

लषन उतर आहुतिसरिस, भृगुवर कोपकृसानु।
बढत देखि जलसम बचन, बोले रघुकुलभानु ॥

नाथ करहु बालक पर छोहू। सूध दूधमुख करिय न कोहू ॥
जौ पै प्रभुप्रभाव कछु जाना। तौकि बराबरि करइ अयाना ॥
जौ लरिका कछु अचगरि करही। गुरु पितु मातु मोद मन भरही ॥
करिय कृपा सिसु सेवक जानी। तुम्ह सम सील धीर मुनि ज्ञानी ॥

रामवचन मुनि कछुक जुडाने । कहि कछु लषन बहुरि मुसुकाने ।।
हसत देखि नखसिख रिस व्यापी । राम तोर भ्राता बड पापी ।।
गौर सरीर स्याम मन माही । कालकूट मुख पयमुख नाही ।।
सहज टेढ अनुहरइ न तोही । नीच मीचसम देख न मोही ।।

लषन कहेउ हसि सुनहु मुनि, क्रोध पाप कर मूल ।
जेहि बस जन अनुचित करहि, करहि बिस्व प्रतिकूल ।।

मै तुम्हार अनुचर मुनिराया । परिहरि कोप करिय अब दाया ।।
टूट चाप नहि जुरहि रिसाने । बैठिय होइहहि पाय पिराने ।।
जौ अति प्रिय तौ करिय उपाई । जोरिय कोउ बड़ गुनी बुलाई ।।
बोलत लषनहि जनक डराही । मष्ट करहु अनुचित भल नाही ।।
थरथर कापहि पुरनरनारी । छोट कुमार खोट बड़ भारी ।।
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी । रिस तन जरइ होइ बल हानी ।।
बोले रामहि देइ निहोरा । बचउ बिचारि बंधु लघु तोरा ।।
मन मलीन तनु सुदर कैसे । विषरस भरा कनकघट जैसे ।।

सुनि लछमन बिहसे बहुरि, नयन तरेरे राम ।
गुरु समीम गवने सकुचि, परिहरि बानी बाम ।।

अति विनीत मृदु सीतल बानी । बोले राम जोरि जुग पानी ।।
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना । बालक बचन करिय नहिं काना ।।
बररै बालक एक सुभाऊ । इन्हहि न सत विदूषहि काऊ ।।
तेहि नाही कछु काज बिगारा । अपराधी मै नाथ तुम्हारा ।।
कृपा कोप बध बंध गोसाई । मो पर करिय दास की नाई ।।
कहिय बेगि जेहि बिधि रिस जाई । मुनिनायक सोइ करउँ उपाई ।।
कह मुनि राम जाय रिस कैसे । अजहु अनुज तब चितव अनैसे ।।
एहिके कठ कुठार न दीन्हा । तौ मै काह कोप करि कीन्हा ।।

गर्भ स्रवहि अवनिपरवनि, सुनि कुठारगति घोर।
परसु अछत देखेउ जियत, बैरी भूपकिसोर ॥
बहइ न हाथ दहइ रिस छाती। भा कुठार कुठित नृपघाती ॥
भयेउ बाम बिधि फिरेउ सुभाउ। मोरे हृदय कृपा कसि काऊ ॥
आजु दैव दुख दुसह सहावा। सुनि सौमित्र बहुरि सिरु नावा ॥
बाइ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला ॥
जौ पैं कृपा जरहि मुनि गाता। क्रोध भये तन राखु बिधाता ॥
देखु जनक हठि बालक एहू। कीन्ह चहत जड जमपुर गेहू ॥
बेगि करहु किन आखिन ओटा। देखत छोट खोट नृपढोटा ॥
बिहसे लषन कहा मुनि पाही। मूदे आखि कतहु कोउ नाही ॥
परशुराम तब राम प्रति, बोले उर अति क्रोध।
सभु सरासन तोरि सठ, करसि हमार प्रबोध।
बंधु कहइ कटु समत तोरे। तू छल बिनय करसि कर जोरे ॥
करु परितोष मोर संग्रामा। नाहि तो छाडु कहाउब रामा ॥
छल तजि करहि समर सिवद्रोही। बंधुसहित नत मारउ तोही ॥
भृगुपति बकहि कुठार उठाए। मन मुसुकाहि राम सिर नाए ॥
गुनहु लषन कर हम पर रोषू। कतहु सुधाइहु ते बड दोषू ॥
टेढ जानि बदइ सब काहू। बक्र चद्रमहि ग्रसइ न राहू ॥
राम कहेउ रिस तजहु मुनीसा। कर कुठार आगे यह सीसा ॥
जेहि रिस जाइ करिय सोइ स्वामी। मोहि जानिए आपन अनुगामी ॥
प्रभु सेवकहि समर कस, तजहु बिप्रवर रोसु।
बेष बिलोकि कहेसि कछु, बालकहू नहि दोसु ॥
देखि कुठार बान धनुधारी। भइ लरिकहि रिस बीरु बिचारी ॥
नाम जान पैं तुम्हहि न चीन्हा। बंस सुभाव उतरु तेइ दीन्हा ॥

जौ तुम्ह अवतेहु मुनि की नाई । पदरज सिर सिसु धरत गोसाई ।।
छमहु चूक अनजानत केरी । चाहिए विप्रउर कृपा घनेरी ।।
हमहि तुम्हहि सरबर कस नाथा । कहहु न कहा चरण कह माथा ।।
राममात्र लघु नाम हमारा । परसुसहित बड़ नाम तुम्हारा ।।
देव एक गुन धनुप हमारे । नव गुन परम पुनीत तुम्हारे ।।
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे । छमहु बिप्र अपराध हमारे ।।

बार बार मुनि बिप्रवर, कहा राम सन राम ।
बोले भृगुपति सरुष होइ, तुहूँ बधुसम बाम ।।

निपटहि द्विज करि जानहि मोही । मै जस बिप्र सुनावहु तोही ।।
चाप स्रुवा सर आहुति जानू । कोप मोर अति घोर कृसानू ।।
समिध सेन चतुरंग सुहाई । महामहीप भए पसु आई ।।
मै यह परसु काटि बलि दीन्हे । समरयज्ञ जग कोटिक कीन्हे ।।
मोर प्रभाव बिदित नहि तोरे । बोलसि निदरि विप्र के भोरे ।।
भजेउ चाप दाप बड़ बाढा । अहमिति मनहु जीति जग ठाढा ।।
राम कहा मुनि कहहु बिचारी । रिस अति बडि लघु चूक हमारी ।।
छुवतहि टूट पिनाक पुराना । मै केहि हेतु करउ अभिमाना ।।

जौ हम निदरिहि बिप्र बदि, सत्य सुनहु भृगुनाथ ।
तौ अस को जग सुभट जेहि, भयबस नावहि माथ ।।

देव दनुज भूपति भट नाना । समबल अधिक होउ बलवाना ।।
जौ रन हमहि प्रचारइ कोऊ । लरहि सुखेन काल किन होऊ ।।
छत्रिय तनु धनि समर सकाना । कुलकलक तेहि पामर जाना ।।
कहउ सुभाव न कुलहि प्रससी । कालहु डरहि न रन रघुबसी ।।
विप्रबंस कै असि प्रभुताई । अभय होइ जो तुम्हहि डेराई ।।
सुनि मृदु बचन गूढ रघुपति के । उघरे पटल परसुधरमति के ।।

राम रमापति कर धनु लेहु । खैंचहु मिटइ मोर संदेहू ॥
देत चाप आपहि चलि गयेऊ । परसुराममन बिसमय भयेऊ ॥
जाना रामप्रभाव तब, पुलक प्रफुल्लित गात ।
जोरि पानि बोले बचन, हृदय न प्रेम समात ॥
जय रघुबंशबनजबनभानू । गहन दनुजकुलदहनकृसानू ॥
जय सुरविप्रधेनुहितकारी । जय मदमोहकोह भ्रमहारी ॥
विनय सील करुना गुन सागर । जयति बचनरचना अति नागर ॥
सेवक सुखद सुभग सब अंगा । जय सरीर छवि कोटि अनंगा ॥
करउं काह मुख एक प्रशंसा । जय महेसमनमानसहंसा ॥
अनुचित बचन कहेउ अज्ञाता । छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता ॥
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू । भृगुपति गए बनहि तपहेतू ॥
अपभय सकल महीप डेराने । जहं तहं कायर गवहि पराने ॥
देवन दीन्ही दुंदुभी, प्रभु पर बरषहि फूल ।
हरषे पुर नर नारि सब, मिटा मोह भय सूल ॥

मंथरा-कैकेयी-संवाद

बाजहिं बाजन बिबिध बिधाना । पुर प्रमोद नहिं जाइ बखाना ॥
भरत आगमनु सकल मनावहिं । आवहिं बेगि नयन फल पावहिं ॥
हाट बाट घर गली अथाई । कहहिं परसपर लोग लुगाई ॥
कालि लगन भलि केतिक बारा । पूजिहि बिधि अभिलाषु हमारा ॥
कनकसिंहासन सीय समेता । बैठहिं राम होइ चित चेता ॥
सकल कहहिं कब होइहि काली । बिघन मनावहिं देव कुचाली ॥
तिन्हहि सुहाइ न अवधबधावा । चोरहि चांदनि राति न भावा ॥

सादर बोलि बिनय सुर करही । बारहि बार पाय लै परही ॥
बिपति हमारि विलोकि बडि, मातु करिय सोइ आजु ।
रामु जाहि बन राजु तजि, होइ सकल सुरकाजु ॥
सुनि सुरबिनय ठाढि पछिताती । भयउ सरोजबिपिन हिमराती ॥
देखि देव पुनि कहहि निहोरी । मातु तोहि नहि थोरिउ खोरी ॥
विसमय हरषरहित रघुराऊ । तुम्ह जानहु सब रामप्रभाऊ ॥
जीव करमबस सुखदुखभागी । जाइय अवध देवहित लागी ॥
बार बार गहि चरण सकोची । चली बिचार बिबुधमति पोची ॥
ऊच निवास नीच करतूती । देखि न सकहि पराइ बिभूती ॥
आगिल काजु बिचारि बहोरी । करहहि चाह कुसल कवि मोरी ॥
हरषि हृदय दसरथपुर आई । जनु ग्रहदसा दुसह दुखदाई ॥
नामु मथरा मद मति, चेरी कैकइ केरि ।
अजस पेटारी ताहि करि, गई गिरा मति फेरि ॥
दीख मथरा नगरुबनावा । मजुल मगल बाज बधावा ॥
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू । रामतिलक सुनि भा उर दाहू ॥
करइ बिचारु कुबुद्धि कुजाती । होइ अकाज कवनि बिधि राती ॥
देखि लागि मधु कुटिल किराती । जिमि गव तकहि लेउँ केहि भाती ॥
भरतमातु पहि गइ बिलखानी । का अनमनि हसि कह हसि रानी ॥
उतरु देह नहि लेइ उसासू । नारिचरित करि ढारइ आसू ॥
हसि कह रानि गाल बड़ तोरे । दीन्ह लपन सिख अस मन मोरे ॥
तबहु न बोल चेरि बड़ि पापिनि । छाड़इ स्वास कारि जनु सापिनि ॥
सभय रानि कह कहसि किन, कुशल रामु महिपालु ।
लपनु भरतु रिपुदमनु सुनि, भा कुबरीउर सालु ॥
कत सिख देइ हमहि कोउ माई । गालु करव केहि कर बलु पाई ॥

रामहि छाड़ि कुशल केहि आजू। जिनहि जनेसु देइ जुवराजू ।।
भयउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन। देखत गरब रहत उर नाहिन ।।
देखहु कस न जाइ सब सोभा। जो अवलोकि मोर मनु छोभा ।।
पूतु विदेस न सोचु तुम्हारे। जानतिहहु बस नाहु हमारे ।।
नीद वहुत प्रिय सेज तुराई। लखहु न भूप कपट चतुराई ।।
सुनि प्रिय बचन मलिन मनु जानी। झुकी रानि अब रहु अरगानी ।।
पुनि अस कबहु कहसि घरफोरी। तबि धर जीभ कढावउ तोरी ।।

कानें खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि।
तिय विसेषि पुनि चेरि कहि, भरतमातु मुसुकानि ।।

प्रियवादिनि सिख दीन्हिउं तोही। सपनेहु तो पर कोपु न मोही ।।
सुदिनु सुमगलदायकु सोई। तोर कहा फुर जेहि दिन होई ।।
जेठ स्वामि सेवक लघु भाई। यह दिनकर कुलरीति सुहाई ।।
रामतिलकु जौ साचेउ काली। देउ मागु मन भावत आली ।।
कौसल्यासम सब महतारी। रामहि सहज सुभाय पियारी ।।
मो पर करहि सनेहु विसेखी। मैं करि प्रीति परीछा देखी ।।
जौ विधि जनमु देइ करि छोहू। होहि राम सिय पूत पतोहू ।।
प्रान ते अधिक रामु प्रिय मोरे। तिन्ह के तिलक छोभु कस तोरे ।।

भरत सपथ तोहि सत्य कहु, परिहरि कपट दुराउ।
हरष समय बिसमय करसि, कारन मोहि सुनाउ ।।

एकहि वार आस सव पूजी। अब कछु कहब जीभ करि दूजी ।।
फोरइ जोग कपारु अभागा। भलेउ कहत दुख रउरेहि लागा।
कहहि झूठि फुरि बात बनाई। ते प्रिय तुमहहि करुइ मे माई ।।
हमहु कहब अब ठकुरसुहाती। नाहि त मौन रहब दिनराती ।।
करि कुरूप विधि परबस कीन्हा। बवा सो लूनिय लहिय जो दीन्हा ।।

कोउ नृप होय हमहि का हानी। चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी॥
जारइजोगु सुभाउ हमारा। अनभल देखि न जाय तुम्हारा॥
तो ते कछुक बात अनुसारी। छमिय देखि बड़ि चूक हमारी॥
गूढ कपट प्रिय बचन सुनि, तीय अधरबुधि रानि।
सुरमायावस बैरिनिहि, सुहृद जानि पतियानि॥
सादर पुनि पुनि पूछति ओही। सबरीगान मृगी जनु मोही॥
तसि मति फिरी अहइ जसि भावी। रहसी चेरि घात जनु फावी॥
तुम्ह पूछहु मैं कहत डेराऊ। धरेउ मोर घरफोरी नाऊ॥
सजि प्रतीति वहु बिधि गढि छोली। अवध साढसाती तब बोली॥
प्रिय सिय रामु कहा तुम्ह रानी। रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि बानी॥
रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समउ फिरे रिपु होंहि पिरीते॥
भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जर जारि करइ सोइ छारा॥
जर तुम्हारि चह सवति उखारी। रूंधहु करि उपाय बरबारी॥
तुमहि न सोचु सोहाग बल, निजबस जानहु राउ।
मनमलीन मुहमीठ नृप, राउर सरल सुभाउ॥
चतुर गभीर राममहतारी। बीचु पाई निज बात सभारी॥
पठये भरतु भूप ननिअउरे। राम मातु मत जानव रउरे॥
सेवहि सकल सवति मोहि नीके। गरबित भरत मातु बल पीके॥
सालु तुम्हार कौसलहि माई। कपट चतुर नहि होइ जनाई॥
राजहि तुम्ह पर प्रेमु विसेखी। सवति सुभाव सकइ नही देखी॥
रचि प्रपचु भूपहि अपनाई। रामतिलकहित लगन धराई॥
यह कुल उचित राम कहु टीका। सबहि सुहाइ मोहि सुठ नीका॥
आगिल बात समुझि डर मोही। देउ दैब फिरि सो फलु ओही॥
रचि पचि कोटिक कुटिलपन, कीन्हेसि कपट प्रबोध।

कहेसि कथा सत सवति कै, जेहि बिधि बाढ विरोध ।।
भावीबस प्रतीति उर आई । पूछु रानि पुनि सपथ देवाई ।।
का पूछहु तुम्ह अबहु न जाना । निज हित अनहित पसु पहिचाना ।।
भयउ पाखु दिन सजत समाजू । तुम्ह पाई सुधि मोहि मन आजू ।।
खाइय पहिरिय राज तुम्हारे । सत्य कहे नहि दोषु हमारे ।।
जौ असत्य कछु कहव बनाई । तौ बिधि देइहि हमहि सजाई ।।
रामहि तिलक कालि जौ भयऊ । तुम्ह कहु बिपतिबीजु बिधि बयऊ ।।
रेख खचाइ कहउ वल भाखी । भामिनि भइहु दूध कह माखी ।।
जौ सुतसहित करहु सेवकाई । तौ घर रहहु न आन उपाई ।।
कद्रू विनतहि दीन्ह दुख, तुम्हहि कौसिला देव ।
भरतु बंदिगृह सेइहहि, लषनु राम के नेव ।।
कैकयसुता सुनत कटु वानी । कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी ।।
तन पसेउ कदली जिमि कापी । कुबरी दसन जीभ तव चापी ।।
कहि कहि कोटिक कपट कहानी । धीरज धरहु प्रबोधेसि रानी ।।
कीन्हेसि कठिन पढाइ कुपाठू । जिमि न नवइ फिरि उकठ कुकाठू ।।
फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली । बकिहि सराहइ मानि मराली ।।
सुनु मथरा बात फुरि तोरी । दहिन आखि नित फरकइ मोरी ।।
दिन प्रति देखहु राति कुसपने । कहहु न तोहि मोहवस अपने ।।
काह करउ सखि सूध सुभाऊ । दाहिन बाम न जानउ काऊ ।।
अपने चलत न आजु लगि, अनभल काहुक कीन्ह ।
केहि अघ एकहि बार मोहि, दैव दुसह दुख दीन्ह ।।
नैहर जनमु भरब वरु जाई । जियत न करब सवति सेवकाई ।।
अरि बस दैव जियावत जाही । मरनु नीक तेहि जीव न चाही ।।
दीन बचन कह बहुबिधि रानी । सुनि कुवरी तियमाया ठानी ।।

अस कस कहहु मानि मन ऊना। सुख सोहागु तुम कहु दिन दूना ।।
जेइ राउर अति अनभल ताका। सोइ पाइहि यह फलु परिपाका ।।
जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि। भूख न बासर नींद न जामिनि ।।
पूछेउं गुनिन्ह रेख तिन्ह खाची। भरत भुआल होहिं यह साची ।।
भामिनि करहु न कहउ उपाऊ। है तुम्हरी सेवा बस राऊ ।।

परउ कूप तब बचन पर, सकउ पूत पति त्यागि ।।
कहसि मोर दुख देखि बड़, कस न करब हित लागि ।।

कुबरी करि कबूलि कैकेई। कपटछुरी उरपाहन टेई ।।
लखइ न रानि निकट दुख कैसे। चरइ हरिततृन बलिपसु जैसे ।।
सुनत बात मृदु अत कठोरी। देति मनहु मधु माहुर घोरी ।।
कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाही। स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाही ।।
दुइ बरदान भूप सन थाती। मागहु आज जुडावहु छाती ।।
सुतहि राजु रामहि बनबासू। देहु लेहु सब सवति हुलासू ।।
भूपति रामसपथ जब करई। तब मागहु जेहि बचन न टरई ।।
होइ अकाजु आजु निस बीते। बचनु मोर प्रिय मानेउ जीते ।।

बड कुघातु करि पातकिनि, कहेसि कोपगृह जाहु।
काज सवारेहु सजग सब, सहसा जनि पतियाहु ।।

कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी। बार बार बड़ि बुद्धि बखानी ।।
तोहि सम हित न मोर ससारा। बहे जात कर भइसि अधारा ।।
जौ बिधि पुरब मनोरथु काली। करउ तोहि चखपूतरि आली ।।
बहु बिधि चेरिहि आदरु देई। कोपभवन गवनी कैकेई ।।

दशरथ-कैकेयी-संवाद

बार बार कह राउ, सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि ।
कारन मोहि सुनाउ, गजगामिनि निजकोप कर ।।

अनहित तोर प्रिये केहि कीन्हा। केहि दुइ सिर केहि जम चह लीन्हा ।।
कहु केहि रकहि करउं नरेसू। कहु केहि नृपहि निकासउ देसू ।।
सकउ तोर अरि अमरउ मारी। काह कीट बपुरे नर नारी ।।
जानसि मोर सुभाउ बरोरू। मन तव आननचदचकोरू ।।
प्रिया प्रान सुत सरबसु मोरे। परिजन प्रजा सकल बस तोरे ।।
जौ कछु कहउ कपट करि तोही। भामिनि राम सपथ सत मोही।
बिहसि मागु मन भावति बाता। भूषन सजहि मनोहर गाता ।।
घरी कुघरी समुझि जिय देखू। बेगि प्रिया परिहरहि कुबेखू ।।

यह सुनि मनु गुनि सपथ बडि, बिहसि उठी मतिमद।
भूषन सजित बिलोकि मृग, मनहुं किराततिनि फद ।।

पुनि कह राउ सुहृद जिय जानी। प्रेम पुलकि मृदु मजुल बानी ।।
भामिनि भयउ तोर मनभावा। घर घर नगर अनदबधावा ।।
रामहि देउ कालि जुवराजू। सजहि सुलोचनि मगल साजू ।।
दलकि उठेउ सुनि हृदय कठोरू। जनु छुइ गयउ पाक बरतोरू ।।
ऐसिउ पीर बिहसि तेइ गोई। चोरनारि जिमि प्रगटि न रोई ।।
लखी न भूप कपट चतुराई। कोटि कुटिल मनि गुरू पढाई ।।
जद्यपि नीतिनिपुन नरनाहू। नारिचरितजलनिधि अवगाहू ।।
कपट सनेह बढाइ बहोरी। बोली बिहसि नयन मुह मोरी ।।

मांगु मागु पै कहहु पिय, कबहु न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ, तेउ पावत सदेहु ।।

जानेउं मरम राउ हसि कहई। तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई ।।
थाती राखि न मागेहु काऊ। बिसरि गएउ मोहि भोर सुभाऊ ।।
झूठेहु हमहि दोष जनि देहू। दुइ कै चारि मागि किन लेहू ।।
रघुकुलरीति सदा चलि आई। प्राण जाहु बरु बचन न जाई ।।

नहि असत्य सम पातकपुंजा । गिरिसम होंहि कि कोटिक गुंजा ॥
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए । बेद पुरान बिदित मुनि गाए ॥
तेहि पर राम सपथ करि आई । सुकृत सनेह अवधि रघुराई ॥
बात दृढाइ कुमति हसि बोली । कुमत बिहग कुलह जनु खोली ॥

भूप मनोरथ सुभग बन, सुख सुबिहग समाजु ।
भिल्लिनि जिमि छाडन चहति, बचन भयंकर बाजु ॥

सुनहु प्रान प्रिय भावत जीका । देहु एक बर भरतहि टीका ॥
मागउं दूसर बर कर जोरी । पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी ॥
तापसवेष बिसेषि उदासी । चौदह बरसि राम बनवासी ॥
सुनि मृदु बचन भूप हिय सोकू । ससिकर छुअत बिकल जिमि कोकू ॥
गयउ सहमि नहि कछु कहि आवा । जनु सचान बन झपटेउ लावा ॥
बिबरन भयउ निपट नरपालू । दामिनि हनेउ मनहु तरु तालू ॥
माथे हाथ मूंदि दोउ लोचन । तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन ॥
मोर मनोरथसुरतरु फूला । फरत करिनि जिमि हतेउ समूला ॥
अवध उजारि कीन्हि कैकेयी । दीन्हेसि अचल बिपति कै नेई ॥

कवने अवसर का भयउ, गयउ नारिबिस्वास ।
जोगसिद्धि फल समय जिमि, जतिहि अविद्यानास ॥

एहि विधि राउ मनहि मन झाखा । देखि कुभांति कुमति मनु माखा ॥
भरत कि राउर पूत न दोही । आनेहु मोल बेसाहि कि मोही ॥
जो सुनि सर सम लागु तुम्हारे । काहे न बोलहु बचनु संभारे ॥
देहु उतर अरु कहहु कि नाही । सत्यराध तुम रघुकुल माही ॥
देन कहेहु अब जनि बरु देहू । तजहु सत्य जग अपजस लेहू ॥
सत्य सराहि कहेहु बरु देना । जानेहु लेइहि मागि चबेना ॥
सिबि दधीचि बलि जो कछु भाखा । तुम धनु तजेउ बचनपन राखा ॥

अति कटु बचन कहति कैकेई। मानहु लोन जरे पर देई ॥
धरम धुरधर धीर धरि, नयन उघारे राय।
सिर धुनि लीन्हि उसास असि, मारेसि मोहि कुठाय ॥
आगे दीखि जरति रिसि भारी। मनहु रोष तरवारि उघारी ॥
मूठ कुबुद्धि धार निठुराई। धरी कूबरी सान बनाई ॥
लखी महीप कराल कठोरा। सत्य कि जीवनु लेइहि मोरा ॥
बोलेउ राउ कठिन कर छाती। बानी सविनय तासु सोहाती ॥
प्रिया बचन कस कहसि कुभाती' भीरु प्रतीत प्रीति करि हाती ॥
मोरे भरत राम दुइ आखी। सत्य कहउ करि सकर साखी ॥
अवसि दूत मैं पठउब प्राता। अइहहि बेगि सुनत दोउ भ्राता ॥
सुदिन सोधि सब साजु सजाई। देउ भरत कहु राजु बनाई ॥
लोभु न रामहि राजु कर, बहुत भरत पर प्रीति।
मैं बड छोट बिचारि जिय, करत रहेउ नृपनीति ॥
राम सपथ सत कहउ सुभाऊ। राममातु कछु कहेउ न काऊ ॥
मैं सब कीन्ह तोहि बिनु पूछे। तेहि ते परेउ मनोरथ छूछे ॥
रिस परिहरु अब मगलसाजू। कछु दिन गए भरत जुवराजू ॥
एकहि बात मोहि दुख लागा। बर दूसर असमजस मागा ॥
अजहू हृदय जरत तेहि आचा। रिस परिहास कि साचेहु साचा ॥
कहु तजि रोषु रामअपराधू। सब कोउ कहइ राम सुठि साधू ॥
तुहू सराहसि करसि सनेहू। अब सुनि मोहि भयउ सदेहू ॥
जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला। सो किमि करिहि मातुप्रतिकूला ॥
प्रिया हास रिस परिहरहि, मागु बिचारि बिबेकु।
जेहि देखउँ अब नयन भरि, भरत राज अभिषेकु ॥
जिअइ मीन बरु बारि बिहीना। मनि बिनु फनिक जिअइ दुख दीना ॥

कहइ सुभाउ न छल मन माही। जीवन मोर राम बिनु नाही ॥
समुझि देखु जिय प्रिया प्रबोना। जीवन राम दरस आधीना ॥
सुनि मृदु बचन कुमति अति जरई। मनहु अनल आहुति घृत परई ॥
कहइ करहु किन कोटि उपाया। इहा न लागिहि राउरि माया ॥
देहु कि लेहु अजस करि नाही। मोहि न वहुत प्रपच सोहाही ॥
राम साधु तुम्ह साधु सयाने। राम मातु भलि सब पहिचाने ॥
जस कोकिला मोर भल ताका। तस फल उन्हहि देउ करि साका ॥

होत प्रात मुनि वेष धरि, जौ न राम बन जाहि।
मोर मरन राउर अजसु, नृप समुझिय मन माहि ॥

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढी। मानहु रोपतरगिनि बाढी ॥
पाप पहार प्रगट भइ सोई। भरी क्रोध जल जाइ न जोई ॥
दोउ बर कूल कठिन हठधारा। भवर कूबरी बचन प्रचारा ॥
ढाहत भूपरूप तरमूला। चली विपतिबारिधि अनुकूला ॥
लखी नरेस बात सब साची। तियमिस मीच सीस पर नाची ॥
गहि पद बिनय कीन्हि बैठारी। जनि दिनकरकुल होसि कुठारी ॥
मागु माथ अबहीं देउ तोही। राम विरह जनि मारसि मोही ॥
राखु राम कह जेहि-तेहि भाती। नाहि त जरहि जनम-भर छाती ॥

देखी ब्याधि असाधि नृप, परेउ धरनि धुनि माथ।
कहत परम आरत वचन, राम राम रघुनाथ ॥

ब्याकुल राउ सिथिल सब गाता। करिनि कलपतरु मनहु निपाता ॥
कठ सूख मुख आव न बानी। जनु पाठीन दीन बिनु पानी ॥
पुनि कह कटु कठोर कैकेई। मनहुं घाय महु माहुर देई ॥
जौ अतहु अस करतब रहेऊ। मागु-मागु तुम्ह केहि बल कहेऊ ॥
दुइ कि होइ इक समय भुआला। हसब ठठाइ फुलाउब गाला ॥

दानि कहाउब अरु कृपनाई । होइ कि पेम कुसल तैं ताई ॥
छाड़हु बचन कि धीरज धरहू । जनि अबला जिमि करुना करहू ॥
तनु तिय तनय धाम धनु धरनी । सत्यसंध कहँ तृन सम बरनी ॥
मरम बचन सुनि राउ कह, कहु कछु दोष न तोर ।
लागेउ तोहि पिसाच जिमि, काल कहावत मोर ॥
चहत न भरत भूप तिहि भोरे । बिधिबस कुमति बसी जिय तोरे ॥
सो सब मोर पापपरिनामू । भयउ कुठाहर जेहि बिधि बामू ॥
सुबस बसहि फिरि अवध सुहाई । सब गुन धाम राम प्रभुताई ॥
करिहहि भाइ सकल सेवकाई । होइहि तिहु पुर राम बड़ाई ॥
तोर कलंक मोर पछिताऊ । मुयहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ॥
अब तोहि नीक लाग कर सोई । लोचन ओट बैठु मुह गोई ॥
जब लगि जियउ कहउँ कर जोरी । तब लगि जनि कछु कहसि बहोरी ॥
फिर पछतैहसि अंत अभागी । मारसि गाइ नहारुहि लागी ॥
परेउ राउ कहि कोटि बिधि, काहे करसि निदानु ।
कपट सयानि न कहति कछु, जागति मनहु मसानु ॥
राम राम रट बिकल भुआलू । जनु बिनु पंख भुअंग बेहालू ॥
हृदय मनाव भोरु जनि होई । रामहि जाइ कहइ जनि कोई ॥
उदय करहु जनि रबि रघुकुलगुर । अवध बिलोकि सूल होइहि उर ॥
भूप प्रीति कै कह कठिनाई । उभय अवधि बिधि रची बनाई ॥
बिलपत नृपहि भयउ भिनुसारा । बीना बेनु संख धुनि द्वारा ॥
पठहि भाट गुन गावहि गायक । सुनत नृपहि जनु लागहि सायक ॥
मंगल सकल सुहाहि न कैसे । सहगामिनिहि बिभूषन जैसे ॥
तेहि निसि नींद परी नहि काहू । रामदरसलालसा उछाहू ॥

राम के विनीत वचन

मन मुसकाइ भानुकुलभानू । राम सहज आनदनिधानू ॥
बोले वचन विगत सब दूषन । मृदुमजुल जनु बागविभूषन ॥
सुनु जननी सोइ सुत बडभागी । जो पितु मातु बचन अनुरागी ॥
तनय मातु पितु तोषनिहारा । दुर्लभ जननि सकल ससारा ॥

मुनिगन मिलनु बिसेषि वन, सबहि भाति हित मोर ।
तेहि मह पितु आयसु बहुरि, समत जननी तोर ॥

भरतु प्रानप्रिय पावहि राजू । बिधि सब विधि मोहि सनमुख आजू ॥
जौ न जाउ बन ऐसेहु काजा । प्रथम गनिय मोहि मूढ समाजा ॥
सेवहि अरडु कलपतरु त्यागी । परिहरि अमृतु लेहि विषु मागी ॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाही । देखि बिचारि मातु मन माही ॥
अब एक दुख मोहि बिसेखी । निपट बिकल नरनायक देखी ॥
थोरिहि बात पितहि दुख भारी । होति प्रतीति न मोहि महतारी ॥
राउ धीरु गुनउदधि अगाधू । भा मोहि ते कछु बड़ अपराधू ॥
तात मोहि न कहत कछु राऊ । मोरि सपथ तोहि कहु सतिभाऊ ॥
देस काल अबसर अनुसारी । बोले बवन विनीत विचारी ॥
तात कहउ कछु करउ ढिठाई । अनुचित छमब जानि लरिकाई ॥
अति लघु बात लागि दुख पावा । काहु न मोहि कहि प्रथम जनावा ॥
देखि गोसाईंहि पूछिउ माता । सुनि प्रसगु भए सीतल गाता ॥

मगल समय सनेहबस, सोच परिहरिय तात ।
आयसु देइय हरषि हिय, कहि पुलके प्रभुगात ॥

धन्य जनम जगतीतल तासू । पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू ।
चारि पदारथ करतल ताके । प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके ॥

आयसु पालि जनम फल पाई । ऐहउ बेगिहि होउ रजाई ॥
बिदा मातु सन आवउ माँगी । चलिहउ बनहि बहुरि पग लागी ॥
अस कहि रामु गवन तब कीन्हा । भूप सोकवस उतरु न दीन्हा ॥

❀ ❀ ❀

राम-सीता-संवाद

कहि प्रिय बचन बिबेकमय, कीन्ह मातुपरितोष ।
लगे प्रबोधन जानकिहि, प्रगटि बिपिनगुनदोष ॥

मातु समीप कहत सकुचाही । बोले समउ समुझि मन माही ॥
राजकुमारि सिखावन सुनहू । आनि भाति जिय जनि कछु गुनहू ॥
आपन मोर नीक जौ चहहु । बचन हमार मानि गृह रहहू ॥
आयसु मोरि सासु सेवकाई । सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥
एहि ते अधिक धरमु नहि दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ॥
जब जब मातु करहि सुधि मोरी । होइहि प्रेम बिकल मति भोरी ॥
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुदरि समुझाएहु मृदु बानी ॥
कहउ सुभाय सपथ सत मोही । सुमुखि मातु हित राखउ तोही ॥

गुरु स्रुति समत धरम फल, पाइअ बिनहि कलेस ।
हठबस सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस ॥

मै पुनि करि प्रमान पितुबानी । बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥
दिवस जात नहि लागहि बारा । सुदरि सिखवन सुनहु हमारा ॥
जौ हठ करहु प्रेमबस बामा । तो तुम्ह दुख पाउब परिनामा ॥
कानन कठिन भयकर भारी । घोर घाम हिम बारि बयारी ॥
कुस कटक मग काकर नाना । चलब पयादेहि बिनु पदत्राना ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥
कंदर खोह नदी नद नारे । अगम अगाध न जाहि निहारे ॥

[illegible] वाघ वृक केह[illegible] नागा । करहि नाद सुनि धीरज भागा ॥

[illegible] ब[illegible]कल बसन, असन कद फल मूल ।

ते[illegible] सब दिन मिलहि, समय समय अनुकूल ॥

नर अहार रजनीचर करही । कपट बेष बिधि कोटिक करही ॥

लागइ अति पहार कर पानी । बिपिन बिपति नहिं जाइ बखानी ॥

ब्याल कराल बिहग बन घोरा । निसिचर निकर नारि नर चोरा ॥

डरपहि धीर गहन सुधि आए । मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाए ॥

हसगवनि तुम्ह नहि बनजोगू । सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू ॥

मानससलिलसुधाप्रतिपाली । जियइ कि लवनपयोधि मराली ॥

नव रसालबनविहरनिसीला । सोह कि कोकिल बिपिन करीला ॥

रहहु भवन अब हृदय बिचारी । चदवदनि दुख कानन भारी ॥

सहज सुहृद गुरुस्वामिसिख, जो न करइ सिर मानि ।

सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हितहानि ॥

सुनि मृदु बचन मनोहर पिय के । लोचन ललित भरे जल सिय के ॥

सीतल सिख दाहक भइ कैसे । चकइहि सरदचद निसि जैसे ॥

उतरु न आव बिकल बैदेही । तजन चहत सुचि स्वामि सनेही ॥

बरबस रोकि बिलोचन बारी । धरि धीरज उर अवनिकुमारी ॥

लागि सासु पग कह कर जोरी । छमबि देवि बडि अविनय मोरी ॥

दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई । जेहि बिधि मोर परम हित होई ॥

मै पुनि समुझि दीख मन माही । पिय बियोगसम दुख जग नाही ॥

प्राननाथ करुनायतन, सुदर सुखद सुजान ।

तुम्ह बिनु रघुकुलकुमुदबिधु, सुरपुर नरकसमान ॥

मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥

सासु ससुर गुरु सजन सुहाई । सुत सुदर सुशील सुखदाई ॥

जह लगि नाथ नेह अरु नाते । पिय बिनु तियहि तरनि ते ताते ।।
तन धन धाम धरनि पुरराजू । पतिबिहीन सब सोकसमाजू ।।
भोग रोग सम भूषन भारू । जमजातना सरिस ससारू ।।
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माही । मो कह सुखद कतहु कछु नाही ।।
जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी । तइसिय नाथ पुरुप बिनु नारी ।।
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । सरदबिमल बिधुवदन निहारे ।।

खग मृग परिजन नगर बन, वलकल बिमल दुकूल ।
नाथ साथ सुरसदनसम, परनसाल सुखमूल ।।

वनदेवी वनदेव उदारा । करिहहि सासु ससुर सम सारा ।।
कुस किसलय साथरी सुहाई । प्रभु सग मजु मनोज तुराई ।।
कद मूल फल अमिय अहारू । अवध सौध सतसरिस पहारू ।।
छिनुछिनु प्रभुपदकमल बिलोकी । रहिहउ मुदित दिवस जिमि कोकी ।।
वनदुख नाथ कहे वहुतेरे । भय विषाद परिताप घनेरे ।।
प्रभुबियोग लवलेससमाना । सब मिलि होहि न कृपानिधाना ।।
अस जिय जानि सुजानसिरोमनि । लेइअ सग मोहि छाडिअ जनि ।।
विनती बहुत करउ का स्वामी । करुनामय उर अतरजामी ।।

राखिअ अवध जो अबधि लगि, रहत जानि अहि प्रान ।
दीनबधु सुदर सुखद, सीलसनेहनिधान ।।

मोहि मग चलत न होइहि हारी । छिनुछिनु चरनसरोज निहारी ।।
सबहि भाति पियसेवा करिहउं । मारग जनित सकल स्रम हरिहउ ।।
पाय पखारि बैठ तरु छाही । करिहउ बाउ मुदित मन माही ।।
स्रमकन सहित स्याम तनु देखे । कह दुख समउ प्रानपति पेखे ।।
सम महि तृन तरु पल्लव डासी । पाय पलोटिहि सब निसि दासी ।।
बार बार मृदु मूरति जोही । लागहि तात बयारि न मोही ।।

को प्रभुसग मोहि चितवनिहारा। सिघबधुहि जिमि ससक सियारा ॥
मै सुकुमारि नाथ बनजोगू। तुम्हहि उचित तपु मो कहं भोगू ॥
ऐसेउ बचन कठोर सुनि, जौ न हृदय बिलगान।
तौ प्रभु बिषम बियोगदुख, सहिहहि पावर प्रान ॥

❀ ❀ ❀

भरतागमन के समय लक्ष्मण का क्रोध और श्रीराम का उन्हें समझाना

लषन लखेउ प्रभु हृदय खँभारू। कहत समय सम नीति बिचारू ॥
बिनु पूछे कछु कहउ गोसाईं। सेवक समय न ढीठ ढिठाई ॥
तुम्ह सर्वज्ञ सिरोमनि स्वामी। आपनि समुझि कहउ अनुगामी ॥
नाथ सुहृद सुठि सरल चित, सील सनेह निधान।
सब पर प्रीति प्रतीति जिय, जानिय आपु समान ॥
विषयी जीव पाइ प्रभुताई। मूढ मोहबस होहि जनाई ॥
भरत नीतिरत साधु सजाना। प्रभुपदप्रेम सकल जग जाना ॥
तेऊ आजु राजपदु पाई। चले धरम मरयाद मेटाई ॥
कुटिल कुबधु कुअवसर ताकी। जानि राम बनबास एकाकी ॥
करि कुमत्र मन साजि समाजू। आए करइ अकटक राजू ॥
कोटि प्रकार कलपि कुटिलाई। आए दल बटोरि दोउ भाई ॥
जौ जिय होति न कपट कुचाली। केहि सुहाति रथ बाजि गजाली ॥
भरतहि दोष देइ को जाए। जग बौराइ राजपद पाए ॥
ससि गुरुतियगामी नहुष, चढ़ेउ भूमिसुर जान।
लोक बेद ते बिमुख भा, अधम न बेन समान ॥
सहसबाहु सुरनाथ त्रिसकू। केहि न राजमद दीन्ह कलकू ॥

भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ। रिपु रिन रच न राखब काऊ ॥
एक कीन्ह नहिं भरत भलाई। निदरे राम जानि असहाई ॥
समुझि परिहि सोउ आजु बिसेखी। समर सरोष राममुख पेखी ॥
इतना कहत नीतिरस भूला। रनरसबिटप पुलक मिस फूला ॥
प्रभुपद बदि सीस रज राखी। बोले सत्य सहज बल भाखी ॥
अनुचित नाथ न मानब मोरा। भरत हमहि उपचार न थोरा ॥
कहं लगि सहिय रहिअ मन मारे। नाथ साथ धनु हाथ हमारे ॥

छत्रि जाति रघुकुल जनम, राम अनुज जग जान ॥
लातहु मारे चढिय सिर, नीच को धूरि समान ॥

उठि कर जोरि रजायसु मागा। मनहु बीररस सोवत जागा ॥
वाधि जटा सिर कसि करि माथा। साजि सरासन सायक हाथा ॥
आजु रामसेवक जसु लेऊं। भरतहि समर सिखावन देऊ ॥
राम निरादर कर फल पाई। सोवहु समरसेज दोउ भाई ॥
आइ बना भल सकल समाजू। प्रगट करउं रिस पाछिल आजू ॥
जिमि करिनिकर दलइ मृगराजू। लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥
तैसेहि भरतहि सेनसमेता। सानुज निदरि निपातउ खेता ॥
जौ सहाय कर सकर आई। तौ मारउ रन राम दोहाई ॥

अति सरोष भाषे लषन, लखि सुनि सपथ प्रमान।
सभय लोक सब लोकपति, चाहत भभरि भगान ॥

जग भयमगन गगन भइ बानी। लषन बाहुबल बिपुल बखानी ॥
तात प्रताप प्रभाउ तुम्हारा। को कहि सकइ को जाननिहारा ॥
अनुचित उचित काज कछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सब कोऊ ॥
सहसा करि पाछे पछिताही। कहहि बेद बुध ते बुध नाही ॥
सुनि सुरबचन लषन सकुचाने। राम सीय सादर सनमाने ॥

कही तात तुम्ह नीति सुहाई। सब ते कठिन राजपद भाई॥
जों अचवत मातहिं नृप तेई। नाहि न साधु सभा जेहि सेई॥
सुनहु लषन भल भरत सरीसा। बिधि प्रपच महु सुना न दीसा॥
भरतहि होइ न राजमद, बिधि हरि हर पद पाइ।
कबहु कि काजी सीकरनि, छीरसिंधु बिनसाइ॥
तिमिर तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगन मगन मकु मेघहि मिलई॥
गोपद जल बूडहि घटजोनी। सहज छमा बरु छांडइ छोनी॥
मसकफूक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमद भरतहि भाई॥
लषन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबधु नहि भरतसमाना॥
सगुन षीर अवगुन जल ताता। मिलइ रचइ परपंच विधाता॥
भरत हंस रबिबसतडागा। जनमि कीन्ह गुनदोषबिभागा॥
गहि गुन पय तजि अवगुनबारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥
कहत भरतगुनसीलसुभाऊ। प्रेमपयोधिमगन रघुराऊ॥
सुनि रघुबर बानी बिबुध, देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सों, प्रभु को कृपानिकेतु॥
जौ न होत जग जनम भरत को। सकल धरमधुरधरनिधरत को॥
कबिकुलअगम भरतगुनगाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा॥
लषन राम सिय सुनि सुरबानी। अति सुख लहेउ न जाइ बखानी॥

❀ ❀ ❀

अंगद-रावण-संवाद

कह दसकठ कवन तै बदर। मै रघुवीर दूत दसकधर॥
मम जनकहि तोहि रही मिताई। तव हित कारन आयउ भाई॥
उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती। सिव बिरचि पूजेहु बहु भाती॥

वर पायहु कीन्हेउ सब काजा। जीतेहु लोकपाल सब राजा ॥
नृप अभिमान मोह बस किंबा। हरि आनिहु सीता जगदम्बा ॥
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा ॥
दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजन सहित संग निज नारी ॥
सादर जनकसुता करि आगे ः एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे ॥

प्रनतपाल रघुबंसमनि, त्राहि त्राहि अब मोहि।
आरत गिरा सुनत प्रभु, अभय करहिंगे तोहि ॥

रे कपिपोत न बोलु सभारी। मूढ न जानेहि मोहि सुरारी ॥
कहु निज नाम जनक कर भाई। केहि नाते मानिए मिताई ॥
अंगद नाम बालि कर बेटा। तासौं कबहु भई ही भेटा ॥
अंगद वचन सुनत सकुचाना। रहा बालि वानर मैं जाना ॥
अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंसअनल कुलघालक ॥
गर्भ न गयउ व्यर्थ तुम्ह आयहु। निज मुख तापस दूत कहायेहु ॥
अब कहु कुसल बालि कहं अहई। बिहंसि वचन तब अंगद कहई ॥
दिन दस गए बालि पहिं जाई। बूझेहु कुसल सखा उर लाई ॥
राम बिरोध कुसल जसि होई। सो सब तोहि सुनाइहि सोई ॥
सुनु सठ भेद होइ मन ताके। श्रीरघुबीर हृदय नहिं जाके ॥

हम कुल-घालक सत्य तुम्ह, कुल-पालक दससीस।
अंधउ बधिर न अस कहहिं, नयन कान तव बीस ॥

सिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई। चाहत जासु चरन सेवकाई ॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा। अइसिहुं मति उर बिहरु न तोरा ॥
सुनि कठोर बानी कपि केरी। कहत दसानन नयन तरेरी ॥
खल तव कठिन बचन सब सहऊं। नीति धर्म मैं जानत अहऊं ॥
कह कपि धर्मसीलता तोरी। हमहु सुनी कृत पर त्रिय चोरी ॥

देखी नयन दूत रखवारी। बूडि न मरहु धर्मब्रतधारी॥
कान नाक बिनु भगिनि निहारी। छमा कीन्हि तुम धर्म बिचारी॥
धर्मसीलता तव जग जागी। पावा दरसु हमहुँ बडभागी॥

जनि जल्पसि जड जतु कपि, सठ बिलोकु मम बाहु।
लोकपाल बल बिपुल ससि, ग्रसन हेतु जिमि राहु॥
पुनि नभ सर मम कर निकर, कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयउ मराल इव, संभुसहित कैलास॥

तुम्हरे कटक माझ सुनु अंगद। मो सन भिरिहि कवन जोधा बद॥
तव प्रभु नारि बिरहँ बलहीना। अनुज तासु दुखदुखी मलीना॥
तुम सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ। अनुज हमार भीरु अति सोऊ॥
जामवंत मंत्री अति बूढा। सो कि होइ अब समरारूढा॥
सिल्पिकर्म जानहि नल नीला। है कपि एक महाबलसीला॥
आवा प्रथम नगरु जेहि जारा। सुनत बचन कहि बालिकुमारा॥
सत्य बचन कहु निसिचरनाहा। साचेहु कीस कीन्ह पुरदाहा॥
रावननगर अल्प कपि दहई। सुनि अस बचन सत्य को कहई॥
जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीव केर लघु धावन॥
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

सत्य नगरु कपि जारेउ, बिनु प्रभुआयसु पाइ।
फिरि न गयउ सुग्रीव पहिं, तेहि भय रहा लुकाइ॥
सत्य कहेउ दसकंठ सब, मोहि न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक अस, तो सन लरत जो सोह॥
प्रीति बिरोध समान सन, करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि, भल कि कहइ कोउ ताहि॥

जद्यपि लघुता राम कहं, तोहि बधे बड दोष।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु, छत्रि जाति कर रोष॥
बक्र उक्ति धनु बचन सर, हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रतिउत्तर सडसिन्ह मनहु, काढत भट दससीस॥
हंसि बोलेउ दसमौलि तब, कपि कर बड गुण एक।
जो प्रतिपालइ तासु हित, करइ उपाय अनेक॥

धन्य कीस जो निज प्रभु–काजा। जह तह नाचइ परिहरि लाजा॥
नाचि कूदि करि लोग रिझाई। पति हित करइ धर्म निपुनाई॥
अगद स्वामिभक्त तव जाती। प्रभुगुन कस न कहसि एहि भाती॥
मैं गुनगाहक परम सुजाना। तव कटु रटनि करउ नहि काना॥
कह कपि तव गुनगाहकताई। सत्य पवनसुत मोहि सुनाई॥
बन बिधसि सुत बधि पुर राजा। तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा॥
सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई। दसकंधर मै कीन्ह ढिठाई॥
देखेउ आइ जो कछु कपि भाषा। तुम्हरे लाज न रोष न माषा॥
जौ असि मति पितु खायहु कीसा। कहि अस बचन हसा दससीसा॥
पितहि खाइ खातेउ पुनि तोही। अबही समुझि परा कछु मोही॥
बालि बिमल जस भाजन जानी। हतउ न तोहि अधम अभिमानी॥
कहु रावन रावन जग केते। मै निज स्रवन सुने सुनु जेते॥
बलिहि जितन एकु गयउ पताला। राखा बाधि सिसुन्ह हयसाला॥
खेलहि बालक मारहि जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोडाई॥
एक बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जतु बिसेखा॥
कौतुक लागि भवन लइ आवा। सो पुलस्ति मुनि जाइ छोडावा॥

एक कहत मोहि सकुच अति, रहा बालि की काख।
इन्ह महु रावन तै कवन, सत्य बदहि तजि माख॥

सुनु सठ सोइ रावन बलसीला। हरगिरि जान जासु भुजलीला॥
जान उमापति जासु सुराई। पूजेउं जेहि सिरसुमन चढाई॥
सिर सरोज निज करन्हि उतारी। पूजेउं अमित बार त्रिपुरारी॥
भुजबिक्रम जानहि दिगपाला। सठ अजहू जिन्हके उर साला॥
जानहि दिग्गज उर कठिनाई। जब जब भिरेउं जाइ बरिआई॥
जिन्ह के दसन कराल न फूटे। उर लागत मूलक इव टूटे॥
जासु चलत डोलति इमि धरनी। चढत मत्तगज जिमि लघु तरनी।
सोइ रावन जगबिदित प्रतापी। सुनेहि न स्रवन अलीकप्रलापी॥

तेहि रावन कह लघु कहसि, नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्ब खल, अब जाना तव ग्यान॥

सुनि अगद सकोप कह बानी। बोलु सभारि अधम अभिमानी॥
सहसबाहुभुजगहन अपारा। दहन अनलसम जासु कुठारा॥
जासु परसु सागर खरधारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा॥
तासु गर्ब जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दससीस अभागा॥
राम मनुज कस रे सठ बगा। धन्वी कामु नदी पुनि गगा॥
पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा। अन्न दान अरु रस पीयूखा॥
बैनतेय खग अहि सहसानन। चितामनि पुनि उपल दसानन॥
सुनु मतिमद लोक बैकुठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुठा॥

सेन सहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि, गयउ जो तब सुत मारि॥

सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिधु रघुराई॥
जौ खल भएसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही॥
मूढ बृथा जनि मारसि गाला। राम बइर अस होइहि हाला॥
तव सिरनिकर कपिन्ह के आगे। परिहहि धरनि रामसर लागे॥

ते तव सिर कंदुक सम नाना । खेलिहहि भालु कीस चौगाना ।।
जबहि समर कोपिहि रघुनायक । छुटिहहि अतिकराल बहु सायक ।।
तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा । अस बिचारि भजु राम उदारा ।।
सुनत बचन रावन परजरा । जरत महानल जनु घृत परा ।।

कुंभकरन अस बंधु मम, सुत प्रसिद्ध सक्रारि ।
मोर पराक्रम नहि सुनेहि, जितेउ चराचर झारि ।।

सठ साखामृग जोरि सहाई । बाधा सिंधु इहइ प्रभुताई ।।
नाघहि खग अनेक बारीसा । सूर न होहि ते सुनु सब कीसा ।।
मम भुजसागरबलजलपूरा । जहं बूडे बहु सुर नर सूरा ।।
बीस पयोधि अगाध अपारा । को अस बीर जो पाइहि पारा ।।
दिगपालन्ह मैं नीर भरावा । भूप सुजस खल मोहि सुनावा ।।
जौं पै समर सुभट तव नाथा । पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा ।।
तौ बसीठ पठवत केहि काजा । रिपु सन प्रीति करत नहि लाजा ।।
हरगिरिमथन निरखु मम बाहू । पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू ।।

सूर कवन रावन सरिस, स्वकर काटि जेहि सीस ।
हुते अनल अति हरष बहु, बार साखि गौरीस ।।

जरत बिलोकेउ जबहि कपाला । विधि के लिखे अंक निज भाला ।।
नर के कर आपन बध बाची । हसेउ जानि बिधिगिरा असाची ।।
सोउ मन समुझि त्रास नहि मोरे । लिखा बिरंचि जरठ मति भोरे ।।
आन बीर बल सठ मम आगे । पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागे ।।
कह अंगद सलज्ज जग माही । रावन तोहि समान कोउ नाही ।।
लाजवंत तव सहज सुभाऊ । निज मुख निज गुन कहसि न काऊ ।।
सिर अरु सैल कथा चित रही । ताते बार बीस तैं कही ।।
सो भुजबल राखेहु उर घाली । जीतेहु सहसबाहु बलि बाली ।।

सुनु मतिमंद देहि अब पूरा । काटे सीस कि होइअ सूरा ॥
इंद्रजालि कहुं कहिअ न वीरा । काटइ निज कर सकल सरीरा ॥
जरहिं पतंग मोह बस, भार बहहिं खरबृंद ।
ते नहिं सूर कहावहिं, समुझि देखु मतिमंद ॥
अब जनि बतबढाव खल करही । सुनु मम बचन मान परिहरही ॥
दसमुख मैं न बसीठी आयउं । अस बिचारि रघुबीर पठायउं ॥
बार बार असि कहेउ कृपाला । नहिं गजारि जसु बधे सृगाला ॥
मन महुं समुझि बचन प्रभु केरे । सहेउं कठोर बचन खल तेरे ॥
नाहिं त करि मुखभंजन तोरा । लइ जातेउं सीतहि बरजोरा ॥
जानेउं तव बल अधम सुरारी । सूने हरि आनिहि परनारी ॥
तैं निसिचरपति गर्ब बहूता । मैं रघुपतिसेवक कर दूता ॥
जौं न रामअपमानहिं डरऊं । तोहि देखत अस कौतुक करऊं ॥
तोहि पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउं ।
तव जुबतिन्ह समेत सठ, जनकसुतहि लै जाऊं ॥
जौं अस करउं तदपि न बडाई । मुएहि बधे नहिं कछु मनुसाई ॥
कौल कामबस कृपिन बिमूढा । अति दरिद्र अजसी अति बूढा ॥
सदा रोगबस संतत क्रोधी । बिष्णुबिमुख स्रुतिसंतबिरोधी ॥
तनुपोषक निंदक अघखानी । जीवत सव सम चौदह प्रानी ॥
अस बिचारि खल बधउं न तोही । अब जनि रिस उपजावसि मोही ॥
सुनि सकोप कह निसिचरनाथा । अधर दसन दसि मीजत हाथा ॥
रे कपि अधम मरन अब चहसी । छोटे बदन बात बड़ि कहसी ॥
कटु जल्पसि जड कपि बल जाके । बल प्रताप बुधि तेज न ताके ॥
अगुन अमान बिचारि तेहि, दीन्ह पिता बनवास ।
सो दुख अरु जुबती बिरह, पुनि निसदिन मम त्रास ॥

जिन्ह के बल कर गर्ब तोहि, अइसे मनुज अनेक।
खाहि निसाचर दिवस निसि, मूढ समुझु तजि टेक॥
जब तेहि कीन्ह राम कै निंदा। क्रोधवंत तब भयउ कपिंदा॥
हरिहरनिंदा सुनइ जो काना। होइ पाप गोघातसमाना॥
कटकटान कपिकुंजर भारी। दुहु भुजदंड तमकि महि मारी॥
डोलत धरनि सभासद खसे। चले भाजि भयमारुतग्रसे॥
गिरत सँभारि उठा दसकंधर। भूतल परे मुकुट अति सुंदर॥
कछु तेहि लेइ निज सिरन्हि सँवारे। कछु अंगद प्रभु पास पबारे॥
आवत मुकुट देखि कपि भागे। दिनहीं लूक परन बिधि लागे॥
की रावन करि कोप चलाए। कुलिस चारि आवत अति धाए॥
कह प्रभु हँसि जनि हृदय डेराहू। लूक न असनि केतु नहि राहू॥
ए किरीट दसकंधर केरे। आवत बालितनय के प्रेरे॥
तरकि पवनसुत कर गहे, आनि धरे प्रभु पास।
कौतुक देखहि भालु कपि, दिनकरसरिस प्रकास॥
उहाँ सकोप दसानन, सब सन कहत रिसाइ।
धरहु कपिहि धरि मारहु, सुनि अंगद मुसुकाइ॥
एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु। खाहु भालु कपि जहँ जहँ पावहु॥
मरकटहीन करहु महि जाई। जिअत धरहु तापस दोउ भाई॥
पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा। गाल बजावत तोहि न लाजा॥
मरु गर काटि निलज कुलघाती। बल बिलोकि बिहरति नहि छाती॥
रे त्रियचोर कुमारगगामी। खल मलरासि मंदमति कामी॥
सन्निपात जल्पसि दुर्बादा। भएसि कालबस खल मनुजादा॥
याकर फलु पावहुगे आगे। बानरभालु चपेटन्हि लागे॥
राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहि न तव रसना अभिमानी॥

गिरिहहिं रसना संसय नाही । सिरन्हि समेत समर महि माही ।।

सो०—सो नर क्यों दसकध, बालि बध्यो जेहि एक सर ।

बीसहुँ लोचन अध, धिग तव जन्म कुजाति जड ।।

तव सोनित की प्यास, तृषित रामसायकनिकर ।

तजउँ तोहि तेहि त्रास, कटुजल्पक निसिचर अधम ।।

मै तव दसन तोरिबे लायक । आयसु मोहि न दीन्ह रघुनायक ।।

असि रिसि होति दसउ मुख तोरउ । लका गहि समुद्र मह बोरउ ।।

गूलरिफलसमान तव लका । बसहु मध्य तुम्ह जतु असका ।।

मै बानर फल खात न बारा । आयसु दीन्ह न राम उदारा ।।

जुगुति सुनत रावन मुसुकाई । मूढ़ सिखिहि कह बहुत झुठाई ।।

बालि न कबहु गाल अस मारा । मिलि तपसिन्ह तै भएसि लबारा ।।

साचेहु मै लबार भुजबीहा । जौ न उपारिउ तव दस जीहा ।।

रामप्रताप सुमिरि कपि कोपा । सभा माझ पन करि पद रोपा ।।

जौ मम चरन सकसि सठ टारी । फिरहि रामु सीता मै हारी ।।

सुनहु सुभट सब कह दससीसा । पद गहि धरनि पछारहु कीसा ।।

इद्रजीत आदिक बलवाना । हरषि उठे जह तह भट नाना ।।

झपटहि करि बल विपुल उपाई । पद न टरइ बैठहि सिरु नाई ।।

पुनि उठि झपटहि सुरआराती । टरइ न कीसचरन उहि भाती ।।

पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी । मोहबिटप नहि सकहि उपारी ।।

कोटिन्ह मेघनादसम, सुभट उठे हरपाइ ।

झपटहि टरइ न कपिचरन, पुनि बैठहि सिर नाइ ।।

भूमि न छाँडत कपिचरन, देखत रिपुमद भाग ।

कोटि बिघ्न ते सत कर, मन जिमि नीति न त्याग ।।

कपिबल देखि सकल हिय हारे । उठा आपु कपि के परचारे ।।

गहत चरन कह बालिकुमारा । मम पद गहे न तोर उबारा ॥
गहसि न रामचरन सठ जाई । सुनत फिरा मन अति सकुचाई ॥
भयउ तेजहत श्री सब गई । मध्यदिवस जिमि ससि सोहई ॥
सिंहासन बैठेउ सिर नाई । मानहुं सपति सकल गंवाई ॥
जगदातमा प्रानपति रामा । तासु बिमुख किमि लह बिस्रामा ॥
उमा राम कर भृकुटि बिलासा । होइ बिस्व पुनि पावइ नासा ॥
तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई । तासु दूतपन कहु किमि टरई ॥
पुनि कपि कही नीति बिधि नाना । मान न ताहि कालु निअराना ॥
रिपुमद मथि प्रभु सुजसु सुनायउ । यह कहि चलेउ बालिनृपजायउ ॥
हतउ न खेत खेलाइ खेलाई । तोहि अबहि का करउं बडाई ॥
प्रथमहि तासु तनय कपि मारा । सो सुनि रावन भयउ दुखारा ॥
जातुधान अगदपन देखी । भयब्याकुल सब भए बिसेखी ॥

रिपुबल धरषि हरषि कपि, बालितनय बलपुज ।
पुलक सरीर नयन जल, गहे राम पद कंज ॥

दोहावली

राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, तुलसी सुर तरु तोर ॥
परम पुरुख पर--धाम बर, जापर अपर न आन ।
तुलसी सो समुझत सुनत, राम सोइ निरबान ॥
सकल सुखद गुन जासु सो, राम कामना-हीन ।
सकल--काम--प्रद सरब--हित, तुलसी कहहि प्रबीन ॥
बृद्धि--विनय--गति--हीन सिसु, सुपथ कुपथ गत--ज्ञान ।

जननि जनक तेहि किमि तजहि, तुलसी सरिस अजान ॥
अहि–रसना थन–धेनु रस, गनपति–द्विज गुरुवार ।
माधव सित सिय–जनम–तिथि, सतसैया अवतार ॥
बरु मराल मानस तजै, चद सीत रवि–घाम ।
मोह मदादिक कै तजै, तुलसी तजै न राम ॥
आसन दृढ आहार दृढ, सुमति ज्ञान दृढ़ होय ।
तुलसी विना उपासना, बिन दुलहे की जोय ॥
राम–नाम–तरु–मूल रस, आठ पात फल एक ।
जुग लसत सुभ चारि जग, बरनत निगम अनेक ॥
राम–काम–तरु परिहरत, सेवत कलि–तरु ठूठ ।
स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झूठ ॥
तुलसी केवल काम–तरु, राम-चरित आराम ।
निसिचर कलि-कर निहत तरु, मोहि कहत बिधि बाम ॥
जहा राम तह काम नहि, जहा काम नहि राम ।
तुलसी कबहू होत नहि, रवि रजनी इक ठाम ॥
राम बिटप तरु बिषद बर, महिमा अगम अपार ।
जा कह जह लगि पहुच है, ता कह तह लगि डार ॥
स्वामी होनो सहज है, दुरलभ होनो दास ।
गाडर लाए ऊन को, लाग्यो चरन कपास ॥
सब सगी बाधक भए, साधक भए न कोय ।
तुलसी राम कृपालु ते, भली होय सो होय ॥
स्वामी सीतानाथ जी, तुम लगि मेरी दौर ।
तुलसी काग जहाज कह, सूझत और न ठौर ॥
लगन मुहूरत जोग बल, तुलसी गनत न काहि ।

राम भए जेहि दाहिने, सबै दाहिने ताहि ।।
साधन सासति सब सहत, सुमन सुखद फल लाहु ।
तुलसी चातक जलद की, रीझ बूझ बुध काहु ।।
डोलत विपुल बिहग बन, पियत पोखरिन बारि ।
सुजस धवल चातक नवल, तोर भुवन दस--चारि ।।
ऊची जाति पपीहरा, पियत न नीचो नीर ।
कै जाचै घनश्याम सों, कै दुख सहै शरीर ।।
ह्वै अधीन जाचै नही, सीस नाइ नहि लेइ ।
ऐसे मानी मागनिहि, को बारिद बिनु देइ ।।
तुलसी चातक देत सिख, सुतहि बार ही बार ।
तात न तरपन कीजियो, बिना वारिधर-धार ।।
खेलत बालक ब्याल संग, मेलत पावक हाथ ।
तुलसी सिसु पितु मातु इव, राखत सिय-रघुनाथ ।।
घर कीन्हे घर होत है, घर छोड़े घर जाय ।
तुलसी घर बन बीच ही, रहहु प्रेम-पुर छाय ।।
पग अतर मग अगम जल, जल--निधि जल सचार ।
तुलसी करिया करम बस, बूड़त तरत न बार ।।
तुलसी हरि--अपमान तें, होत अकाज समाज ।
राज करत रज मिल गए, सदल सकल कुरु-राज ।।
तुलसी अपने राम कहं, भजन करहु निहसंक ।
आदि अत निरबाहिबो, जैसे नव को अक ।।
राम कामना--हीन पुनि, सकल--काम दातार ।
याही ते परमातमा, अव्यय अमल उदार ।।
एक सृष्टि यों जाहि बिधि, प्रगट तीन कर भेद ।

सात्त्विक राजसि तामसहि, जानत है बुध बेद ॥
होनहार सब आप ते, बृथा सोच करि जौन ।
कज सृग तुलसी मृगन, कहो उमेठत कौन ॥
सुख चाहत सुव मे वसत, है सुख-रूप बिसाल ।
सतत जा बिधि मान-सर, कबहुं न तजत मराल ॥
सूर जथा रन जीति कै, पलटि आव चलि गेह ।
तिमि गति जानहु राम की, तुलसी सत सनेह ॥
नाना बिधि की कलपना, नाना बिधि को सोग ।
सूछम अउ असथूल तन, कबहु तजत नहि रोग ॥
तुलसी संत सुअम्ब-तरु, फूलि फरहि पर-हेतु ।
ये इत ते पाहन हनै, वे उत ते फल देतु ॥
सुख दुख दोनों एक सम, सतन के मन माहि ।
मेरु उदधि गत मुकुर जिमि, भार भीजबो नाहि ॥
जो करता है करम को, सो भोगत नहि आन ।
बोअनहार लुनिहै सोई, देनी लहइ निदान ॥
रज अप अनल अनिल नभ, जड जानत सब कोइ ।
यह चैतन्य सदा समुझु, कारजरत दुख होइ ॥
होत हरख का पाय धन, बिपति तजे का धाम ।
दुखदा कुमति कुनारितर, अति सुखदायक राम ॥
तन सुखाइ पंजर करै, धरै रैन दिन ध्यान ।
तुलसी मिटै न बासना, बिना बिचारे ज्ञान ॥
यह तन अनुपम अयन बर, उपमारहित सुचैन ।
समुझरहित रटि पचि मरै, करत सकल अध्यैन ॥
कारन चार बिचार बर, बरन न अपर न आन ।

सदा होउ गुन दोष मय, लखि न परत बिनु ज्ञान ।।
यह करतब सब ताहि को, जेहि ते वह परमान ।
तुलसी मरम न पाइहै, बिनु सदगुरुबरदान ।।
स्रवनात्मक ध्वन्यात्मक, बरनात्मक बिधि तीन ।
त्रिविध सबद अनुभव अगम, तुलसी कहहि प्रबीन ।।
बिना बीज तरु एक भव, साखा दल फल फूल ।
को बरनै अतिसय अमित, सब विधि अकल अतूल ।।
सुक पिक मुनि गन बुध बिबुध, फल आश्रित अतिदीन ।
तुलसी ते सब बिधि रहित, सो तरु तासु अधीन ।।
मृग जलघट भरि बिविध बिधि, सीचत नभ-तरु मूल ।
तुलसी मन हरखित रहत, बिनहि लहे फल फूल ।।
गगन-वाटिका सीचही, भरि भरि सिधु तरंग ।
तुलसी मानहिं मोद मन, ऐसे अधम अभंग ।।
गो-धन गज-धन बाजि-धन, और रतन धन खान ।
जब आवत सतोख-धन, सब धन धूरि समान ।।
करतबही सो करम है, कह तुलसी परमान ।
करनहार करता सोई, भोगे करम निदान ।।
काम क्रोध मद लोभ की, जब लगि मन मे खान ।
का पडित का मूरखौ, दोऊ एक समान ।।
उत कुल की करनी तजी, इत न भजे भगवान ।
तुलसी अधवर के भए, ज्यो बधूर के पान ।।
तीरथपति सतसंग सम, भगति देवसरि जान ।
बिधि उलटी गति राम की, तरनि-सुता अनुमान ।।
बर मेधा मानहु गिरा, धीर धरम न्यग्रोध ।

मिलन त्रिबेनी मलहरनि, तुलसी तजहु विरोध ॥
वरतमान आधीन दोऊ, भावी भूत विचार ।
तुलसी सशय मन न कर, जो है सो निरुबार ॥
करम मिटाए मिटत नही, तुलसी किए बिचार ।
करतव ही को फेर है, या विधि सार असार ॥
जौन तार ते अधम गति, उधर तौ न गति जात ।
तुलसी मकरी ततु इव, कबहु न करम नसात ॥
जातरूप जिमि अनल मिलि, ललित होत तन पाय ।
सत सीतकर सीय निमि, लसहि राम-पद पाय ॥
रवि रजनीस धरा तथा, यह असथिर असथूल ।
सूछम गुन को जीव कर, तुलसी सो तन-मूल ॥
आवत अप रवि ते जथा, जात तथा रवि माहि ।
जह ते प्रगट तही दुरत, तुलसी जानत ताहि ॥
प्रगट भए देखत सकल, दुरत लखत कोइ कोइ ।
तुलसी यह अतिसय अगम, बिनु गुरु सुगम न होइ ॥
सेवक पद सुखकर सदा, दुखद सेव्य पद जान ।
जथा बिभीखन रावनहि, तुलसी समुझु प्रमान ॥
सीत–उष्ण–कर–रूप सम, निसि दिन कर करतार ।
तुलसी तिन कह एक नहि, निरखहु करि निरधार ॥
गध सीत अगि उष्णता, सबहि बिदित जग जान ।
महि बन अनल सो अनिल गत, बिन देखे परमान ॥
सदा सगुन सीता-रमन, सुख-सागर बल-धाम ।
जन तुलसी परखे परम, पाए पद विस्राम ॥
मनमय घट जानत जगत, बिन कुलाल नहि होइ ।

तिमि तुलसी करता-रहित, करम करै कहु कोइ ॥
मृद कारन करता-सहित, कारज किए अनेक ।
जौ करता जाने नहीं, तौ कहु कवन विवेक ॥
स्वरनकार करता कनक, कारन प्रगट लखाय ।
अलकार कारज सुखद, गुन सोभा सरसाय ॥
सब देखत मृदु भाजनहि, कोउ कोउ लखत कुलाल ।
जाके मन के रूप बहु, भाजन बिलघु बिसाल ॥
एकै रूप कुलाल को, माटी एक अनूप ।
भाजन अमित बिसाल लघु, तौ करता मन रूप ॥
कारज-रत करता समुझि, सुख दुख भोगत सोइ ।
तुलसी स्री गुरुदेव बिन, दुखप्रद दूरि न होइ ॥
कारन सबद सरूप है, संग्या गुनभव जान ।
करता सुरगुरु ते सुखद, तुलसी अपर न आन ॥
बिनु काटे तरु-बर जथा, मिटै कौन बिधि छाहि ।
त्यों तुलसी उपदेस बिनु, निहससय कोउ नाहिं ॥
ब्राह्मन बर बिद्या बिनय, सुरुति बिबेक निधान ।
पथ-रति अनय-अतीत मति, सहित दया स्रुति मान ॥
बिनय छत्र सिर जासु के, प्रतिपद पर-उपकार ।
तुलसी सो छत्री सही, रहित सकल व्यभिचार ॥
कोटिन साधन के किए, अंतर मल नहिं जाइ ।
तुलसी जौ लग सकल गुन, सहित न करम नसाइ ॥
जोइ प्रान सो देह है, प्रान देह नहि दोय ।
तुलसी जो लखि पाइ है, सो निरदय नहि होय ॥
तुलसी तैं झूठो भयो, करि झूठे संग प्रीति ।

है सांचो है सांच जब, गहै राम की रीति ॥
कहत काल किल सकल बुध, ताकर यह व्यवहार ।
उतपति थिति लय होत है, सकल तासु अनुहार ॥
सालक पालक सम बिखम, भरम मगन गति ज्ञान ।
अट घट लट नट नादि जहं, तुलसी रहित न जान ॥
करत चातुरी मोह-बस, लखत न निज हित-हान ।
मुक मरकट इव गहत हठ, तुलसी परम सुजान ॥
प्रेम बैर अरु पुण्य अघ, जस अपजस जय हान ।
बात बीज इन सबन को, तुलसी कहहिं सुजान ॥
बंचक-विधि-रत नय-रहित, विधि हिंसा अति लीन ।
तुलसी जग मे बिदित बर, नरक निसेनी तीन ॥
तिनहि पढे तिनही सुने, तिनहिं सुमति परगास ।
जिन आसा पीछे करी, गहि अवलब निरास ॥
तब लगि जोगी जगत-गुरु, जब लगि रहै निरास ।
जब आसा मन मे जगी, जग-गुरु जोगी दास ॥
असुअन पथिक निरास ते, तट भुइ सजल सरूप ।
तुलसी किन बचे नही, इन मरुथल के कूप ॥
माली-भानु-कृसानु-सम, नीति-निपुन महिपाल ।
प्रजा भाग बस होहिगे, कवहि कबहि कलि-काल ॥
होहि बड़े लघु समय सह, तौ लघु सकहि न काढ़ि ।
चद दूबरो कूबरो, तऊ नखत तें बाढि ॥
कूप खनहि मदिर जरत, लावहि धारि बबूर ।
बोए लव चह समय बिनु, कुमति-सिरोमनि कूर ॥
अपजस जोग कि जानकी, मनि चोरी की कान्ह ।

तुलसी लोग रिझाइबो, करसि कातिबो नान्ह ॥
मागि मधुकरी खात जे, सोवत पाय पसारि ।
पाप प्रतिष्ठा बढि परी, ताते बाढी रारि ॥
कै जुझिबो कै बूझिबो, दान कि काय कलेस ।
चारि चार परलोक पथ, जथा जोग उपदेस ॥
बिनु प्रपच बरु भीख भलि, नहि फल किए कलेस ।
बावन बलि सो लीन्ह छलि, दीन्ह सबहि उपदेस ॥
खल उपकार विकार फल, तुलसी जान जहान ।
मेढक मर्कट बनिक बक, कथा सत्य उपखान ॥
जो मूरख उपदेस के, होते जोग जहान ।
दुरजोधन कह बोधि किन, आए स्याम सुजान ॥
हित पर बढत विरोध जब, अनहित पर अनुराग ।
राम-विमुख विधि बाम गति, सगुन अघाय अभाग ॥
रीझ आपनी बूझ पर, खीझ विचार-बिहीन ।
ते उपदेस न मानही, मोह-महोदधि-मीन ॥
समुझि सुनीति कुनीति-रत, जागत ही रह सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥
गोड गवार नृपाल कलि, जनम महा-महिपाल ।
साम न दान न भेद कलि, केवल दड कराल ॥
काल तोपची तुपक महि, दारू अनय कराल ।
पाप पलीता कठिन गुरु, गोला पुहुमी-पाल ॥
सत्रु सयाने सलिल इव, राख सीस रिपु नाव ।
बूडत लखि डगमगत अति, चपरि चहू दिसि धाव ॥

मध्यम युग
सगुणभक्ति धारा
कृष्णभक्ति शाखा

विद्यापति

नीतिविषयक सूक्तियाँ

अपना काज कओन नहिं बध, केन करए नित पति अनुबध ।
अपन अपन हित सब केओ चाह, से सुपुरुष जे पर निरबाह ।।
साजनि ताक जिवन थिक सार, जे मन दए कर पर उपकार ।
आरति अरतल आबए पास, अछइते बथु नहि करिअ उदास ।।
से पुनु अनतहु गेले पाब, अपना मन पए रह पछताब ।
भनहि विद्यापति दैन न भाख, बड़ अनुरोध बडे पए राख ।।
थिर नहि जउवन थिर नहि देह, थिर नहि रहए बालमु नेह ।
थिर जनु जानह ई ससार, एक पए थिर रह पर उपकार ।।
एहन अवस्था ई व्यवहार, पर पीडाए जिवन थिक भार ।
भनहि विद्यापति सखि कह सार, से जीवन जे पर उपकार ।।
हठ न करिअ कान्ह कर मोहि पार, सब तह बड थिक पर उपकार ।
अधिपक अनुचित किछुनि गोहारि, बड़ाक कहिनी बड दुर जाय ।।
साहसे साहिए असाधे, तिल एक कठिन पहिल अपराधे ।
एते मने गुनि नाहिं तरास, मधु ने आवे मधुकर पास ।।
पाइअ ठाम वइसले नहि नीधि, जे कर साहस ता हो सीधि ।
प्रथम वयस लेस न पुरब आस, न पुरे अलप धने दरिद पियास ।
माधव मुकुलित मालति फूल, ताहे नहिं भुखल भमर अनुकूल ।
अनुचित काज भल नहि परिणाम, साहस न करिय सशय ठाम।।
भनइ विद्यापति नागर कान, मातल करि नहि अकुश मान ।
गेल दीन पुनि पलटि न आव, अवसर बहला रह पछताव ।।

कएल उचित भेल अनुचित, मने मने पछतावे ।
आबे कि करब सिर पए धूनब, गेला दिन नहिं आबे ॥
चलचल सुदरि सुभ कर काज, ततमत करइत नहि हो काज ।
गुरुजन परिजन डर कर दूर, बिनु साहस सिधि आस न पूर ॥
बिनु जपले सिधि केओ नहि पाव, बिनु गेले घर निधि नहि आव ।
दुती दपती दुअओ अबोध, काज आलस दुहु परम विरोध ॥
तोहे जलधर सहजहि जलराज, हमे चातकि जल बिदुक काज ।
जल दए जलद जीव मोर राख, अवसर देले साहस हो लाख ॥
तनु देअ चाद राहुकर पान, कबहु कला नहि होअ मलान ।
वैभव गेले रहए विवेक, तइसन पुरुष लाख थिक एक ॥
जदि तोहे बरिषब समय उपेखि, की फल पाओब दिवसदिप लेखि।
भनहि विद्यापति असमय बानी, मुरुछल जीवए चुरुएक पानी ॥
मधुर वचन है सव तह सार, विद्यापति भन कवि कठहार ।
तैखन सिनेह जे थिर उत्पात, के नहि बस हो मधुर अलाप ॥
जे छल से नहि रहले भाव, बोलिलि बोल पलटि नहि आब ।
वचनक दोषे प्रेम टुटि गेल, वचनक कौसअले की नहि होए ॥
भन विद्यापति निअ अवसाद, वचनक कौसलए जितिअ बाद ।
पुछिओन पुछलककेओ बैसलाह जहा, निरधन आदर के कर कहा॥
धनिकक आदर सब तह होए, निरधन बापुरे पुछइ न कोए ।
वैभव गेले भलाहु मद भास, अपन पराभव पर उपहास ॥
केओ सुखे सुतैये केओ दुखे जाग, अपनअपन थिक भिनभिन भाग।
भनइ विद्यापति चाहथिजे विधि करथि से से लीला ॥
अपन करम अपने पए भुजिए जञो जन्मातर होई ।
काहुक विपद काहुक सपद नाना गति ससार लो ॥

राधा का दिव्य क्रंदन

ए सखि हमर दुखक नहि ओर ।
ई भर बादर माह भादर शून्य मंदिर मोर ॥
झपि घन गरजंति सतति भूवन भरि बरिखंतिया ।
कंत पाहुन काम दारुण सघने खरशर हंतिया ॥
कुलिश कत शत पात मोदित मयुर नाचत मातिया ।
मत्त दादुरि डाके डाहुकि फाटि जातय छातिया ॥
तिमिर दिग भरि घोर यामिनि अथिर बिजुरिक पातिया ।
विद्यापति कह कैसे गमाओब हरि बिना दिन रातिया ॥

राधा की आकुलता

सजनी के कह आओब मधाई ।
विरह पयोधि पार पुन पायोब, मझु मन नहि पतियाई ॥
एखन-तखन करि दिवस गमाओल, दिवस दिवस करि मासा ।
मास मास करि बरस गमाओल, छोड लूँ जीवनक आशा ॥
वरस वरस कए समय गमाओल, खोय लूँ ए तनु आसे ।

युग अवसान में भी राधा का प्रणय

सखि हे कि कहब किछ नहि फूरे ।
सपन कि परतेक कहय न पारिय किय नियर किय दूरे ॥
तड़ित लता तले जलद समारल आतरे सुरसरिधारा ।
तरल तिमिर शशि सूर गरासल चौदिश खसि पडु तारा ॥
अम्बर खसल धराधर उलटल धरणी डगमग डोले ।
खरतर बेग समीरण सचरू चचरि-गण करु रोले ॥
प्रणय पयोधि जले तन झापल ई नहि युग अवसाने ।

के विपरीत कथा पतियाएत कवि विद्यापति भाने ॥

राधा का आत्मिक अनुभव

सखि कि पुछसि अनुभव मोय ?
से हो पिरित अनुराग बखान इत तिल तिल नूतन होइ ॥
जनम अवधि हम रूप निहारब नयन न तिरपित भेल ।
से हो मधुर बोल स्रवनहिं सूनल स्रुति-पथ परस न भेल ॥
कत मधु जामिनि रभस से गयाओल न बुझल कइ सन केल ।
लाख लाख जुग हिअ हिअ राखल तइओ हिय जुडन न गेल ॥
कत विदगध जन रस अनुमोदई अनुभव काहु न पेख ।
विद्यापति कह प्राण जुडाइत लाख वे न मिलल एक ॥

सूरदास

बाल-लीला

घुटुरुन चलत श्याम मनिआगन, मात पिता दोऊ देखत री।
कबहुक किलकिलात मुख हेरत, कबहु जननी मुख पेखत री॥
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर बिदु भ्रुव ऊपर री।
यह शोभा नयननि देखे जो, नहि उपमा तिहु भू पर री॥
कबहुक दौरि घुटरुवनि लटकत, गिरत उठत फिरि धावत री।
इत ते नद बुलाय लेत है, उत ते जननि बुलावति री॥
दपति होड करत आपस मे, स्याम खिलौना कीन्हो री।
सूरदास प्रभु ब्रह्म सनातन, सुतहित करि दोउ लीन्हो री॥

गहे अगुरिया तात की नद चलन सिखावत।
अरबराइ गिरि परत है कर टेकि उठावत॥
बार बार बकि स्याम सो कछु बोल बकावत।
दुहुधा द्वै दतुली भई अति मुख छवि पावत॥
कबहुं कान्ह कर छाडि नद पग द्वैक रिगावत।
कबहु धरणि पर बैठिकै मन मे कछु गावत॥
कबहु उलटि चलै धाम को घुटुरन करि धावत।
'सूर' स्याम मुख देखि महार मन हर्ष बढावत॥

कहाँ लगि बरनो सुदरताइ ?

खेवत कुवर कनक आगन मे, नैन निरखि छवि छाइ।
कुलहि लसत सिर स्याम सुभग अति, बहु बिधि रग बनाइ॥
मानहु नव घन ऊपर राजत, मघवा धनुष चढाइ।
अति सुदेश मृदु हरत चिकुर, मनमोहन मुख बगराइ॥

मानहु मंजुल प्रगट कंज पर, अलि अवली फिरि आइ ।
नील श्वेत पर पीत लाल मणि, लटकत भाल हराइ ।।
शनि गुरु असुर देवगुरु मिलि, मानौ भौम सहित समुदाइ ।
दूधदत द्युति कहि न जाय अति, अद्भुत एक उपमाइ ।।
किलकत हसत दुरत प्रगटत, मानों घन मे विज्जु छटाइ ।
खडित वचन देत पूरन मुख, अलप अलप जलपाइ ।।
घुटुरुन चलत रेणु तनु मडित, सूरदास बलि जाइ ।।

गहे अंगुरिया सुवन की, नद चलन सिखावत ।।
अरबराय गिरि परत है, कर टेकि उठावत ।
बार बार बकि स्याम सौं, कछु बोल बुलावत ।।
दुहु था द्वै दंतुली भई, अति सुख छवि पावत ।
कबहुं कान्ह कर छाडि नद, पग द्वैक रिगावत ।।
कबहुक उलटि चले धाम को, घुटुरुन करि धावत ।
सूर स्याम सुखदेखि महरि मन हरष बढावत ।।

मैया कब बढिहै मेरि चोटी ।
किती बेर मोहि दूध पिवत भई, यह अजहूं है छोटी ।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों, ह्वैहै लांबी मोटी ।।
काढत गुहत न्हवावत जै है, नागिनि सी भुइ लोटी ।
काचो दूध पिवावत मोहन, देती माखन रोटी ।।
सूर मैया भाहि रिस रिझ्यो, हरि हलधर की जोटी ।।

कजरी को पय पियहु लाल तेरी चोटी बढै ।
सब लरिकन मे सुन सुदर सुत तो श्री अधिक चढै ।।

जैसे देखि और व्रज बालक त्यौ बल वैस बढ़ै ।
कस केशि बक बैरिन के उर अनुदिन अनल उठै ।।
यह सुनिकै हरि पीवन लागे त्यो त्यो लियो लटै ।
अचवन पै तातो जब लाग्यो रोवत जीभ उठै ।।
पुनि पीवत ही कच टकटोवे झूठे जननि रढै ।
सूर निरखि मुख हसत यशोदा सो सुख उर न कढै ।।

कहन लगे मोहन मैया मैया ।
पिता नंद सो बाबा बाबा अरु हलधर सो भैया ।।
ऊचे चढि चढि कहत यशोदा लै लै नाम कन्हैया ।
दूरि कहू जिन जाहु लला रे ! मारेगी काहु की गैया ।।
गोपी ग्वाल करत कौतूहल घर घर लेत बधैया ।
मनिखभन प्रतिबिम्ब विलोकत पुनि नवनीत कुवर हरि पइया ।।
नद यशोदा जी के उर ते इह छबि अनत न जइया ।
सूरदास प्रभु तुमरे दरस को चरणन की बलि गइया ।।

वार वार यशुमति सुत बोधति, आउ चद ! तोहि लाल बुलावै ।
मधु मेवा पकवान मिठाई आपु न खैहै तोहि खवावै ।।
हाथहि पर तोहि लीने खेलै नहि धरणी बैठावै ।
जल-भाजन कर लै जु उठावति याही मे तू तनु धरि आवै ।।
जलपुट आनि धरणि पर राख्यो गहि आन्यो वह चद दिखावै ।
सूरदास प्रभु हसि मुसकाने वार बार दोऊ कर नावै ।।

प्रात समय उठि, सोवत हरि को वदन उघार्यो नद ।
हरि न सकत देखन को आतुर नैन निशा के द्वद ।।

स्वच्छ सेज मे ते मुख निकसत गयो तिमिर मिटि मंद ।
मानौ मथि सुर सिंधु फेन फटि दरस दिखाई चद ॥
धायो चतुर चकोर 'सूर' मुनि सब सखि सखा सुछंद ।
रहि न सुध शरीर धीरमति पिवत किरन मकरद ॥

सखा कहत है स्याम खिसाने ॥
आपुहि आप ललकि भये ढाढे अब तुम कहा रिसाने ॥
बीचहि बोल उठे हलधर तब इनके माय न बाप ।
हार जीत कछु नेक न जानत लरिकन लावत पाप ॥
आपुन हारि सखा सौ झगरत यह कहि दिये पठाइ ।
सूर स्याम उठि चले रोइकै जननी पूछत धाइ ॥

खेलन अब मेरी जात बलैया ।
जबहि मोहि देखत लरिकन सग तबहि खिझत बल भैया ॥
मोसों कहत तात वसुदेव को देवकि तेरी मैया ।
ऐसे हि कहि स बमोहि खिझावत तब उठि चलौ खिसैया ॥
पाछे नंद सुनत है ठाढे हसत हसत उर लैया ।
सूर नद बलरामहि झिरक्यो सुनि मन हरस कन्हैया ॥

जेवत कान्ह नद इक ठौरे ।
कछुक खात लपटात दुहू कर बालक है अति भोरे ॥
बड़ो कौर मेलत मुख भीतर मिरच दशन टकटोरे ।
तीक्षण लगी नयन भरि आये रोवत बाहर दौरे ॥
फूकत वदन रोहिणी ठाढ़ी लिये लगाइ अकोरे ।
सूर स्याम को मधुर कौर दै कीन्हे तात निहोरे ॥

तेरो लाल मेरो माखन खायो ।
दुपहर दिवस जनि घर सूनी, ढूढि ढढोरि आप ही आयो ।।
खोल किवार सून मदिर मे दूध दही सब सखन खवायो ।
सीके काढि खाट चढि मोहन कछु खायो कछु लै ढरकायो ।।
दिन प्रति हानि होत गोरस की यह ढोटा कौने रंग लायो ।
सूरदास कहती ब्रजनारी पूत अनोखो जायो ।।

कन्हैया ! तू नहि मोहि डरात ।
षटरस धरे छाडि कत पर-घर चोरी करि करि खात ।।
बकति बकति तोसों पचि हारी नेकहु लाज न आई ।
ब्रज-परगन-सरदार महर तू ताकी करत नन्हाई ।।
पूत सपूत भयौ कुल मेरो अब मैं जानी बात ।
सूर स्याम अब लौ तोति बगस्यो तेरी जानी घात ।।

मैया ! मै नाही दधि खायो ।
ख्याल परे यह सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायो ।।
देखि तुही सीके पर भाजन ऊचे करि लटकायो ।
तुही निरख नान्हे कर अपने मै कैसे करि पायो ।।
मुख दधि पोछि कहत नँदनदन दोना पीठि दुरायो ।
डारि साठि मुसकाइ यशोदा सुतही कंठ लगायो ।।
बाल विनोद मोह मन मोह्यो भक्ति प्रताप दिखायो ।
सूरदास प्रभु यशुमति के सुख शिव विरचि बौरायो ।।

खेलनि दूरि जात कत कान्हा ।
आज सुन्यो मैं हाऊ आओ, तुम नहि जानत नान्हा ।।

यक लरिका अबही भजि आयो, रोवत देख्यो नाहि ।
कान तोरि वह लेत सबनि को, लरिका जानत नाहि ॥
चलो न वेगि सवेरे जैए, भाजि आपने धाम ।
सूर श्याम यह बात सुनत ही, बोलि लिए बलराम ॥

दूरि खेलन जनि जाउ ललन, मेरे हाऊ आए है ।
तव हँसि बोलि कान्ह रि मैया, इनको किन्हे पठाए है ॥
यमुना के तट धेनु चरावत, जहा सघन वन झाऊ ।
पैठि पताल व्याल गहि नाथ्यो, तहा न देखे हाऊ ॥
अब डरपत सुनि सुनि ये बाते, कहत हसत बलदाऊ ।
सप्त रसातल शेषासन रहि, तब की सुरत भुलाऊ ॥
चार बेद ले गयो शंखासुर, जल मे रहेउ लुकाऊ ।
मीन रूप धरिके जब मारेउ, तबहि रहे कहे हाऊ ॥
मथि समुद्र सुर असुरन के हित, मदर जलहि खस ऊ ।
कमठरूप धरि धरनि पीठ पर, सुख पायो सुरराऊ ॥
जब हरणाक्ष युद्ध अभिलाषे, मन मे अति गरवाऊ ।
धरि बाराह रूप रिपु मारेउ, ले क्षिति दत अगाऊ ॥
बिकटरूप अवतार धरेउ जब, सो प्रहलाद बताउ ।
धरि नृसिह जब असुर बिदारेउ, तहा न देख्यो हाऊ ॥
बामन रूप धरेउ बलि छलि कर, तीन परग बसुधाऊ ।
श्रम जल ब्रह्म कमंडल राख्यो, दरशि चरण परसाऊ ॥
मारेउ मुनि बिनही अपराधहि, कामधेनु लै आऊ ।
इकइस वार करि निक्षत्रि छिति, तहा न देख्यो हाऊ ॥
रामरूप रावण जब मारेउ, दश सिर बीस भुजाऊ ।

लक जराय क्षार जब कीनो, तहा रहे कह हाऊ ॥
माटी के मिस बदन बिकास्यो, जब जननी डरपाऊ ।
मुख भीतर भय लोक देखाए, तबहुं प्रतीत न आऊ ॥
नृपति भीम सों युद्ध परस्पर, तहं बस भाव बताऊ ।
तुरत चीर दुइ टूक कियो धरि, ऐसे त्रिभुवनराऊ ॥
भक्त हेत अवतार धरेउ सब, असुरनि भारि बहाऊ ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति कहि गाऊ ॥

गोवर्धन-लीला

प्रथमहि देउ गिरिहि बहाय ।
बज्रघातनि करउ चूरन, देउ धरनि विलाय ।
मेरी इन महिमा नहि जानी, प्रगट देउ दिखाय ॥
जल बरषि ब्रज धोइ डारौ, लोग देउ बहाय ।
खात खेलत रहे नीके, करी उपाधि बनाय ॥
बरष दिन मोहि देत पूजा, दई सोउ मिटाय।
कोप करि सुरराज लीन्हे, प्रबल मेघ बुलाय ।
रिस सहित सुरपति कहत पुनि, हरौ ब्रज पर धाय ॥
सुनहु सूर कहत है मघवा, बेगि परौ भहराय ॥

बरषि बरषि सब हारे बादर ।
ब्रज के लोगनि धोय बहावहु, इंद्र हमहि करि आदर ॥
कहा जाय केहै प्रभु आगे, करिहै बहुत निरादर ।
हम बर्षत बर्षत जल सोखत, ब्रजवासी सब सादर ॥
पुनि रिसि करत प्रलय जल बर्षत, कहत भए सब कादर ।
सूर गाय गोसुत सब राख्यो, गिरिबर धर ब्रजनागर ॥

मथुरा-गमन-लीला

यशुदा बार बार यह भाखै ।
है कोउ ब्रज मे हितू हमारो, चलत गोपालै राखै ॥
कहा काज मेरे छगन मगन को, नृप मधुपुरी बुलायौ ।
मुफलकसुत मेरे प्राणहरण को, कालरूप ह्वै आयौ ॥
बरु यह गोधन कस लेह सब, मोहि बदी ले मेलै ।
इतनो मागति कमलनयन मेरो, अखियन आगे खेलै ॥
को कर कमल मथानी गहिहै, को दधि माखन खैहै ।
बहुरेउ इंद्र बर्षि है ब्रज पर, कौन मेरु कर लैहै ॥
बासर रैन बिलोके जीऊं, सग लागि हिलराऊ ।
हरि बिछुरत असु रहै कर्मबश, तौ केहि कंठ लगाऊ ॥
टेरि टेरि धर परति यशोदा, अधर वदन बिलखानी ।
सूर सु दशा कहां लगि बरनों, दुखित नद की रानी ॥

तब न बिचारी री यह बात ।
चलत न फेट गह्यो मोहन की, अब कह री पछितात ॥
निरखि निरखि मुख रही मौन ह्वै, चकित भई बिलखात ।
जबै रथ भयो दृष्टि अगोचर, लोचन अति अकुलात ॥
सबै अजान भई वहि औसर, अति ढिग गहि सुत मात ।
सूरदास स्वामी के बिछुरे, कौडी भर न बिकात ॥

मोहन इतनो मोहि चित धरिये ।
जननी दुखित जानिकै कबहू मथुरा—गमन न करिये ॥
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहि लेन है आयो ।
तिरछे भये करम कृत पहले, बिधि यह ठाठ बनायो ॥

बार बार जननी कहि मोसो माखन मांगत जौन ।
सूर तिनहिं लेवैको आये करिहौ सूनो भौन ॥

कन्हैया मेरी छोह बिसारी ।
क्यो बलराम कहत तू नाही मै तेरी महतारी ॥
तब हलधर जननी परबोधत मिथ्या यह संसारी ।
ज्यो सावन की बेल प्रफुलिकै फूलति है दिन चारी ॥
हम बालक तुम को कहा सिखवै कहूं तुमहि ते जात ।
सूर हृदय धीरज अब धारौ काहे को बिलखात ॥

नीके रहिए यशोदा मैया ।
आवेगे दिन चार पाच मे, हम हलधर दोउ भैया ॥
बंशी बेनु बिषान देखियो, और अबेर सबेरो ।
लै जिनि जाय चोराय राधिका, कछू खिलौना मेरो ॥
जा दिन ते हम तुम ते बिछुरे, कोउ न कहै कन्हैया ।
प्रात समय उठि कियो न कलेऊ, साझि पियो नहि धैया ॥
कहा कहौ कछु कहत न आवे, यशुमति जेतो दुख पायो ।
अब सुनियत बसुदेव देवकी, कहत हमारो जायो ॥
कहियो जाय नद बाबा सो, मंद निठुर मन कीन्हो ।
सूर श्याम पहुचाय मधुपुरी, बहुरि सदेश न लीन्हो ॥

मेरे कान्ह कमलदललोचन ।
अब की बेर बहुरि ब्रज आवहु, कहा लगे जिय सोचन ॥
यही लालसा बहुत मेरे जिय, बैठे देखत रहिहौ ।
गाय चरावन जान कुवर को, कबहू भूलि न कहिहो ॥

करत अठान न बरज्यो कबहू, अरु माखन की चोरी ।
अपने जियत नयन भर देखौ, हीरा की सी जोरी ॥
एक बेर मिलि जाउ इहा लौ, अनत कहा के ऊतर ।
चारिहु दिवस आइ सुख दीजै, सूर पहुनई सूतर ॥

अब नंद गइया लेहु सम्हार ।
हम तो तुम्हारे आन परगट, गौ चराइ दिन चार ॥
दूध दधि सब चोर खायो, तुम जो कियो प्रतिपार ।
सूर के प्रभु चले ब्रज तजि, कपट कागज फार ॥

पाछेहि चितवत मेरे लोचन, आगे परत न पाइ ।
मन हरि लियो माधुरी मूरति, कहा करों ब्रज जाइ ॥
पवन न भई पताका अवर, भई न रथ को अग ।
रेणु न भई चरण लपटाती, जाति वहां लौ सग ॥
केहि बिधि कैसे सजनि करि, कब जु मिलै गोपाल ।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी, मुरछि परी ब्रजबाल ॥

ऊधो हुतो जननि सों मिलियो, अरु कुशलात कहोगे ।
बाबा नंदहि पालागन कहि, पुनि चरण गहोगे ॥
जा दिन ते मधुबन हम आए, सुधि नाही तुम लीन्ही ।
दै दै सौह करोगे हित करि, कहा निठुरई कीन्ही ॥
यह कहियो बलराम श्याम अब, आवेगे दोउ भाई ।
सूर कर्म की रेख मिटे नहि, यहै कह्यौ यदुराई ॥

गोपालहि बारे ही की टेव ।
जानति नही कहां ते सीखे, चोरी की छल छेव ॥

तब कछु दूध दह्यो लै खाते, करि रहती हौ कानि ।
कैसे सही परत है मो पै, मनमानिक की हानि ॥

ऊधौ नदनंदन सो कहियो, राजनीति समुझाइ ।
राजहु भए तजत नहि लोभहिं, गुप्त नही यदुराइ ॥
बुद्धि विवेक अरु वचनचातुरी, पहिले लई चुराई ।
सूरदास प्रभु के गुण ऐसे, का सो कहिये जाई ॥

फिरि फिरि कहा सिखावत मौन ।
वचन दुसह लागत अलि तेरे, ज्यौ पजरे पर लौन ॥
सीगी मुद्रा भस्म अधारी, अरु आराधन मौन ।
हम अबला अहीर शठ मधुकर, धरि जानहि कहि कौन ॥
यह मत जाइ तिनहि तुम सिखवहु, जिनही यह मत सोहत ।
सूर आज लो सुनी न देखी, पोत पूतरी पोहत ॥

ऊधौ हमहि न योग सिखैये ।
जेहि उपदेस मिले हरि हम को, सो ब्रत नेम बतैये ॥
मुक्ति रहो घर बैठि आपने, निर्गुन सुन दुख पैये ।
जिहि सिर केश कुसुम भरि गूदे, तेहि कैसे भसम चढैये ।
जानि जानि सब मगन भए है, आपुन आपु लखैये ।
सूरदास प्रभु सुनहु न वा विधि, वहुरि कि या ब्रज ऐये ॥

भीष्म-प्रतिज्ञा ।

आज जो हरिहि न शस्त्र गहाऊ ।
लाजौ हौ गंगा जननी को शातनु-सुत न कहाऊं ॥

स्यदन खडि महारथ खडौ कपिध्वज सहित डुलाऊं ।
इती न करौ सपथ मोहि हरि की क्षत्रियगतिहि न पाऊं ।।
पाडवदल सन्मुख ह्वै धावौ सरिता रुधिर बहाऊं ।
सूरदास रणभूमि विजय बिन, जियत न पीठि दिखाऊं ।।

सुरसरि-सुवन रण-भूमि आये ।
बाण-वर्षा लगे करन अति क्रोध ह्वै, पार्थ औसान तब सब भुलाये ।।
कह्यो करि कोप प्रभु अब प्रतिज्ञा तजो, नही तो मरत हम रण हराये।
सूर प्रभु भक्तवत्सल बिरद आनि उर, ताहि या विधि वचन कह सुनाये।।

हम भक्तन के भक्त हमारे ।
सुन अर्जुन ! परतिज्ञा मेरी यह व्रत टरत न टारे ।।
भक्तै काज लाज जिय धरिकै पाइ पयादै धाऊं ।
जह जहं भीर परै भक्तन को, तहं तहं जाइ छुड़ाऊ ।।
जो मम भक्त सो बैर करत है, सो निज बैरी मेरो ।
देखु बिचारि भक्त हित कारण हाकत हौ रथ तेरो ।।
जीते जीत भक्त अपने की हारे हारि विचारौ ।
सूरदास सुनि भक्तविरोधी, चक्र सुदर्शन जारौ ।।

गोविद कोपि चक्र कर लीनो ।
छाड़ि आपनो प्रण यादवपति जन को भायो कीनो ।।
रथ ते उतरि अवनि आतुर ह्वै चले चरण अति धाये।
मनु शंकित भूभार उतारन चलत भये अकुलाये ।।
कछुक अंग ते उड़त पीतपट उन्नत बाहु विशाल ।
स्वेद स्रोत तनु शोभा कन छवि घन वर्षत जनु लाल ।।

सूर सु भुजा समेत सुदर्शन देखि विरचि भ्रम्यो ।
मानो आनि सृष्टि करिवे को अवुज नाभ जम्यो ॥

मेरी प्रतिज्ञा रहे कि जाऊ ।
इत पारथ कोप्यो है हम पै उत भीषम भटराऊ ॥
रथ ते उतरि चक्र धरि कर प्रभु सुभटहि संमुख आये ।
ज्यो कंदर ते निकसि सिह झुकि गजयूथनि पै धाये ॥
आय निकट श्रीनाथ विचारी, परी तिलक पर दीठि ।
शीतल भई चक्र की ज्वाला, हरि हंस दीनी पीठि ॥
जय जय जत चितामणि स्वामी, शातनुसुत यों भाखै ।
तुम बिन ऐसो कौन दूसरो जो मेरो प्रण राखै ॥
साधु साधु सुरसरीसुवन तुम, मै प्रण लागि डराऊ ।
'सूरदास' भक्त दोनो दिशि, का पर चक्र चलाऊ ॥

रावण-कुल-वध

आजु अति कोपे है रन राम ।
ब्रह्मादिक आरूढ विमानन देखै सुर सग्राम ।
धर तन दिव्य कवच सजि करि अरु कर धारचो शारग ।
शुचि करि सकल बान सूधे करि, कटि तट कस्यो निपग ॥
सुरपुर ते आयो रथ सजिकै, रघुपति भयो सवार ।
पापी भूमि कहा अब ह्वैहै सुमिरत नाम मुरार ॥
छोभित सिधु शेष शिर कपत पवन गती भइ पग ।
इद्र हस्यो, हर हसि बिलखान्यो जानि वचन भयो भंग ॥
धर अबर दिशि विदिशि बढै अति, सायक किरन समान ।
मानो महा प्रलय के कारन उदित उभयषट भान ॥

टूटत ध्वजा पताक छत्र रथ, चाप चक्र शिरत्रान।
जूझत सुभट जरत ज्यो दो द्रुम, विनु शाखा बिनु पान ॥
रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता-श्वास समीर।
रावणकुल अरु कुभकर्ण बन, सकल सुभट रणधीर ॥
भये भस्म कछु बार न लागी, ज्यो ज्वाला पट चीर।
सूरदास प्रभु अपने बाहुबल कियो निमिष मे कीर ॥

सीता की अग्निपरीक्षा

लक्ष्मण रचो हुताशन भाई !
यह सुनि हनूमान दुख पाये मो प लख्यो न जाई ॥
आसन एक हुताशन बैठी, मानो कुंदन की अरुणाई।
जैसे रवि इक पल, घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई ॥
लै उछग उत्सग हुताशन, निष्कलक रघुराई।
लै बिमान बैठारि जानकी, कोटि बदन छबि छाई ॥
दशरथ कही देवहू भाखी, ब्योमबिमान निकाई।
सिया राम लै चले अवध को, सूरदास बलि जाई ॥

विनय-पत्रिका

काहू के कुल नाहि विचारत।
अविगत की गति कहौ कौन सो पतित सवन को तारत ॥
कौन जाति को पाति बिदुर की जिनको प्रभु ब्यौहारत।
भोजन करत तुष्टि पर उनके राजमान पद टारत ॥
ओछे जन्म कर्म के ओछे ओछे ही बोलावत।
अनत सहाय सूर के प्रभु की भक्त हेतु पुनि आवत ॥

गोविद प्रीति सबन की मानत ।
जो जेहि भाय करै जन सेवा अतर की गति जानत ।।
बेर चाखि कटु तजि लै मीठे भिलडी दीने जाय ।
जूठन की कछु शक न कीन्ही भक्ष किये सदभाय ।।
सतत भक्त मीत हितकारी श्याम विदुर के आए ।
प्रेमहि विकल बिदुर अर्पित प्रभु कदली छिलरा खाए ।।
कौरवकाज चले ऋषि आपुन शाक के पत्र अघाए ।
सूरदास करुणानिधान प्रभु युग युग भक्त बढाए ।।

अब हौ नाच्यौ बहुत गोपाल ।
काम क्रोध को पहिनि चोलना कठ विषय की माल ।।
महामोह के नूपुर बाजत निदा शब्द रसाल ।
भरम भरचौ मन भयो पखावज डरप असगत चाल ।।
तृष्णा नाद करति घट भीतर नाना बिधि दै ताल ।
माया कौ कटि फैटा बाध्यो लोभ तिलक दियो भाल ।।
कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नहि काल ।
'सूरदास' की सबै अविद्या दूरि करहु नदलाल ।।

कृपा अब कीजिए बलि जाऊ ।
नाहिन मेरे अनत कहूं अब पद अबुज बिन ठाउ ।।
हौ अशुचि अकृती अपराधी सन्मुख होत लजाउ ।
तुम कृपालु करुणानिधि केशव अधम उधारन नाउ ।।
काके द्वार जाय हौ ठाढो देखत काहि सुहाउं ।
अशरणशरण बिरद व्यापक तुव हौ कुटिल काम सुभाउ ।।

कलुषी परम मलीन दुष्ट हौ सेत्थो तौ न बिकाउ ।
सूर पतितपावन पदअबुज पारस क्यो परसाऊ ॥

नाथ जू अव के मोहि उबारो ।
पतितन मे विख्यात पतित हौ पावन नाम तुम्हारो ॥
बडे पतित नाहिन पासग हू अजामील को हौ जु विचारो ।
भाजै नरक नाउ मेरो मुनि भमन दियो हठि तारो ॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति अब न करो जिय गारो ।
सूरदास साचो तुव माने जो होय मम निस्तारो ॥

छाडि मन हरिबिमुखन को सग ।
कहा भयौ पय पान कराये विष नहि तजत भुवग ॥
जाके सग कुबुधि उपजत है परत भजन मे भग ।
काम क्रोध मद लोभ मोह मे निश दिन रहत उमग ॥
कागहि कहा कपूर खवाये स्वान न्हवाए गग ।
खर को कहा अरगजालेपन मरकट भूषण अग ॥
पाहनपतित वाण नहि भेदत रीतो करत निषग ।
सूरदास खल काली कामरि चढत न दूजौ रग ॥

सबै दिन एकै से नहि जात ।
सुमिरन भगति लेहु करि हरि की जौ लगि तनु कुसलात ।
कबहुक कमला चपल पाय कै टेढेइ टेढे जात ।
कबहुक मग मग धूरि टटोरत भोजन को बिलखात ॥
बालापन खेलत ही खोयो भक्ति करत अरसात ।
सूरदास स्वामी के सेवत पैहो परम पद तात ॥

भजहु न मेरो श्याम मुरारी।
सब सतन के जीवन है हरि नयनकमल प्यारो हितकारी।
या संसारसमुद्र मोहजल तृष्णातरग उठति है भारी।
नाव न पाई सुमिरन हरि को भजन रहित बूडत संसारी॥
दीनदयाल अधार सबन को परग सुजान अखिल अधिकारी।
'सूरदास' कह तुम पाचे जन भा को होत भिखारी॥

मो सो पतित न और गुसाई।
अवगुण मो पै कबहु न छूटे वहुत पचेउ अब ताई॥
जन्म जन्म ही रहेउ भ्रमित ह्वै कपि गुजा की नाई।
ता परसत गयो शीत न कबहू लै लै निकट तपाई॥
लुब्ध्यौ जाय कनक कामिनि ज्यो शिशु देखत उलझाई।
जिह्वा स्वाद मीन लो डारेउ सुझियो नही फदाई॥
मुदिन भयो सपने मे जैसे पाए निधिहि पराई।
जागि परे कछु हाथ न लाग्यो ऐसे सर प्रभुताई॥

प्रीतम जानि लेहु मन माही।
अपने सुख को सव जग बाध्यो कोउ काहू को नाही॥
सुख मे आय सबै मिलि बैठत रहत चहू दिशि घेरे।
बिपति परी तब सब सग छाडै कोउ न आवै नेरे॥
हर की नारि बहुत हित जासौ रहत सदा सग लागी।
जब इन हस तजी यह काया प्रेत प्रेत कहि भागी॥
या बिधि को व्योपार बन्यो जग ता सो नेह लगायो।
सूरदास भगवतभजन बिन नाहक जन्म गवायो॥

अब मैं जानी देह बुढानी।
शीश पांव धरि कह्यौ न मानै तन की दशा सिरानी ।।
आन कहत आनै कहि आवत नयन नाक बहै पानी।
मिटि गई चमक दमक अंग अग की गई जु मनि हिरानी ।।
नाहि रही कछु सुधि तन मन की ह्वैहै बात विरानी।
सूरदास प्रभु अबहि चेत ले भज ले शारगपानी ।।

नरोत्तमदास

सुदामा-चरित्र

लोचन कमल, दुखमोचन, तिलक भाल,
श्रवणन कुडल, मुकुट धरे माथ है।
ओढे पीत वसन, गले मे बैजयंती माला,
शख चक्र गदा और पद्म लिये हाथ है।।
कहत नरोत्तम सदीपन गुरु के पास,
तुम ही कहत हम पढे एक साथ है।
द्वारिका गये ते हरि दारिद हरेगे पिय!
द्वारिका के नाथ वे अनाथन के नाथ है।।

शिक्षक है सिगरे जग को तिय! ताको कहा अब देति है सिच्छा।
जे तप कै परलोक सुधारत, सपति की तिनके नहि इच्छा।।
मेरे हिये हरि को पदपकज, बार हजार लै देख परिच्छा।
औरन को धन चाहिये बावरि! ब्राह्मण को धन केवल भिच्छा।।

दानी बडे तिहु लोकन मे जग जीवत नाम सदा जिनको लै।
दीनन की सुधि लेत भली विधि, सिद्ध करो पिय! मेरो मतो लै।।
दीनदयालु के द्वार न जात सो, और के द्वार पै दीन ह्वै बोलै।
श्रीयदुनाथ से जाके हितू सो, तिहू पन क्यो कन मागत डोलै?

छत्रिन के प्रण युद्ध ज्यों बादल, साजि चढे गज बाजिन ही।
वैश्य को बानिज और कृषीपन, शूद्र के सेवन नीति यही।।
बिप्रन के प्रण है जु यहा, सुख सपति सो कछु काज नही।
कै पढ़िबो कै तपोधन है, कन मागत ब्राह्मणै लाज नही।।

कोदो सवां जुरतौ भरि पेट, न चाहति हौ दधि दूध मिठौती।
सीत व्यतीत भयो सिसिआतहि, हौ हठती पै तुम्हे न हठौती॥
जो जनती न हितू हरि से तो मै काहे को द्वारिका ठेलि पठौती॥
या घर मे कवहू न गयो पिय! टूटौ तवा अरु फूटि कठोती॥

छाड़ि सबै झक तोहि लगी वक, आठहु याम यही ठक ठानी।
जातहि देहै लदाय लढा भरि, लैहौ लदाय यही जिय जानी॥
पैये अटारी अटा कह ते, जिनको विधि दीनी है टूटि सी छानी।
जो पै दरिद्र ललाट लिख्यो, तो पै काहु के मेटे न जात अजानी!

फाटे पट टूटि छानि, खायो भीख मागि आनि,
विना गये विमुख रहत देव पित्रई।
वे है दीनवधु, दुखी देख के दयालु ह्वैहै,
देहै कछु भलो, सो हौ जानत अगत्रई॥

द्वारिका लौ जात पिय! केतौ अलसात तुम,
काहे को लजात, भई कौन सी विचित्रई।
जो पै सब जन्म ये दरिद्र ही सताये तो पै,
कौन काज आय है कृपानिधि की मित्रई?

तै तो कही नीकी, सुन बात हित ही की यह,
रीति मित्रई की नित प्रीति सरसाइये।
चित्त के मिले ते वित्त चाहिये परसपर,
मित्र के जो जेइये तो आपहू जिमाइये॥
वे है महाराज जोरि बैठत समाज भूप,
तहा यह रूप जाय कहा सकुचाइये।

दुख-सुख सव दिन काटे ही बनैगो, भूल,
बिपति परे पै द्वार मित्र के न जाइये ॥

विप्र के भगत हरि जगत-विदित बधु,
लेत सब ही की सुधि ऐसे महादानि है ।
पढे एक चटसार, कही तुम कैयो बार,
लोचन अपार वे तुम्हे न पहिचानि है ?
एक दीनवंधु कृपासिधु फेर गुरुबधु,
तुम सम कौन दीन जाको जिय जानिहै ?
नाम लेत चौगुनी गये ते द्वार सौगुनी,
बिलोकत सहसगुनी प्रीति प्रभु मानिहै ॥

द्वारिका जाहु जू, द्वारिका जू, आठहु याम यही झक तेरे ।
जौ न कहौ करिये तौ बडो दुख, पैहौ कहां अपनी गति हेरे ॥
द्वार खडे प्रभु के छड़िया तह, भूपति जान न पावत नेरे ।
पान सुपारी तौ देखु बिचारि के, भेट को चारि न चावर मेरे ॥

यह सुनि के तब ब्राह्मणी, गई परोसिन पास ।
सेर पाव चावर लिये, आई सहित हुलास ॥

सिद्ध करी गणपति सुमिर, बाधि दुपटिया खूट ।
मागत खात चले तहा, मारग बाली बूट ॥

द्वारिका-वर्णन

मगलसगीत धाम-धाम मे पुनीत जहा,
नाचे वारवधू देवनारि-अनुहारिका ।

घंटन के नाद कहूं बाजन के छाय रहे,
कहू कीर केकी पढे सुक और सारिका ॥
रतनन ठाठ हाट-बाटन मे देखियत,
घूमे गज अश्व रथ पत्ति नर नारिका।
दशो दिशि भीर, द्विज धरत न धीर मन,
उठत है पीर लखि बलवीर-द्वारिका ॥

दृष्टि चकचौधि गई देखत सुबर्नमयी,
एक ते सरस एक द्वारिका के भौन हैं।
पूछे विन कोऊ काहू से न करे बात जहा,
देवता से वैठे सब साधि साधि मौन हैं ॥
देखत सुदामा धाय पुरजन गहे पाय,
कृपा करि कहो, कहां कीने विप्र ! गौन है ?
धीरज अधीर के, हरण पर पीर के,
बताओ, बलबीर के महल यहा कौन हैं ?

द्वारपाल चलि तहं गयो, जहा कृष्ण यदुराय।
हाथ जोरि ठाढो भयो, बोल्यो शीश नवाय ॥

शीश पगा न झगा तन पै, प्रभु जाने को आहि बसे किहि ग्रामा।
धोती फटी सी, लटी दुपटी अरु पाय उपानह को नहि सामा ॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल देखि, रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा।
दीनदयालु को पूछत नाम, बतावत आपनो नाम सुदामा ॥

लोचन पूरि रहे जल सो प्रभु दूर ते देखत ही दुख मेट्यो।
सोच भयो सुरनायक के, कलपद्रुम के हिय माझ खखेट्यो।

कांपि कुबेर हिये सर से पग, जात सुमेरहु रक समेट्यो ।
राज भयो तब ही जब ही, भरि अग रमापति सो द्विज भेट्यो ।।

ऐसे बिहाल बिवाइन सो भये, कटकजाल लगे पुनि जोये ।
हाय महादुख पायो सखा ! तुम आये इतै न किते दिन खोये ।।
देखि सुदामा की दीन दसा, करुणा करिकै करुणानिधि रोये ।
पानी परात को हाथ छुओ नहि, नैनन के जल सो पग धोये ।।

तदुल त्रिय दीने हुते, आगे धरियो जाय ।
देखि राजसंपति विभव, दै नहि सकत लजाय ।।
अतरयामी आप हरि, जानि भक्ति की रीति ।
सुहृद सुदामा विप्र सो, प्रकट जनाई प्रीति ।।

कछु भाभी हमको दियो, सो तुम काहे न देत ?
चापि गाठरी काख मे, रहे कहो किहि हेत ?

आगे चना गुरुमात दिये, ते लिये तुम चाबि हमे नहि दीने ।
श्याम कही मुसकाय सुदामा सो, चोरि कि बानि मे हौ जु प्रवीने ।।
गाठरि काख मे चांपि रहे तुम, खोलत नाहि सुधारस भीने ।
पाछिलि बान अजौ न तजी तुम, वैसे ही भाभी के तदुल कीने ।।

खोलत सकुचत गाठरी, चितवन हरि की ओर ।
जीरण पट फट छुटि परे, बिखरि गये तिहि ठौर ।।

तदुल मागत मोहन, विप्र सकोच ते देत नही अभिलाखे ।
है नहि पास कछू कहिके, तेहि गोपि घनी विधि काख मे राखे ।।
सो लखि दीनदयाल उतै यह चोरि करी तुम यो हसि भाखे ।
खोलिके पोट अछोट मुठी गिरिधारन चाउर चाव सो चाखे ।।

कांपि उठी कमला मन सोचति मो सों कहा हरि को मन औको।
ऋद्धि कपी सब सिद्धि कपी नवनिद्धि कपी ब्रह्मनायक धौको ॥
सोच भयो सुरनायक के जब दूसरि बार लयो भरि झौको।
मेरु डरे बकसे जनि मोहि कुबेर चबावत चाउर चौंको ॥

हूल हियरा मे, कान कानन परी है टेर,
भेटत सुदामै स्याम बनै न अघातही।
कहै नरोतम रिद्धि सिद्धिन मे सोर भयो,
ठाढ़ी थरहरै और सोचे कमला तही ॥
नाकलोक, नागलोग, ओक ओक थोक थोक,
ठाढ़े थरहरै, मुख से कहै न बात ही।
हालो पर्यो लोकन मे, लालो पर्यो चक्रिन मे,
चालो पर्यो लोगन मे चाउर चबात ही ॥

भौन भरो पकवान मिठाइन, लोग कहै निधि है सुखमा के।
सांझ सबेरे पिता अभिलाषत, दाखन प्राखत सिंधु रमा के ॥
ब्राह्मण एक कोऊ दुखिया, सेर पावक चाउर लायो समा के।
प्रीति की रीति कहा कहिये, तिहि बैठे चबावत कत रमा के ॥

मूठी तिसरी भरत ही, रुक्मनि पकरी बाह।
ऐसी तुम्हे कहा भई, संपति की अनचाह ॥

कही रुक्मनी कान मे, यह धौ कौन मिलाप।
करत सुदामहि आप सो, होत सुदामा आप ॥

हाथ गह्यो प्रभु को कमला, कहे नाथ! कहा तुमने चित धारी ?
तदुल खाय मुठी दुइ, दीन कियो तुमने दुइ लोक भिखारी!

खाय मुठी तिसरी अब नाथ ! कहा निज बास की आस बिसारी ?
रकहि आप समान कियो, तुम चाहत आपहि होन भिखारी ?

सब जीत लीनी सोभा सरद के चंद की।
दूसरे परोस्यो भात सान्यो है सुरभि घृत,
फूले फूले फुलके प्रफुल्लित दुति मद की॥
पापर मुगौरी बरा बेसन अनेक भांति,
देवता विलोकि सोभा भोजन अनंद की।
या बिधि सुदामा जी को अच्छ के जिमाय फिर,
पाछे कै पछावरी परोसी आनि कद की॥

कह्यो बिस्वकरमा को हरि तुम जाय करि,
नगर सुदामा जी को रचौ बेगि अब ही।
रतनजटित धाम सुबरनमयी सब,
कोट औ बजार बाग फूलन के तब ही॥

कल्पवृक्ष द्वार, गज रथ असवार प्यादे,
कीजिए अपार दास दासी देव छबही।
इद्र औ कुबेर आदि देवबधु अपसरा,
गधरब गुणी जहा ठाढ रहे सब ही॥

नित नित सब द्वारावती, दिखलाई प्रभु आप।
भरे बाग अनुराग सब, जहां न व्यापहि ताप॥

परम कृपा दिन दिन करी, कृपानाथ यदुराय।
मित्र भावना विस्तरी, दूनो आदर भाय॥

देनो हुतो सो दे चुके, विप्र न जानी बात।
चलती वेर गोपाल जी, कछू न दीनो हाथ॥

गोपुर लो पहुंचाय के, फिरे सकल दरवार।
मित्र बियोगी कृष्ण के, नेत्र चली जलधार॥

हौ कव इत आवत हुतो, वाही पठयो पेलि।
अव कहिहौ घर जाय के, धन धन धरहु सकेलि॥
वालापन के मित्र है, कहा देउ मैं साप।
जैसो हरि हमको दियो, तैसो पइयो आप॥

और कहा कहिये जहा, कचन ही के धाम।
निपट कठिन हरि को हियो, मोको दियो न दाम॥
इमि सोचत सोचत झकत, आये निज पुर तीर।
दृष्टि परी इक बार ही, हय गयद की भीर॥

दाहिने बेद पढे चतुरानन,
सामुहे ध्यान महेश धर्‌यो है।
बाये दोऊ कर-जोर सुसेवक,
देवन साथ सुरेश खर्‌यो है॥
एतन बीच अनेक लिये धन,
पायन आय कुबेर पर्‌यो है।
देखि बिभो अपनो सपनो,
बपुरो वह ब्राह्मण चौकि पर्‌यो है॥

वेई सुरतरु प्रफुलित फुलवारिन मे,
वेई सुरवर हस बोलन हिलन को।

वेई हेम हीरन दिशान दहलीजन मे,
वेई गजराज हय गरज-पिलन कों ॥
द्वार द्वार छडी लिये द्वारपौरिया जो खड़े ।
बोलत मरोर-बरजोर त्यो झिलन को ॥
द्वारिका ते चल्यो भूलि द्वारिका ही आयौ नाथ ।
मागिया न मो पै चारि चाउर गिलन को ॥

जगर-मगर जोति छाय रही चहू ओर,
अगर-बगर हाथी घोरन को रोर है ।
चौपर को बनो है बजार पुनि सोनन के,
महल दुकान की कतार चहुं ओर है ॥
भीरभार धकापेल चहूं दिसि देखियत,
द्वारिका ते दूनो यहां प्यादन को जोर है ।
रहिबे को ठाम है न, काहू सो पिछान मेरी,
बिन जाने बसे कोऊ हाड़ मेरे तोर है ॥

फूटी एक थारी, बिन टोटनी की झारी हुती,
बांस की पिटारी और कथारी हुती टाट की ।
बेटे बिन छुरी और कमडलु सौ टूक वहौ,
फटे हुते पावौ पाटी टूटी एक खाट की ॥
पथरौटा, काठ को कठौता कहू दीसै नाहि,
पीतर को लोटो हो, कटोरो हो न बाट की ।
कामरी फटी सी हुती, डोडन की माला ताक,
गोमती की माटी की न सुद्ध कहूं माटकी ॥

मध्ययुग
निर्गुणभक्ति धारा
ज्ञानाश्रयी शाखा

गुरु नानक

मन की मन ही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही ।।
दारा मीत पूत रथ सपति, धन जन पूर्न मही ।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही ।।
फिरत फिरत बहुते युग हार्यौ, मानस देह लही ।
नानक कहत मिलनकी बिरिया, सुमिरत कहा नही ।।

माई मैं मन की मान न त्यागो ।
माया के मद जनम सिरायो, राम-भजन नहि लाग्यो ।।
जम को दण्ड पर्यो सिर ऊपर, तब सोवत ते जाग्यो ।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो ।।
यह चिता उपजी घट मे जब, गुरु चरनन अनुराग्यो ।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु-जस मे पाग्यो ।।

साधो मन का मान तियागो ।
काम क्रोध सगत दुर्जन की, ता तें अह निसि भागो ।।
सुख-दुख दोनो सम कर जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष शोक ते रहै अतीता, तिन जग तत्त्व पिछाना ।।
अस्तुति निदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरवाना ।
जन नानक यह खेल कठिन है, किन हूं गुरुमुख जाना ।।

जा मे भजन राम को नाही ।
तेहि नर जनम अकारथ खोयो, यह राखो मन माही ।।

तीरथ करै बर्त पुनि राखै, नहि मनुवा बस जाको ।
निफल धर्म ताही तुम मानो, साच कहत मै याको ।
जैसे पाहन जल मे राख्यौ, भेदे नहि तेहि पानी ।।
तैसे ही तुम ताहि पिछानो, भगति हीन जो प्रानी ।
कलि मे मुक्ति नाम ते पावत, गुरु यह भेद बतावै ।।
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुन गावै ।

साधुमहिमा

जो नर दुख मे दुख नहि मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहि जाके, कचन माटी जानै ।।
नहि निदा नहि अस्तुति जाके, लोभ मोह अभिमाना ।
हर्ष सोक ते रहै नियारो, नाहि मान अपमाना ।।
आसा मनसा सकल त्यागि कै, जग ते रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहि घट ब्रह्म निवासा ।।
गुरु किरपा जेहि नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोबिद सो, ज्यो पानी सग पानी ।।

या जग मीत न देख्यो कोई ।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुख मे सग न होई ।।
दारा मीत पूत सबधी, सगरे धन सो लागे ।
जब ही निरधन देख्यो नर को, सग छाड़ि सब भागे ।।
कहा कहूं या मन बौरे को, इन सो नेह लगाया ।
दीनानाथ सकल भयभजन, जस ताको बिसराया ।।
स्वान पूछ ज्यो भयो न सूधो, बहुत जतन मै कीन्हो ।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ।।

हरि जू राख लेहु पत मेरो।
काल को त्रास भयो उर अतर, सरन गह्यो अब तेरो।
भय करने को बिसरत नाही, तेहि चिता तन जारो॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठ धाया।
घट ही भीतर बसै निरजन, ताको मर्म न पाया॥

काहे रे बन खोजन जाई।
सर्व निवासी सदा अलेपा, तो ही संग समाई॥
पुष्प मध्य ज्यो बास बसत है, मुकुट माहि जस छाई।
तैसे ही हरि बसै निरतर, घट ही खोजो माई॥
बाहिर भीतर एकै जानों, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटे न भ्रम की काई॥

अब मेरे प्रीतम प्रानपियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे॥
सुमिरौ चरन तिहारे प्रीतम, हिरदे तिहारी आसा।
सत जना पै करौ बेनती, जन दरसन को प्यासा॥
बिछुरत-मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नायक, अब मेरे किरपा कीजै॥

भाई मै केहि बिधि लखो गुसाई।
महा मोह अज्ञान तिमिर मे, मन रहियो उरझाई॥
सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहि इस्थिर मति पाई।
विषयासक्त रह्यौ निसि बासर, नहि छूटी अधमाई॥
साधु सग कबहू नहि कीन्हा, नहि कीरति प्रभु गाई।
जन नानक मे नाही कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई॥

अब हम चली ठाकुर पहि हार ।
जब हम सरन प्रभू की आई, राखे प्रभु भावे मार ।।
लोगन की चतुराई उपमा, ते बैसंदर जार ।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार ।।
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार ।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार ।।

इस दम दा मै नू की बे भरोसा । आया आया न आया न आया ।
सोच बिचार करै मत मन में, जिसने ढूढा उसने पाया ।
या संसार रैन दा सुपना, कहिं दीखा कहिं नाहिं दिखाया ।
नानक भक्तन के पद परसे, निस दिन रामचरन चित लाया ।।

साधो यह तन मिथ्या जानो ।
या भीतर जो राम बसत है, साचो ताहि पिछानो ।।
यह जग है संपति सुपने की, देख कहा ऐडानो ।
सग तिहारे कछू न चालै, ताहिं कहा लपटानो ।।
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो ।
जन नानक सब ही मे पूरन, एक पुरुष भगवानो ।।

———

दादू

चेतावनी

दुख दरिया ससार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ।।
काल न सूझै कध पर मन चितवै बहु आस।
दादू जिव जाणौ नही, कठिन काल की पास ।।
जह जहं दादू पग धरै, तहा काल का फध।
सिर ऊपर साधे खड़ा, अजहु न चेतै अध ।।
यहु बनु हरिया देखि करि, फूल्यौ फिरै गवार।
दादू यहु मन मिरगला, काल अहेडी लार ।।
कहता सुनता देखता, लेता देता प्राण।
दादू सो कतहू गया, माटी धरी मसाण ।।
पथ दुहेला दूरि घर, सग न साथी कोय।
उस मारग हम जाहिगे, दादू क्यो सुख सोइ ।।
काल झाल मे जग जलै, भाजि न निकसै कोइ।
दादू सरणै साच कै, अभय अमर पद होइ ।।
काल हमारा कर गहे, दिन दिन खैचत जाइ।
अजहुं जीव जागै नही, सोवत गई विहाइ ।।
धरती करते एक डग, दरिया करते फाल।
हाकौ परबत फाडते, सो भी खाये काल ।।
तिल तिल का अपराधी तेरा, रती रती का चोर।
पल पल का मै गुनही तेरा, बक्सौ औगुण मोर ।।

गुनहगार अपराधी तेरा, भाजि कहां हम जाहि ।
दादू देख्या सोधि सब, तुम बिन कहिं सु समाहिं ॥
दिन दिन नौतम भगति दे, दिन दिन नौतम नाव ।
दिन दिन नौतम नेह दे, मैं बलिहारी जाव ॥
पलक माहि प्रगटै सही, जे जन करे पुकार ।
दीन दुखी तब देखि करि, अति आतुर तिहिं बार ॥
अंतरजामी एक तू, आतम के आधार ।
जे तुम छाड़हु हाथ मों, तौ कौन सवाहण हार ॥
साहिब दर दादू खड़ा, निसि दिन करै पुकार ।
मीरां मेरा मिहर करि, साहिब दे दीदार ॥
मेरा बैरी मैं मुवा, मुझे न मारै कोउ ।
मैं ही मुझ को मारता, मैं मरजीवा होउ ॥
मेरे आगे मैं खड़ा, पाछै रह्या लुकाइ ।
दादू परगट पीव है, जे यहु आपा जाइ ॥
मेरे हिरदे हरि बसै, दूजा नाही और ।
कहौ कहां धौ राखिये, नही आन कौ ठौर ॥
ना हम छाड़ै ना गहैं, ऐसा ज्ञान विचार ।
मद्धि भाव सेवै सदा, दादू मुकति दुबार ॥
जा कारन जग ढूढिया, सो तो घट ही माहि ।
मै तैं पड़दा भरम का, ता थै जानत नाहि ॥
साधू जन ससार मे, पारस परगट पाइ ।
दादू केते ऊधरे, जेते परसे आइ ॥
साधू जन संसार मे, सीतल चदन वास ॥
दादू केते ऊधरे, जे आये उन पास ॥

जहं अरड अरु आक थे, तह चदन उग्या माहि ।
दादू चदन करि लिया, आक कहे को नाहि ॥
साध मिलै तब ऊपजै, हिरदे हरि का हेत ।
दादू संगति साधु की, कृपा करै तब देन ॥
पर उपगारी संत सब, आये यहि कलि माहि ।
पिवै पिलावै राम रस, आप सुबारथ नाहि ॥
साध सबद सुख बरखि है, सीतल होइ सरीर ।
दादू अतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ॥
मन हंसा मोती चुणै, ककर दिया डारि ।
सतगुरु कहि समझाइया, पाया भेद बिचारि ॥
स्वागी सब ससार है, साधू कोई एक ।
हीरा दूरि दिसतरा, ककर और अनेक ॥
प्रेय भगति जब ऊपजै, निहचल सहज समाध ।
दादू पीवे प्रेम रस, सतगुरु के परसाद ॥
दादू राता राम का, पीवै प्रेम अघाइ ।
मतवाला दीदार का, मागै मुक्ति बलाइ ॥
ज्यू अमली के चित अमल, सूरे के सग्राम ।
निरधन के चित धन बसे, यों दादू के राम ॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बांचै कोइ ।
वेद पुरान पुस्तक पढै, प्रेम बिना क्या होइ ॥
जो मन बेधे प्रीति सौ, ते जन सदा सजीव ।
उलटि सामने आप मे, अतर नाही पीव ॥
देह रहे ससार में, जीव राम के पास ।
दादू कुछ व्यापै नही, काल झाल दुख त्रास ॥

दादू बेली आतमा, सहज फूल फल होइ।
सहज सहज सतगुरु कहै, बूझै बिरला कोइ॥
हरि तरवर तत आतमा, बेलि करी विस्तार।
दादू लागै अमर फल, साधू सीचनहार॥
दया धर्म का रूखड़ा, सत सौ बधता जाइ।
सतोष सौ फूलै फलै, दादु अमर फल खाइ॥
मति बुधि बिबेक बिचार बिन, माणस पसू समान।
समझाया समझै नही, दादू परम गियान॥
राहु गिलै ज्यो चद कौ, गहन गिलै ज्यो सूर।
कर्म गिलै यौ जीव कौ, नख सिख लागै पूर॥
कर्म कुहाड़ा अग बन, काटत बारबार।
अपने हाथौ आप कौ, काटत है ससार॥
दादू देखौ पीव कौ, दूसर देखौ नाहि।
सबै दिसा सौ सोधि करि, पाया घट ही माहि॥
साई सूर जे मन गहै, निमखि न चलने देइ।
जब ही दादू पग भरै, तब ही पाकड़ि लेइ॥
जब लगि यह मन थिर नही, तब लगि परस न होइ।
दादू मनवा थिर भया, सहजि मिलैगा सोइ॥
यह मन कागज की गुडी, उड़ी चढी आकास।
दादू भीगै प्रेम जल, आइ रहै हम पास॥
जो कुछ हम थै ना भया, जा पर रीझै राम।
दादू इस ससार मे, हम आये बेकाम॥
जिसका दर्पण ऊजला, दर्पण देखै माहि।
जिसकी मैली आरसी, सो मुख देखै नाहि॥

जिहि घर निंदा साध की, सो घर गये समूल।
तिन की नीव न पाइये, नांव न ठांव न धूल॥
कादर काम न आवई, यहु सूरे का खेत।
तन मन सौपे राम कौ, दादू सीस सहेत॥

मन रे राम बिना तन छीजै।
जब यहु जाइ मिलै माटी मे, तब कहु कैसे कीजै॥
पारस परसि कचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई।
माया बेलि विषै फल लागे, तापर भूलि न भाई॥
जब लगि प्राण है नीका, तब लग ताहि जनि भूलै।
यहु संसार सेबल कै सुख ज्यू, ता पर तू जनि फूलै॥
और यह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जनि डहकावै॥

तेरे नाउं की बलि जाऊ, जहा रहौ जिस ठाऊं॥
तेरे बैनों की बलिहारी, तेरे नैनहुं ऊपरि वारी।
तेरी मूरति की बलि कीति, वारि वारि हौ दीति॥
सोभित नूर तुम्हारा, सुदर जोति उजारा।
मीठा प्राण पियारा, तू है पीव हमारा॥
तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये।
दादू बलि बलि तेरे, आन पिया तू मेरे॥

भाई रे घर ही मे घर पाया।
सहजि समाइ रह्या ता माही, सतगुरु खोज बताया॥
ता धर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया।
खोलि कपाट महल के दीन्हे, थिर अस्थान दिखाया॥

भय औ भेद भरम सब भागा, साच सोई मन लाया।
पिंड परे जहां जीव समावै, ता मे सहज समाया।।
निहचल सदा चलै नहिं कब हूं, देख्या सब मे सोई।
ता ही सू मेरा मन लागा, और न दूजा कोई।।
आदि अंत सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई।
दादू एक रंगै रंग लागा, ता मे रह्या समाई।।

बाबा मलूकदास

अब तेरी सरन आयो राम ।
जबै सुनिया साध के मुख, पतितपावन नाम ।।
यही जान पुकार कीन्ही अति सतायो काम ।
विषय सेती भयौ आजिज, कह मलूक गुलाम ।।

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम ।
दास मलूका यों कहै, सब के दाता राम ।।
जहा जहा दुख पाइया, गुरु को थापा सोय ।
जब ही सिर टक्कर लगै, तब हरि सुमिरन होय ।।
आदर मन महत्तव सत, वालापन को नेह ।
ये चारो तव ही गये, जब हि कहा कछु देह ।।
प्रभुता ही को सब मरै, प्रभु को मरै न कोय ।
जो कोई प्रभु को मरै, प्रभुता दासी होय ।।
मानष बैठे चुप कर, कदर न जानै कोय ।
जब ही मुख खोलै कली, प्रगट बास तब होय ।।
कोई जीति सकै नही, यह मन जैसे देव ।
याके जीते जीत है, अब मै पायो भेव ।।
तै मत जानै मन मुवा, तन करि डारा खेह ।
ता का क्या इतवार है, मारे सकल बिदेह ।।
जीती बाजी गुरु प्रताप ते, माया मोह निवार ।
कह मलूक गुरु कृपा ते, उतरा भव-जल पार ।।

सुखद पंथ गुरुदेव यह, दीन्हो मोहि बताय।
ऐसोऊ पथ पाय अब, जग-मग चलै बलाय॥

मलुका सोई पीर है, जो जानै पर पीर।
जो पर पीर न जानई सो काफिर बेपीर॥

सुंदरदास

जल को सनेही मीन बिछुरत तजै प्रान ।
मणि बिन अहि जैसे जीवत न लहिये ।।
स्वाति बूद को सनेही, प्रगट जगत मांहि ।
एक सीप दूसरो सु चातक हु कहिये ।।
रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर मे ।
ससि को सनेह हू चकोर जैसे रहिये ।।
तैसे ही सुदर एक, प्रभु सू सनेह जोरि ।
और कछु देखि काहू ओर नहि बहिये ।।

जैसे ईख रस की मिठाई भाति भाति भई ।
फेरि करि गारे ईख रस की लहतु है ।।
जैसे घृत थीज के, डरा सो बाधि जात पुनि ।
फेर पिघले ते वह घृत ही रहतु है ।।
जैसे पानी जमि के पाषाण हू सों देखियत ।
सो पषाण फेरि पानी होय के बहतु है ।।
तैसे ही सुदर यह जगत है ब्रह्म मे ।
ब्रह्म सो जगतमय वेद सु कहत है ।।

असन बसन बहु भूषण सकल अंग ।
सपति बिबिध भाति भर्‌यो सब घर है ।।
स्रवण नगारो सुनि छिनक मे छाड़ि जात ।
ऐसे नहि जानै कछु मेरो वहां घर है ।।

मन मे उछाह रण माहि टूक टूक होइ।
निर्भय निसंक बा के रंच हू न डर है ।।
सुदर कहत कोउ देह को ममत्व नाहि।
सूरमा को देखियत सीस बिनु धर है ।।

पाव रोपि रहे रण माहि रजपूत कोऊ।
हय गज गाजत जुरत जहां दल है ।।
बाजत जुझाऊ सहनाई सिधुराग पुनि।
सुनत ही कायर की छूट जात कल है ।।
झलकत बरछी, तिरछी तरवार बहै।
मार मार करत परत खलभल है ।।
ऐसे जुद्ध मे अडिग्ग सुदर सुभट सोइ।
घर माहि सूरमा कहावत सकल है ।।

घेरिये तौ घेरे हू न आवत है मेरो पूत।
जोई परबोधिये सो कान न धरतु है।।
नीति न अनीति देखै सुभ न असुभ पेखै।
पल ही मे होती अनहोती हू करतु है।।
गुरु की न साधु की न लोक वेद हू की सक।
काहू की न माने न तौ काहु से डरतु है।।
सुदर कहत ताहि धीजिये सु कौन भाति।
मन की सुभाव, कछु कह्यो न परतु है।।

पल ही मे मरि जाय, पल ही मे जीवतु है।
पल ही मे पर हाथ देखत बिकानो है।।

पल ही मे फिरै नव खड हू ब्रह्मांड सब।
देख्यो अनदेख्यो सो तौ याते नहि छानो है॥
जातो नहि जानियत आवतो न दीसै कछु।
ऐसे ही बलाइ अब तासू पर्‌यो पानी है॥
सुदर कहत याकी गति हूं न लखि परै।
मन की प्रतीत कोऊ करै सौ दीवानो है॥

धीरज धारि बिचार निरंतर, तेहि रच्यो सोइ आपु हि ऐहै।
जेतिक भूक लगी घट प्राणहि, तेतिक तू अन्यारहि पैहै॥
जो मन मे तृस्ना करि धावत, तौ तिहु लोक न खात अघैहै।
सुदर तू मत सोच करै कछु, चोच दई जिन चूनहु दैहै॥

द्वद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घर आतम ज्ञान अपारो।
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो॥
जोग न भोग न त्याग न सग्रह, देह दसा न ढक्यो न उघारो।
सुदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाव को पैडो ही न्यारो॥

विधि न निषेध कछु भेद न अभेद पुनि।
क्रिया सो करत दीसै यू ही नित प्रति है॥
काहू कू निकट राखै काहू कू तौ दूर भाखै।
काहू सू नेरे न दूर ऐसी जाकी मति है॥
राग हू न द्वेष कोऊ लोक न उछाह दोऊ।
ऐसी बिधि रहै कहू रति न बिरति है॥
बाहिर ब्यौहार ठानै मन मे सुपन जानै।
सदर ज्ञानी की कछु अद्‌भुत गति है॥

तमोगुण बुद्धि सो तौ तवा के समान जैसे ।
ताके मध्य सूरज की रच हू न जोत है ।।
रजोगुण बुद्धि जैसे आरसी की औधी ओर ।
ताके मध्य सूरज की कछुक उद्योत है ।।
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे आरसी की सूधी ओर ।
ताके मध्य प्रतिबिब सूरज की पोत है ।।
त्रिगुण अतीत जैसे प्रतिबिब मिटि जात ।
सुदर कहत एक सूरज ही होत है ।।

छीर नीर मिले दोऊ एकठे ही होइ रहे ।
नीर जैसे छाड़ि हस छीर कू गहत है ।।
कचन मे और धातु मिलि करि बनि पर्यो ।
सुद्ध करि कंचन सुनार ज्यू लहतु है ।।
पावक हूं दारु मध्य दारू हूं सों होइ रह्यौ ।
मथि करि काढै वह, दारू कू दहतु है ।।
तैसे ही सुदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तो साख्य ही कहतु है ।।

है दिल मे दिलदार सही, अंखिया उलटी करि ताहि चितैये ।
आब मे खाक मे बाद मे आतस, जानि मे सुदर जानि जनैये ।।
नूरमे नूर है तेजमे तेज हि, ज्योतिमे ज्योति मिलै मिलि जैये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये ।।

देहसू ममत्व पुनि गेहसू ममत्व, सुत दारसूं ममत्व, मन मायामे रहतु है ।
थिरता न लहे जैसे, कंदुक चौगान माहि, कर्मनिके बस मार्यो धकाकू बहुतहै ।।

अंत करण सदा जगत सू रचि रह्यो, मुख सू वनाय बात ब्रह्मकी कहतु है ।
सुदर अधिक मोहि याही ते अचंभो आहि, भूमिपर पर्यो कोऊ चद कू गहतुहै ॥

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो पुनि खेह लगाइ के देह संवारी ।
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जो पचागिनि वारी ॥
भूख सहै रहि रूख तरे, सुदरदास सहै दुख भारी ।
डासन छाडि के कासन ऊपर, आसनि मारि पै आस न मारी ॥

मातु पिता युवती सुत बाधव, लागत है सब कू अति प्यारो ।
लोक कुटुब खरौ हित राखत, होइ नही हम ते कहुं न्यारो ॥
देह सनेह तहा लग जानहु, बोलत है मुख सबद उचारो ।
सुदर चेतन शक्ति गई जव, बेगि कहै घरबार निकारो ॥

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और ।
चित्त सो न चदन सनेह सो न सेहरा ॥
हृदय सों न आसन सहज सो न सिहासन ।
भाव सी न सेज और सून्य सो न गेहरा ॥
सील सो न स्नान अरु ध्यान सो न धूप और ।
ज्ञान सो न दीपक अज्ञान तम केहरा ॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और ।
आतम सों देव नाहिं देह सो न देहरा ॥

सुदर सब ही सत मिलि सार लियौ हरि नाम ।
तक्र तजी घृत काढि कै और क्रिया किहि काम ॥
लीन भया बिछुरत फिरै, छीन भया गुन देह ।
दीन भई सब कलपना, सुदर सुमिरन येह ॥

भजन करत भय भागिया, सुमिरन भागा सोच।
जाप करत जौरा टल्या, सुदर साची लोच ॥
सुदर भजिये राम को तजिये माया मोह।
पारस के परसे बिना, दिन दिन छीजै लोह ॥
प्रीति सहित जे हरि भजै, तब हरि होहि प्रसन्न।
सुदर स्वाद न प्रीति विन, भूख बिना ज्यो अन्न ॥

धरनीदास

हरि-जन हरि के हाथ बिकाने।
भावै कहो जग धृग-जीवन है, भावै कहो बौराने ।।
जाति गंवाय अजाति कहाये साधु सगति ठहराने ।
मेरो दुख दारिद्र परानो, जूठन खाय अघाने ।।
पाच जने परबल परपची उलटि परे बदिखाने ।
छूटी मजूरी भये हजूरी साहिब के मनमाने ।।
निरममता निरबैरे सभन ते, निहसका निरवाने ।
धरनी काम राम अपने ते, चरन-कमल लपटाने ।।

प्रभु तो विन को रखवारा
हौ अति दीन अधीन अकर्मी, बाउर बैल बिचारा ।
तू दयाल चारो युग निश्चल कोटिन्ह अधम उधारा ।।
अब के अजस अबर नहि लागे, सरबस तोहि बडाई ।
कुल मरजाद लोक लज्जा तजि गह्यो चरन सिर नाइ ।।
मैं तन मन धन तो पर वारो मूरख जानत ख्याला ।
ब्याउर बेदन बाझ न बूझे, बिनु दागे नहि छाला ।।
तुलसी भूषन भेष बनायो, स्रवन सुन्यो मरजादा ।
धरनि चरन सरन सब पायो, छुटि है बाद बिवादा ।।

———

जगजीवन

आनंद के सिधु मे आन बसे, तिन को न रह्यो तन को तपनो ।
जब आपु मे आपु समाय गए, तब आपु मे आपु लह्यो अपनो ।।
जब आपु मे आपु लह्यो अपनो, तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकाश भयो, जगजीवन होय रह्यो सपनो ।।

अब मैं कहौ का कछु ज्ञान ।
बुद्धि हीन सिद्ध हीन, हौ अजान हैवान ।।
ब्रह्म सेस महेस सुमिरत, गहैं अंतर ध्यान ।
संत तते रहत लागे, कहत ग्रंथ पुरान ।।
जोति एकै अहै निरमल, करै सबै बयान ।
जहा जैसे भाव आहै, भयो तस परमान ।।
करौ दया जान आपन, नही जानहु आन ।
जग जीवनदास सत्य समरथ चरन रहु लिपटान ।।

भीखा साहिब

कोउ लखि रूप सब्द सुनि आई।
अविगत रूप अजायब बानी, ता छबि का कहि जाई ।।
यह तौ सब्द गगन घहरानो, दामिनि चमक समाई।
यह तौ नाद अनाहद निसदिन, परखत अलख सुहाई ।।
यह तौ बादर उठत चहू दिसि, दिवसहि सूर छिपाई।
यह तौ सुन्न निरतर बुधुकत, निज आतम दरसाई ।।

यह तौ झरतु है बूद झराझर, गरजि गरजि झरलाई।
वह तौ नूर जहूर बदन पर, हर दम तूर वजाई ।।
यह तौ चारि मास को पाहुन, कबहु नाहि थिरताई।
वह तौ अचल अमर की जै जै, अनंत लोग जस आई ।।
सतगुरु कृपा उभै बर पायो, सत्वत दृष्टि सुखदाई।
भीखा सो है जन्मसघाती, आवहि जाहि न भाई ।।

चेतत बसंत मन चित चैतन्य, जोग जुगति गुरु ज्ञान धन्य ।।
उरध पधार्‌यौ पवन घोर, दृष्टि पलान्यो पुरुव ओर।
उलटि गयो थकि मिटति दाह, पच्छिम दिसि कै खुलति राह ।।
सुन्न मडल मे बैठु जाय, उदित उजल छबि सहज पाय।
जोति जगामग झरत नूर, ह्या निसु दिन नौबति बजत तूर ।।
झलक झनक जिव एक होय, मत प्रान अपान को मिलन सोय।
रूह अलख नभ फूल्यो फूल, ग्गोई केवल आतम राम मूल ।।
देखत चकित अचरज आहि, जो वह सो यह कहौ काहि।
भीखा निज पहिचान लीन्ह, वह साबिक ब्रह्म सरूप चीन्ह ।।

पलटू साहिब

फूटि गया असमान सबद की धमक मे ।
लगी गगन मे आग सुरति की चमक मे ।।
सेसनाग औ कमठ लगे सब कॉपने ।
अरे हां पलटू सहज समाधि की दसा खबर नहि अपने ।।

माया की चक्की चलै पीसि गया ससार ।।
पीसि गया ससार बचै ना लाख बचावे ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ।।
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसन हारे ।
तिरगुन डारै झीक पकरि के सबै निकारे ।।
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै ।
करमा तवा मे धारि सेकि कै साबित होवै ।।
तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ।।
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरे पार ।
माया की चक्की चलै पीसि गयो संसार ।।

धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय ।।
चादर लीजै धोय मैल है बहुत समानी ।
चल सतगुरु के घाट भरा जहं निर्मल पानी ।।
चादर भई पुरानि दिनौ दिन बार न कीजै ।
सतसंगत मे सौद ज्ञान का साबुन दीजै ।।

छूटै कलमल दाग नाम का कलप लगावै।
चलिया चादर ओढ़ि बहुर नहिं भव जल आवै॥
पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय।
धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय॥

संत चढ़े मैदान पर तरकस बाधे ग्यान॥
तरकस बाधे मोह ज्ञान दल मारि हटाई।
मारि पाच पच्चीस दिहा गढ़ आगि लगाई॥
काम क्रोध को मारि कैद मे मन को कीन्हा।
नव दरवाजे छोड़ि सुरत दसएं पर दीन्हा॥
अनहद बाजै दूर अटल सिहासन पाया।
जीव भया सतोष आय गुरु नाम लखाया॥
पलटू कप्फन बाधि कै खेचो सुरति कमान।
संत चढे मैदान पर तरकस बांधे ग्यान॥

लागी गासी सबद की पलटू मुआ तुरत॥
पलटू मुआ तुरंत खेत के ऊपर जाई।
सिर पहिले उडि रुड से करै लड़ाई॥
तन मे तिल तिल घाव परदा खुलि लटकत जाई।
हेफ खाई सब लोग लड़ै यह कठिन लड़ाई॥
सतगुरु मारा तीर बीच छाती मे मेरी।
तीर चला होइ पवन निकरिगा तारू फोरी॥
कहने वाले बहुत है कथनी कथै बेअंत।
लागी गांसी सबद की पलटू मुआ तुरंत॥

जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार।
तासे तस ब्यौहार परसपर दूनौ तारी।
जे जेहि लाइक होय सोइ तस ज्ञान बिचारी॥
जो कोइ डारै फूल ताहि को फूल तयारी।
जो कोई गारी देत ताहि को हाजिर गारी॥
जो कोइ अस्तुति करै अपनी अस्तुति पावै।
जो कोइ निंदा करै ताहि के आगे आवै॥
पलटू जस मे पीवका वैसे पीव हमार।
जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार॥

——

चरनदास

पतितउधारन बिरद तुम्हारो।

जो यह बात सांच है हरि जू, तौ तुम हम कू पार उतारो॥

बालपने औ तरुन अवस्था, और बुढापे माही।

हमसे भई सभी तुम जानौ, तुमने नेक छिपानी नाही॥

अनगिन पाप भये मन माने, नख, सिख औगुन धारी।

हिरि फिरि कै तुम सरनै आयो, अब तुमको है लाज हमारी॥

सुभ करमन को मारग छूटो, आलस निद्रा घेरो।

एक हि बात भली बनि आई, जग मे कहायो तेरो चेरो॥

दीनदयाल कृपाल बिसभर, स्री सुकदेव गुसाई।

जैसे और पतित घन तारे, चरनदास की गहियो बाही॥

अब घर पाया हो मोहन प्यारा।

लखो अचानक अज अबिनासी उघरि गये दृग तारा॥

झूमि रह्यो मेरे आगन मे टरत नही बहु टारा।

रोम रोम हिय माही देखो होत नही छिन न्यारा।

भयो अचरज चरनदास पै ये खोज कियो बहु बारा॥

अखिया गुरुदरसन की प्यासी।

इक टक लागी पथ निहारू, तन सू भई उदासी॥

रैन दिना मोहि चैन नही है, चिता अधिक सतावै।

तलफत रहूं कल्पना भारी, निहचल बुधि नहि आवै॥

तन गयो सूख हूक अति लागै, हिरदै पावक बाढी।

खिन मे लेटी खिन मे बैठी घर अंगना खिन ठाढी॥

भीतर बाहर सग सहेली, बातन ही समझावे।

चरनदास सुकदेब पियारे नैनन ना दरसावै॥

रैदास

अब कैसे छूटै नाम रट लागी ।

प्रभु जी तुम चदन हम पानी । जा की अंग अग बास समानी ।।

प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा । जैसे चितवत चंद चकोरा ।।

प्रभु जी तुम दीपक हम बाती । जा की जोति बरै दिन राती ।।

प्रभु जी तुम मोती हम धागा । जैसे सोनहि मिलत सुहागा ।।

प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा । ऐसी भक्ति करै रैदासा ।।

——

नामदेव

एक अनेक व्यापक पूरक, जित देखौ तित सोई ।
माया चित्र बिचित्र बिमोहत, बिरला बूझै कोई ।।
सब गोंविद है सब गोबिद है, गोबिंद बिन नहि कोई ।
सूत एक मनि सत्त सहस जस, ओत प्रोत प्रभु सोई ।।
जल तरग अरु फेन बुदबुदा, जल ते भिन्न न होई ।
यह प्रपच परब्रह्म की लीला, बिचरत आन न होई ।।
मिथ्या भ्रम अरु स्वप्न मनोरथ, सत्य पदारथ जाना ।
सुकिरत मनसा गुरु उपदेशी, जागत ही मन माना ।।
कहत नामदेव हरि की रचना, देखो हृदय बिचारी ।
घट घट अतर सर्ब निरतर, केवल एक मुरारी ।।

——

दूलनदास

जब गज अरध गुहरायो ।
जब लगि आवै दूसरा अच्छर, तब लगि आपुहि धायो ।।
पाय पियादे भे करुनामय, गरुड़ासन बिसरायो ।
धाय गजद गोद प्रभु लीन्हौ, आपनि भक्ति दिढ़ायो ।।
मीँरा को विष अमृत कीन्हो, बिमल सुजस जग छायो ।
नामदेव हित कारन प्रभु तुम, मितेक गाय जियायो ।।
भक्त हेतु तुम जुग जुग जनमेउ, तुमहि सदा यह भायो ।
बलि बलि दूलनदास नाम की, नामहि ते चित लायो ।।

साई तेरे कारन नैना भये बैरागी ।
तेरा सत दरसन चहौ, कछु और न मागी ।।
निसु बासर तेरे नाम की, अतर धुनि जागी ।
फेरत हौ माला मनौ, असुवन झरि लागी ।।
पल की तजी इत उक्ति ते, मन माया त्यागी ।
दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी ।।
मदमाते राते मनौ, दाधे बिरह आगी ।
मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी ।।

—— —

गरीबदास

बगला खूब बना है जोर, जामे सूरज चंद क डोर ।।
या बंगला के द्वादस दर हैं, मध्य पवन परवाना ।
नाम भजे तो जुग जुग तेरा, नातर होत बिराना ।।
पांच तत्त और तीन गुनन का बंगला अधिक बनाया ।
या बंगले मे साहब बैठा, सतगुरु भेद लखाया ।।
रोम रोम तारागन दमकै कली कली दर चंदा ।
सूरजमुखी सबत्तर साजै, बाधा परमानंदा ।।
बगले मे बैकुठ बनाया, सप्तपुरी सैलाना ।
भुवन चतुरदस लोक बिराजै, कारीगर कुरबाना ।।
या बंगले मे जाप होत है, निरंकार धुन सेसा ।
सुर नर मुनि जन माला फेरै ब्रह्मा बिस्नु महेसा ।।
गन गधर्व गल्तान ध्यान मे, तेतिस कोट बिराजै ।
सुर निरंती बीना सुनिये, अनहद नादू बाजै ।।
इला पिगला पेग परी है, सुखमन झूल झुलती ।
सुरत सनेही सबद सुनत है, राग होत सत तंती ।।
पांच पचीसो मगन भये है, देखो परमानंदा ।
मन चचल निश्चल भया हंसा, मिलै परम सुख सिधा ।।
नभ की डोर गगन सू बांधै, तौ इहां रहने पावै ।
दसो दिसा सू पवन झकोरै काहे दोष लगावै ।।
आठो बदत अल्हैया बाजै होता सबद टंकोरा ।
गरीबदास यू ध्यान लगावै जैसे चद चकोरा ।।

सहजोबाई

अब तुम अपनी ओर निहारो ॥

हमरे औगुन पै नहि जावो, तुमही अपनी बिरद सम्हारो ॥

जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, बेद पुरानन गाई।

पतितउधारन नाम तिहारो, यह सुनके मन दृढता आई ॥

मै अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी।

मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हो किरपाल दयालहि स्वामी ॥

हाथ जोरि के अरज करत हौ, अपनाओ गहि बाही।

द्वार तिहारे आय परी हों, पौरुष गुन मो मे कछु नाही ॥

चरनदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊ।

लगन लगी और प्रान अडे हैं, तुमको छोड़ि कहो कित जाऊं ॥

धर्मदास

गुरु मिले अगम के बासी।
उनके चरनकमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी।
उनकी सीत प्रसादी लीजै, छूटि जाय चौरासी ।।
अमृत बुद झरै घट भीतर, साध सत जन लासी।
धरमदास बिनवै कर जोरि, सार सब्द मन बासी ।।

साहब बूडत नाव अब मोरी।
काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झक झोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ।।
कपट की भवर परतु है बहुतैं, वा मे बेड़ा अटको।
काल फास लियो है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ।।
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फद जिव तारी।
कहै कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरबन उबारी ।।

——

मध्ययुग

रीतिमार्गी शाखा

केशवदास

रतनबावनी

मूषिकबाहन गजबदन, एकरदन मुदमूल ।
बंदहु गणनायक चरण, शरण सदा सुखतूल ।।
ओडछेंद्र मधुशाहसुत, रतनसिंघ यह नाम ।
बादशाह सौं समर करि, गए स्वर्ग के धाम ।।
तिनकौ कछु बरनत चरित, जा विधि समर सु कीन ।
मारि शत्रुभट निकट अति, सैन सहित परबीन ।।

युद्ध का कारण

जिहि रिस कंपहि रूस रूम, कंपहि रन ऊनह ।
जिहि कंपहि खुरसान शान तुरकान बिहूनह ।।
जिहि कंपहि ईरान तुर्न तूरान बलख्खह ।
जिहि कंपहि बुख्खार तार तातार सलख्खह ।।
राजाधिराज मधुशाह नृप यह विचार उद्दित भयव ।
हिंदुवान धर्मरच्छक समुझि, पास अकब्बर के गयव ।।
दिल्लीपति दरबार जाय मधुशाह सुहायव ।
जिमि तारन के माह द्वंद शोभित छवि छायव ।।
देख अकब्बरशाह उच्च जामा तिन केरा ।
बोले बचन बिचारि कहौ कारन यहि केरो ।।
तब कहत भयब बुंदेलमणि मम सुदेश कटकि अवन ।
करि कोप ओप बोले बचन मै देखौ तेरो भवन ।।
सुनत बचन मधुशाह शाह के तीर समानह ।
लिखित पत्र तत्काल हाल तिहि बचन प्रमानह ।।

जुरहु जुद्ध करि क्रुद्ध जोरि सेना इक ठौरिय ।
तोर तोर तन रोर शोर करिये चहु ओरिय ।
तुव भुजन भार है कुवर यह रतनसेन शोभा लहय ।
कछु दिवस गए गढ ओड़छो दिल्लीपति देखन चहय ।।
सुनत पत्र मधुशाह को रतनसेन ततकाल ।
करिय तयारी जुद्ध की रोस चढ़ो जिन भाल ।।
साजि चमू मधुशाहसुत हरवल दल कर अग्र ।
हय गय पय दर सजि सकल छाड़ि ओड़छो नग्र ।।

कुमार उवाच

रतनसेन कह वात सूर सामत सुनिज्जिय ।
कहहु पैज पनधारि भारि सामतन लिज्जिय ।।
बरिय स्वर्ग अच्छरिय हरहु रिपु गर्व सर्व अव ।
जुरि करि सगर आज सुरमडल भेदहु सब ।।
मधुशाहनद इमि उच्चरइ खडखड पिंडहि करहुं ।
कहहु मुदत हथियान के मर्दहु दल यह प्रन धरहु ।।

विप्र उवाच

जुतौ भूमि तौ बेलि, बेलि लगि भूमि न हारै ।
जुतौ बेलि तौ फूल, फूल लगि बेलि न जारै ।।
जुतौ फूल तौ सुफल, सुफल लगि फूल न तोरै ।
जौ फल तौ परिपक्व, पक्व लगि फलहि न फोरै ।।
जा फल पक्व तौ काम सब, परिपक्वहि जग मंडिये ।
प्रान जुतौ पति वहु रहै, पति लगि प्रान न छडिये ।।

कुमार उवाच

गई भूमि पुनि फिरहि बेलि पुनि जमै जरे तैं ।
फल फूले तैं लगहि फूल फूलत भरे तैं ।
केशव विद्या विकट निकट विसरे तैं आवै ।
बहुरि होय धन धर्म गई सपति पुनि पावै ।
फिरि होइ स्वभाव सुशील मति जगत गति यह गाइये ।
प्राण गए फिरि फिरि मिलहि पति न गए पति पाइये ।।

बिप्र उवाच

मातु हेत पितु तजिय, पिता के हेत सहोदर ।
सुतहि सहोदर हेत, सखा सुत हेत तजहु बर ।
सखा हेत तजि बंधु बधुहित तजहु सुजन जन ।
सुजन हेत तजि सजन सजन हित तजहु सुखन मन ।
कहि केशव सुख लगि घरनि तजि, घरनीहित घर खडिये ।
सुइ छडिय सब घर हेत पति, प्राण हेत पति छडिये ।।

कुमार उवाच

जासु बीज हरि नाम जम्यो सुचि सुकृति भूमि थल ।
एकादशी अनेक बिमल कोमल जाने दल ।
द्विज चरणोदक बुद कद सीचत सुख बड्ढिय ।
गोदानन के हेत धर्म तरुवर दिन चड्ढिय ।।
सत्त फूल फुल्लिय सरस सुयश बास जग मडिये ।
कहि केशव फलती बेर कर "पति" फल किमि कर छंडिये ।

विप्र उवाच

दानी कहा न देय चोर पुनि कहा न हरई ।
लोभी कहा न लेय आग पुनि कहा न जरई ।
पापी कहा न करै कह न बेचै ब्यौपारी ।
मुक बिन बरनै कहा कहा साधू न संचारी ।।
सुनि महाराज मधुशाहसुव सूर कहा नहिं मंडई ।
कहि केशव घर धन आदि दै साधु कहा नहि छंडई ।।

कुमार उवाच

पच कहै सो कहिय, पंच के कहत कहिज्जिय ।
पंच लहै सो लहिय, पंच के लहत लहिज्जिय ।।
पच रहै तो रहिय, पच के दिष्षित दिष्षिय ।
परमेसुर अरु पंच सबन, मिलि इक्कय लिष्षिय ।।
सुनि रतनसेन मधुशाह सुव पच साथ नहि लज्जिये ।
कहि केशव पंचन संग रहि, पच भजै तह भज्जिये ।।

विप्र उवाच

द्विज मागै सो देव विप्र को वचन न खंडिय ।
द्विज बोले सो करिय विप्र को मान न भंगिय ।।
परमेस्वर अरु विप्र एक सम जानि सु लिज्जिय ।
विप्र वैर नहि करिय विप्र कह सर्व सु दिज्जिय ।।
सुनि रतनसेन मधुशाहसुव विप्र बोल किन लिज्जियहु ।
कहि केशव तन मन वचने करि विप्र कहय सुइ किज्जियहु ।।

कुमार उवाच

पतिहि गए मति जाय, गए मति मान गरै जिय ।
मान गरे गुन गरै गरे गुन लाज जरै जिय ॥
लाज जरे जस भजै भजे जस धरम जाइ सब ।
धरम गये सव करम करम गए पास बसै तब ॥
पाप बसे नरकन परै नरकन केशव को सहै ।
यह जान देहु सरबसु तुम्हे सुपीठ दए पति ना रहे ॥
पति मति अति दृढ जानि कर सुनि सब वचन समाज ।
राम रूप दरसन दियौ केवल त्रिभुवनराज ॥

रामायण-युद्ध

रावण चले चले ते धाम धाम ते सबै ।
साजि साजि साज सुर गाजि गाजि कै तबै ॥
देव दुदुभी अपार भाति भाति बाजही ।
युद्ध भूमि मध्य क्रुद्ध मत्त दत राजही ॥

इंद्र श्रीरघुनाथ को रथहीन भूतल देखि कै ।
वेगि सारथि सो कहेउ रथ जाहि लै सु विशेषि कै ॥
तूण अक्षय बाण स्वच्छ अभेद ले तन त्राण को ।
आइयो रणभूमि मे करि अप्रमेय प्रणाम को ॥
कोटि भातिन पौन ते मन ते महा लघुता लसै ।
बैठि कै ध्वज अग्र श्री हनुमत अतक ज्यौ हंसै ॥
रामचद्र प्रदक्षिणा करि दक्ष ह्वै जलदी चढे ।
पुष्प वर्षि, बजाय दुदुभि देवता बहुधा बढ़े ॥

राम को रथमध्य देखत क्रोध रावण के बढ्यौ।
बीस बाहुन की शरावलि ब्योम भूतल सो मढ्यौ ।।
शैल ह्वै सिकता गई सब दृष्टि के बल सहरे।
ऋक्ष बानर भेदि तत्क्षण लक्षधा छतना करे ।।
बाणन साथ विधे सब बानर। जाय परे मलयाचल की धर ।।
सूरजमंडल मे इक रोवत। एक अकाशनही मुख धोवत ।।
एक गये यमलोक सहे दुख। एक कहै भव भूतन सो रुख ।।
एक खते सागर माझ परे मरि। एक गए बड़वानल मे जरि ।।
श्री लक्ष्मण कोप कर्‌यौ जबही। छोड्‌यौ शर पावक को तब ही ।।
जार्‌यौ शरपंजर छार कर्‌यौ। नैकृत्यन को अति चित्त डर्‌यौ ।।
दौरे हनुमत बली बल सो। लै अगद सग सबै दल सो ।।
माने गिरिराज तजे डर को। घेरे चहु ओर पुरंदर को ।।
अगद रण अगन तव अगद मुरझाइ कै।
ऋक्षपतिहि अक्षरिपुहि लक्षगति बुझाइ कै ।।
बानर गण वाणान सन केशव जबही मुर्‌यौ।
रावण दुखदावन जगपावन समुहे जुर्‌यौ ।।
इद्रजीत जीति आनि रोकियो सुबाण तानि।
छोड़ि दीनि बीर बानि कान के प्रमान आनि ।।
स्यो पताक काटि चाप चर्म वर्म मर्म छेदि।
जात मो रसातलै अशेष कंठमाल भेदि ।।
सूरज मुसल नील पट्टिशि परिघ नल। जामवत हनू तोमर प्रहारे है ।।
परसा सुखेन कुत केशरी गवय शूल। विभीषणगदा गज भिदिपाल तारे है ।।
मोगराद्विविद तीर कटरा कुमुद नेजा। अगद शिला गवाक्ष विटप विदारे है ।।
अंकुश शरभ चक्र दधिमुख शेषशक्ति। बाण तिन रावण श्रीरामचंद्र मारे है ।।

द्वैभुज श्री रघुनाथ को बिरचे युद्धविलास।
बाहु अठारह यूथपनि मारे केशवदास ॥

युद्ध जोई जहा भाति जैसी करै। ताहि ताही दिशा रोकि राखै तही ॥
अस्त्र आपने लै शस्त्र काटै सबै। ताहि केहू कहू घाव लागै नही ॥
दौरि सौमित्र लै बाण कोदड ज्यो। खड खडी ध्वजा धीर छत्रावली ॥
शैल श्रृगावली छोडि मानो उड़ी। एक ही बेर कै हंसवशावली ॥

लक्ष्मण शुभलक्षण बुद्धविचक्षण रावण सो रिस छेड़ दई।
बहु बाणनि छड़ै जै सिर खड़ै ते फिर खड़ै शोभ नई ॥
यद्यपि रणपडित गुणगणमडित रिपुबलखडित भूल रहे।
तजि मन बच कायक सूर सहायक रघुनायक सो बचन कहे॥
ठाढौ रण गाजत केहु न भाजत तन मन लाजत सब लायक।
सुनि श्री रघुनदन मुनिजनबदन दुष्टनिकदन सुखदायक ॥
अब टरै न टार्यो मरै न मार्यो हौ हठि हार्यो धरि शायक।
रावण नहि मारत देव पुकारत ह्वै अति आरत जगनायक ॥

जेहि शर मधुमद मरदि महासुर मर्दन कीन्हेउ।
मारेहु कर्कश नर्क शख हति शख जो लीन्हेउ ॥
निष्कंटक सुर कटक कर्यौ कैटभ बपु खंड्यौ।
खर दूषण त्रिशिरा कबध तरुखंड विहड्यौ ॥
कुभकरण जेहि संहर्यौ पल न प्रतिज्ञा ते टरौ।
तेहि बाण प्राण दशकठ के कठ दशौ खडित करौ ॥
रघुपति पठयौ आसु ही असुहर बुद्धि निदान।
दशशिर दश हू दिशन को बलि दै आयौ बान ॥

भवभारहि सयुत राकस को, गण जाइ रसातल मे अनुराग्यो
जग मे जय शब्द समेतिहि केशव, राज विभीषण के सिर जाग्यो
भय दानवनंदिनि के सुख सों, मिलिके सियके हिय को दुख भाग्यो
सुरदुंदुभि सीस बजी शर राम को, रावण के शिर साथहि लाग्यो।

——

बिहारी

मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाई परैं, स्यामु हरित-दुति होइ ।।

बहके सब जिय की कहत, ठौरु कुठौरु लखैं न ।
छिन औरै छिन और से, ए छवि छाके नैन ।।

फिरि फिरि चितु उतही रहतु, टुटी लाजकी लाव ।
अग-अग-छबि-झौर, मै, भयौ भौर की नाव ।।

नीकी दई अनाकनी, फीकी परी गुहारि ।
तज्यौ मनौ तारन-बिरदु, बारक बारनु तारि ।।

दीरघ सास न लेहि दुख, सुख साईंहि न भूलि ।
दई दई क्यो करतु है, दई दई सु कबूलि ।।

मरी डरी की टरी बिथा, कहा खरी चलि चाहि ।
रही कराहि कराहि अति, अब मुह आहि न आहि ।।

कहा भयौ जौ बीछुरे, मो मनु तो मन साथ ।
उडी जाउ कित हू तऊ, गुड़ी उड़ायक-हाथ ।।

सीतलता रु सुबास की, घटै न महिमा मूरु ।
पीनसवारै जौ तज्यौ, सोरा जानि कपूरु ।।

कागद पर लिखत न बनत, कहत संदेसु लजात ।
कहि है सब तेरौ हियौ, मेरे हिय की बात ।।

बधु भये का दीन के, को तार्‌यो रघुराइ ।
तूठे तूठे फिरत हौ, झूठे बिरद कहाइ ।।

जब जब वै सुधि कीजिये, तब तब सब सुधि जाहि ।
आखिनु आखि लगी रहै, आखैं लागति नाहि ।।

थोरैं ही गुन रीझते, बिसराई वह बानि ।
तुम हूं कान्ह मनौ भए, आज काल्हि के दानि ।।
कब कौ टेरतु दीन रट, होत न स्याम सहाइ ।
तुम हूं लागी जगतगुरु, जग-नायक जग-बाइ ।।
पत्रा ही तिथि पाइये, वा घर कैं चहुं पास ।
नित प्रति पून्यौई रहै, आनन ओप उजास ।।
कोऊ कोरिक सग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो सपति जदुपति सदा, बिपति विदारनहार ।।
तंत्री-नाद कवित्त-रस, सरस-राग रतिरंग ।
अनबूड़े बूड़े तरे, जे बूडे सब अग ।।
प्रगट भए द्विजराज-कुल, सुबस बसे ब्रज आइ ।
मेरे हरौ कलेस सब, केसव केसव राइ ।।
या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहि कोइ ।
ज्यौ ज्यौ बूडे स्याम रग, त्यो त्यौ उज्जलु होइ ।।
कैसे छोटे नरनु तैं, सरत बडनु के काम ।
मढ्यौ दमामौ जातु कहु, कहि चूहे कै चाम ।।
सकत न तुव ताते वचन, मो रस कौ रस खोइ ।
खिन खिन औटे खीर लौ, खरौ सवादिलु होइ ।।
जपमाला छापा तिलक, सरै न एकौ कामु ।
मन काचै नाचै बृथा, साचै राचै रामु ।।
घरु घरु डोलत दीन ह्वै, जनु जनु जाचतु जाइ ।
दियैं लोभ चसमा चखनु, लघु पुनि बड़ौ लखाइ ।।
मैं समुझ्यौ निरधार, यह जगु काचो काच सौ ।
एकै रूपु अपार, प्रतिबिंवित लखियतु जहां ।।

कनकु कनकु तै सौगुनी, मादकता अधिकाइ ।
उहि खाएं बौराइ इहि, पाये ही बौराइ ।।
कीजै चित सोई तरे, जिहि पतितनु के साथ ।
मेरे गुन-औगुन सबनु, गनौ न गोपीनाथ ।।
सगति सुमति न पावही, परै कुमति कै धध ।
राखौ मेलि कपूर मे, हीग न होइ सुगध ।।
जोन्ह नही यह तमु बहै, किए जु जगत निकेतु ।
होत उदै ससि के भयो, मानहु ससहरि सेतु ।।
जात जात बितु होतु है, ज्यौ जिय मैं सतोषु ।
होत होत जौ होइ तौ, होइ घरी मे मोषु ।।
गिरि तै ऊचे रसिक–मन, बूड़े जहा हजारु ।
वहै सदा पसु नरनु कौ, प्रेम–पयोधि पगारु ।।
जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सु बीति बहार ।
अब अलि रही गुलाब मै, अपत कटीली डार ।।
मैं बरजी कै बार तू, इत कित लेति करौट ।
पखुरी लगै गुलाब की, परिहै गात खरौट ।।
सूर उदित हूं मुदित मन, मुखु सुखमा की ओर ।
चितै रहत चह ओर तै, निहचल चखनु चकोर ।।
मोहूं दीजै मोषु ज्यौ, अनेक अधमनु दियौ ।
जौ बांधै ही तोषु तौ, बाधी अपनै गुननु ।।
सबै हंसत करतार दै, नागरता कै नाउ ।
गयौ गरबु गुन कौ सरबु, गऐ गंवारै गाउं ।।
मै तपाइ त्रय ताप सौ, राख्यौ हियौ हमामु ।
मति कबहुक आए यहा, पुलकि पसीजै स्यामु ।।

स्वारथु सुकृतु न श्रमु बृथा, देखि बिहग बिचारि ।
बाज पराए पानि परि, तू पछीनु न मारि ।।
सीस मुकट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
इहि बानक मो मन सदा, बसौ बिहारीलाल ।।
भृकुटी—मटकनि पीतपट, चटक लटकती चाल ।
चल चख चितवनि चोरि चितु, लियौ बिहारीलाल ।।
न ए बिससियहि लखि नए, दुरजन दुसह—सुभाई ।
आटै परि प्राननु हरत, काटै लौ लगि पाइ ।।
सखि सोहति गोपाल कै, उर गुजनु की माल ।
बाहिर लसत मनौ पिए, दावानल की ज्वाल ।।
बढत बढत सपति—सलिलु, मन—सरोजु बढि जाइ ।
घटत घटत सु न फिरि घटै, बरु समूल कुम्हिलाइ ।।
दुसह दुराज प्रजानु कौ, क्यौ न बढ़ै दुख—दंदु ।
अधिक अधेरो जग करत, मिलि मावस रवि चंदु ।।
तौ लगु या मन—सदन मै, हरि आवै किहि बाट ।
बिकट जुटे जौ लगु निपट, खुलै न कपट—कपाट ।।
प्यासे दुपहर जेठ के, फिरे सबै जलु सोधि ।
मरुधर पाइ मतीरु ही, मारू कहत पयोधि ।।
कहत सबै बेदी दियै, आकु दस गुनौ होतु ।
तिय—लिलार बेदी दियै, अगनितु बढतु उदोतु ।।
सरस कुसुम मंडरातु अलि, न झुकि झपटि लपटातु ।
दरसत अति सुकुमारता, परसत मन न पत्यातु ।।
भजन कह्यो ता तै भज्यौ, भज्यौ न एकौ बार ।
दूरि भजन जा तै कह्यौ, सो तै भज्यौ गवार ।।

पतवारी माला पकरि, और न कछु उपाउ ।
तरि ससार-पयोधि को, हरि-नावै करि नाउ ॥
जौ चाहत चटक न घटै, मैलो होइ न मित्तु ।
रज-राजसु न छुवाइए, नेह-चीकनै चित्तु ॥
कोरि जतन कीजै तऊ, नागर-नेहु दुरै न ।
कहै देत चितु चीकनौ, नई रुखाई नैन ॥
यह बरिया नहि और की, तू करिया वह सोधि ।
पाहन-नाव चढाइ जिहि, कीने पार पयोधि ॥
अति अगाधु अति औथरौ, नदी कूप सरु बाइ ।
सो ताकौ सागरु जहा, जा की प्यास बुझाइ ॥
मानहु बिधि तन-अच्छ छबि, स्वच्छ राखिबै काज ।
दृग-पग-पोंछन कौ करे, भूषन पायंदाज ॥
मोर-मुकुट की चद्रिकनु, यौ राजत नंदनंद ।
मनु ससि सेखर की अकस, किय सेखर सतचंद ॥
अधर धरत हरि कै परत, ओठ डीठि पट जोति ।
हरित बास की बासुरी, इद्रधनुष-रंग होति ॥
तौ अनेक औगुन भरिहि, चाहै याहि बलाइ ।
जौ पति संपति हू बिना, जदुपति राखे जाइ ॥
करौ कुबत जगु कुटिलता, तजौ न दीनदयाल ।
दुखी होउगे सरलचित, बसत त्रिभंगी लाल ॥
निज करनी सकुचेहि कत, सकुचावत इहि चाल ।
मोहूं से नित बिमुख त्यो, सनमुख रहि गोपाल ॥
मोहि तुम्है बाढी बहस, को जीतै जदुराज ।
अपनै अपनै बिरद की दुहूं निबाहत लाज ॥

दूरि भजत प्रभु पीठि दै, गुन बिस्तारन काल।
प्रगटत निर्गुन निकट रहि, चंग-रंग भूपाल ॥
कहै यहै स्रुति सुम्रित्यौ, यहै सयानै लोग।
तीन दबावत निसकही, पातक राजा रोग ॥
जो सिर धरि महिमा मही, लहियति राजा राइ।
प्रगटत जडता अपनियै, सु मुकटु पहिरत पाइ ॥
को कहि सकै बड़ेनु सौ, लखै बड़ीयौ भूल।
दीने दई गुलाब को, इन डारनु वे फूल ॥
समै समै सुदर सबै, रूपु कुरूपु न कोइ।
मन की रुचि जेती जितै, तित तेती रुचि होइ ॥
या भव पारावार कौ, उलघि पार को जाइ।
तियछवि छायाग्राहिनी, ग्रहै बीच ही आइ ॥
दिन दस आदरु पाइकै, करि लै आपु बखानु।
जौ लगि काग सराध पखु, तों लगि तौ सनमानु ॥
मरतु प्यास पिजरा पर्‌यौ, सुआ समै कै फेर।
आदरु दै दै बोलियतु, बाइसु बलि की बेर ॥
इही आस अटक्यौ रहतु, अलि गुलाब कै मूल।
ह्वैहै फेरि बसंत ऋतु, इन डारनु वे फूल ॥
वे न इहा नागर बड़े, जिन आदर तो आब।
फूल्यो अनफूल्यो भयौ, गवई गाव गुलाब ॥
चल्यो जाइ ह्यां को करै, हाथिनु कौ व्यौपार।
नहिं जानतु इहि पुर बसै, धोबी ओड़ कुम्हार ॥
खल बढ़ई बलु करि थके, कटै न कुबत-कुठार।
आलबाल उर झालरी, खरी प्रेमतरु डार ॥

कत बेकाज चलाइयति, चतुराई की चाल।
कहे देति यह रावरे, सब गुन निरगुन माल ॥
उनकौ हितु उनही बनै, कोऊ करौ अनेकु।
फिरतु काक गोलकु भयौ, दुहू देह ज्यो एकु ॥
इक भीजे चहलै परे, बूड़ै बहै हजार।
किते न औगुन जग करै, बै-नै चढती बार ॥
नाचि अचानक ही उठे, बिनु पावसु बन मोर।
जानति हौ नदित करी, यह दिसि नदकिसोर ॥
मै यह तोही मै लखी, भगति अपूरब बाल।
लहि प्रसाद-माला जु भौ, तनु कदब की माल ॥
नहि पावसु ऋतुराजु यह, तजि तरवर चित-भूल।
अपतु भए बिनु पाइहै, क्यो नव दल फल फूल ॥
कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ।
जगतु तपोबन सौ कियौ, दीरघ दाघ निदाघ ॥
पग पग अगमन है परत, चरन अरुन दुति झूलि।
ठौर ठौर लखियत उठे, दुपहरिया से फूलि ॥
नीच हियै हुलसे रहै, गहै गेद को पोत।
ज्यौ ज्यौ माथै मारियत, त्यौ त्यौ ऊचे होत ॥
लोपे कोपे इद्र लौ, रोपे प्रलय अकाल।
गिरिधारी राखे सबै, गो गोपी गोपाल।
प्रलय-करन बरषन लगे, जुरि जलधर इक साथ।
सुरपति-गरब हर्‌यो हरषि, गिरिधर गिरिधर हाथ ॥
अपनै अपनै मत लगे, बादि मचावत सोरु।
ज्यौ त्यौ सब कौ सेइबौ, एकै नदकिसोरु ॥

बुरौ बुराई जौ तजै, तौ चितु खरौ डरातु ।
ज्यौ निकलकु मयकु लखि, गनै लोग उतपातु ॥
ओछे बड़े न ह्वै सकै, लगौ सतर ह्वै गैन ।
दीरघ होहि न नैक हू, फारि निहारै नैन ॥
पटु पाखै भखु काकरै, सदा परेई सग ।
सुखी परेवा पुहुमि मै, एकै तु ही विहग ॥
अरे परेखौ को करै, तुही बिलोकि बिचार ।
किहि नर किहि सर राखियै, खरै बढै परिवार ॥
तौ बलियै भलियै बनी, नागर नद–किसोर ।
जौ तुम नीकै कै लख्यौ, मो करनी की ओर ॥
समै पलट पलटै प्रकृति, को न तजै निज चाल ।
भौ अकरुन करुना करौ, इहि कपूत कलिकाल ॥
गोधन तू हरष्यौ हियै, घरियक लेहि पुजाइ ।
समुझि परैगी सीस पर, परत पसुनु के पाइ ॥
सामा सेन सयान की, सबै साहि कै साथ ।
बाहु बली जय साहि जू, फते तिहारे हाथ ॥
यौ दल काढे बलख तै, तै जयसिह भुवाल ।
उदर अघासुर कै परै, ज्यौ हरि गाइ गुवाल ॥
घर घर तुरकिनि हिदुनी, देति असीस सराहि ।
पतिनु राखि चादर चुरी, तै राखी जय साहि ॥
हुकुम पाइ जयसाहि को, हरि राधिका प्रसाद ।
करी बिहारी सतसई, भरी अनेक सवाद ॥

———

मतिराम

मो मन–तम–तोमहि हरौ, राधा को मुख चद ।
बढै जाहि लखि सिधु लौ, नद–नदन–आनंद ॥
मजु गुज के हार उर, मुकुट मोर–पर–पुज ।
कुजबिहारी बिहरियै, मेरेई मन – कुंज ॥
नदलाल कहियै कहां, लह्यो अपूरब हार ।
गुन–बिहीन किसुकनि कौ, तिन मधि मुकुर सुधार ॥
नैन बिसारे बान सौ, चली बटाउहि मारि ।
वचन–सुधा रस सीचि कै, वाहि जीव दै नारि ॥
रोस न करि जौ तजि चल्यौ, जानि अगार गवार ।
छितिपालनि की माल मै, तै ही लाल सिगार ॥
कहा भयौ मतिराम हिय, जौ पहिरी नद लाल ।
लाल मोल पावै नही, लाल गुज की माल ॥
गुन औगुन को तनकऊ, प्रभु नहि करत विचार ।
केतकि कुसुम न आदरत, हर सिर धरत कपार ॥
निज बल को परिमान तुम, तारे पतित बिसाल ।
कहा भयो जु न हौ तरतु, तुम खिस्याहु गोपाल ॥
बसिबे कौ निज सरबरनि, सुर जाको ललचाहि ।
सो मराल बक-ताल मै, पैठन पावत नाहि ॥
अद्भुत या धन कौ तिमिर, मो पै कह्यो न जाइ ।
ज्यौ ज्यौ मनिगन जगमगत, त्यौ त्यौ अति अधिकाइ ॥
सतरौही भौहनि नही, दुरै दुराऐ नेह ।
होति नाम नंदलाल कौ, नीपमाल सी देह ॥

जिन कै सील समान है, साचे होत सु मित्र ।
नेही चंचल चखनि कौ, चाह्यौ चचल चित्त ।।
खिन मे पुलकित होत है, खिन मे मुकुलित होत ।
इदीबर अरबिद से, चख मुख इदु-उदोत ।।
ग्रीषम हू रबि तपत हू, रहै जलद जनु झूमि ।
तपी दृगनि सीतल करै, गांउ निकट की भूमि ।।
अरुन बसन निकरी पहरि, पावस मै छबिखानि ।
इद्र–गोप सी गोपिका, गोप-इद्र लखि आनि ।।
कियौ और कौ सब कछू, मान आपनौ लेइ ।
क्यौ न लहै संताप जौ, भार आप सिर देइ ।।
मो जीवन तू कहतु है, ब्रज-जीवन तू पीउ ।
जु पै जीव बिन जियत तौ, धिग जीवन यह जीउ ।।
प्रान निवासी तोहिं तजि, कब कौ कियौ उजार ।
तू अजहू लौ बसतु है, प्रान कहा सु बिचार ।।
निज पग-सेवक समुझि करि, करि उर तै रिस दूरि ।
तेरी मृदु मुसक्यानि है, मेरी जीवन मूरि ।।
प्रतिबिबित तौ बिब मै, भूतल भयौ कलक ।
निज निरमलता ही दोष यह, मन में मानि मयक ।।
तिहि पुरान भव द्वै पढे, जिहिं जानी यह बात ।
जो पुरान सो नव सदा, नव पुरान ह्वै जात ।।
सपने मै सपनौ समुझि, होति दूरि ज्यौ संक ।
संक छोडि संसार की, रहि जानी निहसक ।।
हिये बसत मुख हसत हौ, हम कौ करत निहाल ।
घट-घट-व्यापी ब्रह्म तुम, प्रगट भए नदलाल ।।

मो मन मेरी बुद्धि लै, करि हर कौ अनुकूल।
लै त्रिलोक की साहिबी, दै धतूर को फूल॥
तौ मुख-छबि सौ हारि जग, भयौ कलक समेत।
सरद इदु अरबिदमुखि, अरबिदनि दुख देत॥
मधुप-मोह मोहन तज्यौ, यह स्यामनि की रीति।
करौ आपने काज कौ, तुम्है जाति सी प्रीति॥
मत्रिनि के बस जो नृपति, सो न लहत सुख-साज।
मनहि बाधि दृग देत दृग, मन-कुमार कौ राज॥
स्याम-रूप अभिराम अति, सकल बिमल गुन-धाम।
तुम निसि दिन मतिराम की, मति बिसरौ मति राम॥
प्रेम लग्यौ अगार ह्वै, सीता मन बिन ज्ञान।
देत अगूठी राम की, मानिक भो हनुमान॥
प्रतिपालक सेवक सकल, खल दल मलत है डांटि।
शकर तुम सम साकरै, सबल साकरै काटि॥
सेवक सेवा के सुने, सेवा देव अनेक।
दीनबधुहरि जगत है, दीनबधु हर एक॥
अब फिरि आवत है नही, मो तन जीवन-हीन।
तो तन पानिप-रूप मैं, मौ मन-मीन बिलीन॥
भई देवता भाव सब, हौ तुमकौ बलि जाउ।
वाही कौ मुख रूप मन, वाही कौ मुख नाउ॥
अधम अजामिलि आदि जे, हौ तिनको हौ राउ।
मो हू पर कीजै दया, कान्ह दया-दरियाउ॥
पगी प्रेम नदलाल कै, हमैं न भावत जोग।
मधुप राजपद पाइ कै, भीख न मागत लोग॥

छोड़ि नेह नदलाल कौ, हम नहि चाहति जोग।
रग बाती क्यो लेत है, रतन-पारखी लोग ॥
भोग नाथ नरनाथ के, गुन-गन बिमल बिसाल।
भिच्छुक सेवत पानि है, पग सेवत महिपाल ॥
छाह बिना ज्यौ जेठ रबि, ज्यौ बिनु ओषधि रोग।
ज्यौ बिनु पानी प्यास यौ, तेरौ दुसह बियोग ॥
कपट बचन अपराध तै, निपट अधिक दुखदानि।
जरे अग मै सकु ज्यौ, होत बिथा की खानि ॥
पीत झगुलिया पहिरि कै, लाल लकुटिया हाथ।
धूरि भरे खेलत रहे, ब्रजबासिनि ब्रजनाथ ॥
मेरी मति मे राम है, कबि मेरे 'मति राम'।
चित मेरौ आराम मै, चित मेरे आ राम ॥

रसनिधि

जाकौ गति चाहत दियौ, लेत अगति तैं राखि।
रसनिधि है या बात के, भक्त भागवत साखि ।।

भूले तैं करतार के, रागु न आवै रास।
यही समझ कै राख तू, मन करतारैं पास ।।

हरि कौ सुमिरौ हर घरी, हरि हरि ठौर जुबान।
हर बिधि हरि के ह्वै रहौ, रसनिधि संत सुजान ।।

मनि समान जाके मनी, नैकु न आवत पास।
रसनिधि भावुक करत है, ता ही मन मे बास ।।

परम दया करि दास पै, गुरू करी जब गौर।
रसनिधि मोहन भाव तौ, दरसायौ सब ठौर ।।

पाप पुन्य अरु जोति तैं, रबि ससि न्यारे जान।
जद्यपि सो सब घटन मे, प्रतिबिबित है आन ।।

आपु भवर आपुहि कमल, आपुहि रग सुबास।
लेत आपुही बासना, आपु लसत सब पास ।।

पवन तु ही पानी तु ही, तु ही धरनि आकास।
तेज तु ही पुनि जीव है, तु ही लियौ तन बास ।।

कहू हाकमी करत है, कहू बंदगी आइ।
हाकिम बदा आप ही, दूजा नही दिखाइ ।।

मोहनवारौ आपु ही, मनिमानिक पुनि आपु।
पोहनवारौ आपु ही, जोहनिहारौ आपु ।।

पंचन पंच मिलाइ कै, जीव ब्रह्म मे लीन।
जीवन-मुक्त कहावही, रसनिधि वह परबीन ।।

हिंदू मे क्या और है, मुसलमान मे और।
साहिब सब का एक है, व्याप रहा सब ठौर ॥
सज्जन पास न कहु अरे, ये अनसमझी बात।
मोम-रदन कहु लोह के, चना चबाए जात ॥
बेदाना सें होत है, दाना एक किनार।
बे दाना नहिं आदरै, दाना एक अनार ॥
हित करियत यह भांति सौ, मिलियत है वह भात।
छीर नीर तै पूछ लै, हित करिबे की बात ॥
घट बढ इन मै कौन है, तु ही सामरे ऐन।
तुम गिरि लै नख पै धरचो, इन गिरिधर लै नैन ॥
जान अजान न होत है, जगत बिदित यह बात।
बेर हमारी जान कै, क्यो अजान होइ जात ॥
जदपि भयौ है ससि अरे, मन ही तै उतपन्न।
तउ चकोरन मन बिथर, नीकौ जानत धन्न ॥
जे अखियां बैराइही, लगै बिरह की बाइ।
प्रीतम-पग-रज कौ तिन्हे, आजन देहु लगाइ ॥
निकसत नाही जतन कर, रही करेजे साल।
चुबक मीत मिले बिना, बिरह साल की भाल ॥
रे निरमोही मनहरन, आरे आरे आइ।
भारे आरे बिरह के, मत मो सीस चलाइ ॥
पल अजुरिन सौ पियत दृग, जल अंसुवा भर सास।
गनत रहत है अवधि के, दिन पखवारे मास ॥
मोहन लखि जो बढ़त सुख, सो कछु कहत बनै न।
नैनन कै रसना नही, रसना कै नहि नैन ॥

अरी मधुर अधरान तैं, कटुक बचन मत बोल।
तनक खुटाई तैं घटै, लखि सुवरन को मोल॥
जग तरबर तैं फल लगै, जौ लग काचौ गात।
पाके तैं फल आप ही, डारनि तैं छुटि जात॥
बिन औसर न सुहाइ तन, चदन त्यावै मार।
औसर की नीकी लगै, दीती सौ सौ गार॥
बित-चोरन चित-चोर मैं ब्योरौ इतनौ आइ।
इन्हैं पाइकै मारियै, उनके लगियै पाइ॥
समै पाइकै लगत है, नीचहु करत गुमान।
पाय अमर-पख दुजनि लौ काग चहै सनमान॥
झूठे ही जर जात हैं, याके साखी पाच।
देखी कै काहू सुनी, लगत साच कौ आंच॥
रे कुचील तन तेलिया अपनौ मुख तौ हेर।
सुमननि बासे तिलन कौ काहे डारत पेर॥
रवि, ससि, अवनि सघन पवन, और अगिन की ज्वाल।
ऊंच नीच घर सम लखै, दुबिधा तज कै लाल॥
होत दूबरौ कूबरौ, ससि तैं हर पखवार।
तो ही सौ हित राखही, दृग चकोर रिझवार॥
हरी करत है पुहुमि सब, घन तू रस बरसाइ।
आक जवासे कौ अरै, काहे देत जराइ॥
तोय मोल मैं देत हौ, छीरहि सरस बढ़ाइ।
आच न लागन देत वह, आप पहिल जर जाइ॥
अरे निरदई मालिया, फूले सुमननि तोर।
नैक कसक कर हेर तौ, प्रीत डार की ओर॥

प्यास सहत पी सकत नहि, औघट घाटनि पान।
गज की गरुवाई परी, गज ही के गर आन।।
औघट घाट पखेरुवा, पीवत निरमल नीर।
गज गरुवाई तैं फिरैं, प्यासे सागर तीर।।
धरि सौनै कै पीजरा, राखौ अमृत पिवाइ।
बिष कौ कीरा रहत है, बिष ही मे सुख पाइ।।
कीलत काठ कठोर क्यौं, होत कमल मे बद।
आई मो मनभवर की, इतनी बात पसद।।
सब ही कौ पोसत रहै, अमृत-कला सरसाइ।
ससि चकोर के दरद कौ, अजौ सकत नहि पाइ।।
समय पाइकै रूप धन, मिलत सबैई आइ।
विलस न जानै याद जो, समय गए पछताइ।।
बैठत इक पग ध्यान धरि, मीनन को दुख देत।
वक मुख कारे हो गए, रसनिधि या ही हेत।।
अमित अथाहै हो भरै, जदपि समुद अभिराम।
कौन काम के जौ न तुम, आए प्यासन काम।।
ससि निरमोही हौ भले, भोर भयै घर जाव।
दिनकर बिरह चकोर कौ, मेट न सकिहै दाव।।
तेरी है या साहिबी, बार पार सब ठौर।
रसनिधि कौ निसतार लै, तु ही प्रभू कर गौर।।
रोम रोम जो अघ भर्यो, पतितन मे सिरनाम।
रसनिधि वाहि निबाहिबौ, प्रभु तेरोई काम।।
गंग प्रगट जिहि चरन तै, पावन जग कौ कीन।
तिहि चरनन कौ आसरौ, आइ रसिकनिधि लीन।।

मधुसूदन यह बिरह अरु, अरि नित माड़त रार ।
करुनानिधि अब यह समै, अपनौ बिरद विचार ।।
लखि औगुन तन आपनै, भूल सबै सुधि जाइ ।
अधम-उधारन बिरद तुव, रसनिधि सुमिर मुहाइ ।।
भगतन तौ तुम तारिहौ, अधम कौन पै जांइ ।
अधम-उधारन तुम बिना, उन्है ठौर कहुं नाइ ।।
गिनति न मेरे अघन की, गिनती नही बढाइ ।
असरन-सरन कहाइ, प्रभु मत मोहि सरन छुड़ाइ ।।
मै गीधौ लखि गीधगति, गीधे गीधहि जान ।
गीधे पतितहि तारिहौ, तब बदिहौ प्रभु वान ।।
गह्यौ ग्राह गज जिहि समै, पहुंचत लगी न वार ।
और कौन ऐसे समै, सकट काटनहार ।।
तुम जगदीस दयाल प्रभु हौ, सब ही सुनु चेत ।
दीनन भूलत हौ हिए, दीनबधु केहि हेत ।।

भूषण

छूटत कमान और तीर गोली बानन के ।
मुसकिल होत मुरचान हू की ओट मे ।।
ताही समय सिवराज हुकुम के हल्ला कियो ।
दावा बाधि परा हल्ला वीरभटजोट मै ।।
भूषन भनत तेरी हिम्मत कहां लौ कहौ ।
किमति इहा लगि है जाकी भट झोट मै ।।
ताव दै दै मूछन कगूरन पै पाव दै दै ।
अरिमुख घाव दै दै कूदि परे कोट मै ।।

केतिक देस दल्यो दल के बल ।
दच्छिन चगुल चाप कै चाख्यो ।।
रूप गुमान हर्‌यौ गुजरात को ।
सूरति को रस चूसि कै नाख्यो ।।
पजन पेलि मलिच्छ मल्यो सब ।
सोइ बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो ।।
सो रग है सिवराज बली जेहि ।
नैरंग मै रग एक न राख्यो ।।

गरुड को दावा सदा नाग के समूह पर ।
दावा नागजूह पर सिह सिरताज को ।।
दावा पुरुहूत को पहारन के कुल पर ।
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ।।
भूषन अखंड नवखड महिमंडल मै ।
तम पर दावा रविकिरनसमाज को ।।

पूरब पछाह देस दच्छिन ते उत्तर लौं।
जहां पादसाही तहा दावा सिवराज को ॥

बारिधि के कुंभभव घन बन दावानल।
तरुन तिमिर हू के किरन समाज हो ॥
कस के कन्हैया कामधेनु हू के कटकाल।
कैटभ के कालिका विहगम के बाज हो ॥
भूषन भनत जग जालिम के सचीपति।
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हो ॥
रावन के राम कार्तबीज के परसुराम ॥
दिल्लीपति दिग्गज के सेरे सिवराज हो ॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी।
डग्ग नाचे डग्ग पर रुड मुड फरके ॥
भूषन भनत बाजे जीति के नगारे भारे।
सारे करनाटी भूप सिहल को सरके ॥
मारे सुनि सुभट पनारे भारे उद्भट।
तारे लागे फिर न सितारे गढ घर के ॥
बीजापुर बीरन के गोलकुडा धीरन के।
दिल्ली उर मीरन के दाडिम से दरके ॥

बेद रखे बिदित पुरान राखे सारयुत।
रामनाम राख्यो अति रसना सुघर मैं ॥
हिदुनकी चोटी, रोटी राखी है सिपाहिन की।
कांधे पै जनेऊ राख्यौ माला राखी गर मैं ॥

मीड़ि राखै मुगल मरोड़ि राखै पातसाह।
बैरि पीसि राखै बरदान राख्यो कर मैं ।।
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज ।
देव राखे देवल सुधर्म राख्यो घर मैं ।।

निकसत म्यान ते मयूखे प्रलै भानु कैसी ।
फारे तम तोम से गयदन के जाल को ।।
लागति लपटि कठ बैरिन के नागिनी सी ।
रुद्रहि रिझावै दै दै मुडन की माल को ।।
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली ।
कहा लौ बखान करौ तेरी करवाल को ।।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि ।
कालिकासी किलकि कलेऊ देति काल को ।।

भुज भुजगेस की ह्वै सगिनी भुजगिनी सी ।
खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के ।।
बख्तर पाखरिन बीच धसि जाति मीन ।
पैरि पार जात परवाह ज्यो जलन के ।।
रैया राय चपति को छत्रसाल महाराज ।
भूषन सकत को बखानि यो बलन के ।।
पच्छी परछीने ऐसे परे पर छीने वीर ।
तेरी बरछी ने बर छीने है खलन के ।।

रैया राय चंपति को चढो छत्रसालसिंह ।
भूषन भनत समसेर जोम जमकै ।।

भादो की घटा सी उठी गरदै गगन घेरै ।
खेलै समसेरै फेरै दामिनि सी दमकै ।।
खान उमरावन के आन राजा रावन के ।
सुनि सुनि उर लागै घन कैसी घमकै ।।
तिरिया बगारन की अरि के अगारन की ।
नाघती पगारन नगारन की धमकै ।।

राजत अखड तेज छाजत सुजस बडो ।
गाजत गयद दिग्गजन हिय साल को ।।
जाहि के प्रताप सो मलीन आफताब होत ।
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को ।।
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें ।
भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को ।।
और राव राजा एक मन मे न ल्याऊ अब ।
साहू को सराहौ कै सराहौ छत्रसाल को ।।

——

पद्माकर

हिम्मतबहादुरबिरुदावली

तहं दुहुं दल उमडे घन सम घुमडे झुकि झुकि झुमड़े जोर भरे ।
ताकि तबल तमके हिम्मत हंके बीर बमके रन उभरे ।।
बोलत रन करखा बाढत हर्षा बानन वर्षा होन लगी ।
उळछारत सेलै अरिगन ठेलै सीनन पेलै रारि जगी ।।

बंदीजन बुल्ले रोसन खुल्ले डगडग दुल्ले कादर है ।
धौसा धुन गज्जै दुहुँ दिसि बज्जे सुनि धुनि लज्जै बादर हैं ।।
निसान सु फहरे इत उत छहरैं पावक लहरैं सी लगती ।
छुवती नकि नाका मनहु सलाका धुजा पताका नभ जगती ।।

अत्रनिकी मूकैं घालि न चूकैं दै दै कूकैं कूदि परे ।
गहि गरदन पटकैं नेकु न भटकै झुकि झुकि झटकैं उमंग भरे ।।
रन करत अड़गे सुभट उमगे बैरिन वंगे करि झपटैं ।
सीसन की टक्कर लेत उटक्कर घालत छक्कर लरि लपटैं ।।

तहं हत्थाहत्थी मत्थामत्थी लत्थालत्थी माचि रही ।
काटै कर कटकट विकट सुभट भट कासे खटपट जात कही ।।
गहि कठिन कटारी पेलत न्यारी रुधिर पनारी बमकि बहै ।
खंजर खिल खनकैं ठेलत ठनकैं तन सन सनिकैं हिलगि रहै ।।

एकै गहि भाले करि मुख लाले सुभट उताले घालत हैं ।
तोरत रिपु ताले आले आले रुधिर पनाले चालत हैं ।।
झारत असि जुरि जे वीरन उरजे पुरजे काटि करैं ।
हथियारन सूटैं नेकु न हूटैं खलदल कूटैं लपटि लरैं ।।

गहि गहि हय झटकै दिशि दिशि फटकै भूपर पटकै नहि लटकै ।
पाइन सों पीसै अरिगन मीसै जब से दीसै नहि भटकै ॥
प्रति गजनि उठेलै दतन ठेलै ह्वै भट भेलै जोर करै ।
जुत्थन सों जूटै नेकु न हूटै फिर फिर छूटै फेर लरै ॥

तहं अर्जुन बका करि करि हंका दुरद निसका हूलत है ।
बैठो जु किलाएं मुच्छन ताएं रन छबि छाए फूलत है ॥
झारत हथियारन मारत बारन तन तरवारन लगत हंसै ।
पैरत भालन कौ सर जालन को असि घालन को धमकि धसै ॥

किलकिलकत चंडी लहि निज खंडी उमडि उमडी हरषति है ।
सग लै वैतालनि दै दै तालनि मज्जा जालनि करषति है ॥
जुग्गिननि जमाती हिय हरषाती षद षद खाती मासन को ।
रुधिरन सौ भरि भरि खप्पर धरि धरि नचती करि करि हासन को ॥

सुभ सुख समूह फतूह लिय हिय मजु मोदन सो भरै ।
काली कपाली निस दिना नित नृपति की रक्षा करै ॥
पृथुरित नित्त सुवित्त है जग जित्ति कित्ति अनूप की ।
वर बरनिये विरुदावली हिम्मतवहादुर भूप की ॥

सबलसिंह चौहान

अभिमन्यु-वध

उत सेना सरदार सब, इत अर्जुनसुत एक।
सबै वीर घायल किये, पारथसुत रखि टेक ।।

कुरुपति तबहि क्रोध अति कीन्हे। मार मार करि आज्ञा दीन्हे ।।
सुनि कै कर्ण बाण कर लीन्हे। पढि कै मत्र फूक सर दीन्हे ।।
जो शर परशुराम ते पाए। क्रोधित ह्वै सो बाण चलाए ।।
दै कै हाक बाण तब छाटे। करते धनुप कुवर को काटे ।।
टूटे धनुष कुंवर तब डारे। कर गहि शक्ति तबहि परिहारे ।।
तुम हम ऊपर बाणहि छाटे। बीचहि कर्ण धनुष मम काटे ।।
यह कहि कुवर शक्ति परिहारे। कर्णहि हृदय ताकि कै मारे ।।
मूर्छित किए कर्ण ते छत्री। अर्जुनपुत्र महाबल अत्री ।।
बिनु धनुपाणि कुवर को पाए। घेरि बीर सब निकटहि आए ।।

बालक घेरेउ आइ सब, मारत अस्त्र अनेक।
जिमि मृगगण के यूथ मह, डरत न केहरि एक ।।

लै कै शूल कियो परिहारा। वीर अनेक खेत मह मारा ।।
जूझी अनी भभरि कै भागे। हसि कै द्रोण कहन अस लागे ।।
धन्य धन्य अभिमनु गुणसागर। सब छत्रिन मह परम उजागर ।।
धन्य सुभद्रा जग मे जाई। ऐसे बीर जठर जनमाई ।।
धन्य धन्य जग मे पितु पारथ। अभिमनु धन्य धन्य पुरुषारथ ।।
एक बीर लाखन दल मारे। अरु अनेक राजा सहारे ।।
धनु काटे शंका नहि मन मे। रुधिरप्रवाह चलत सब तन मे ।।

यहि अंतर बोले कुरुराजा । धनुष नाहि भाजत केहि काजा ।।
एक बीर को सबै डरत हैं । घेरि क्यो न रथ धाइ धरत है ।।
बालक देखि करी यह करणी । सेना जूझि परी सब धरणी ।।

दुर्योधन या बिधि कह्यो, कर्ण द्रोण सो बैन ।
बालक सब सेना बधी, तुम सब देखत नैन ।।

यह कहिकै दुर्योधन आए । सबै वीर आगे ह्वै धाए ।।
क्षत्रिन घेरो बालक रन मे । मानहु रवि आच्छादित घन मे ।।
लै कै खंग फरी गहि हाथा । काटो बहु छत्रिन कै माथा ।।
अभिमनु धाइ खग परिहारा । सन्मुख जेहि पावै तेहि मारा ।।
भूरिश्रवा बाण दस छाटे । कुवर हाथ को खगहि काटे ।।
तीनि बाण सर रथ उर मारे । आठ बाण ते अश्व सहारे ।।
सारथि जूझि गिरउ मैदाना । अभिमनु वीर चित्त अनुमाना ।।
यहि अतर सेना सब धाए । मार मार करि मारन धाए ।।
रथ को खैचि कुवर करि लीन्हे । ताते मार भयानक कीन्हे ।।
अभिमनु कोपि खंभ परिहारे । इक इक घाव वीर सब मारे ।।

अर्जुनसुत इमि मार किय, महावीर परचड ।
रूप भयानक देखियत, जिमि लीन्हे यमदड ।।

क्रोधित होइ चहू दिशि धाए । मारि सबै सेना बिचलाए ।।
यहि बिधि किए भयानक भारत । साहस धन्य धन्य पुरुषारथ ।
ऐसी मार खग सो कीन्हे । दश सहस्र राजा वधि लीन्हे ।।
मारि सबै राजा बिचलाए । कर लै गदा कुरूपति धाए ।।
शत बांधव नृप सगहि आए । अरु अनेक राजा मिलि धाए ।।
चहुं दिशि महारथी सब घेरे । क्षत्री सबै बीर बहुतेरे ।।

नाना अस्त्र सबहि परिहारे । निकट न जाहि दूर ते मारे ।।
दुर्योधन कह देखन पाए । गहे खग अभिमनु तब आए ।।
जुरे बीर क्षत्री बहुतेरे । खगघात ते बधेउ घनेरे ।।
जब नरेश के निकटहि आए । द्रोण गुरु दस बाण चलाए ।।

गुरू द्रोण अति क्रोध करि, मारे बाण अचूक ।
कुवर हाथ को खग तब, काटि कियौ दुइ टूक ।।

खग कटे अभिमनु भा कैसे । मणि बिन फणिक बिकल हुव जैसे ।।
क्रोधित भए सुभद्रानंदन । चरणघात सो तोरेउ स्यदन ।।
रथ ते कूद कुंवर कर लीन्हे । चाक उठाय रणहि शुभ कीन्हें ।।
चाक कुवर कर शोभित कैसे । हरि कर चक्र सुदर्शन जैसे ।।
रुधिर प्रवाह चलत सब अगा । महाशूर मन नेक न भगा ।।
गहिकै चाक चहू दिशि धावै । जेहि पावै तेहि मारि गिरावै ।।
दुर्योधन पर चाक चलाए । गदा कोपि कुरुनाथ बचाए ।।
क्षत्री घेरि लगे शर मारन । जुरे आइ सब तह हथियारन ।।
दुशासनसुत गदा प्रहारे । अभिमनु के सिर ऊपर मारे ।।
जूझे कुंवर परे तब धरणी । जग मह रही सदा यह करणी ।।

धन्य धन्य सब कोउ कहै, कुंवर रहो मैदान ।
पै गुरुद्रोण मलीन मुख, कहै बचन परमान ।।

गुरू द्रोण यहि भांति बखाने । हर्षि नरेश सबै सुख माने ।
अभिमनुमरण सुनेगे पारथ । करिहै महा भयानक भारत ।।
इद्र वरुण यम होइ सहायक । कोइ नहिं अर्जुन जीतन लायक ।।
भीमादिक यह युद्ध विचारे । पै जयदर्थ सबहि शर मारे ।।
क्रोधित भए पाडु के नंदन । फैको सिधुराज के स्यंदन ।।

गिरे दूरि उठि निकटहि आए। भीम उपर शत वाण चलाए।।
धर्मराज तब कीन्ह दरेरी। पै जयदर्थ मारि मुख फेरी।।
लै अनीक तब कुरुपति धाए। जह जयदर्थ लरत तह आए।।
कौरव दल जयशख बजाए। अभिमनु गिरे भूप सुनि पाए।।
धर्मराज सुनि मौनहि गहेऊ। संध्या भई युद्ध तब रहेऊ।।

कुरुपाडव फिरि कै चले, भयो युद्ध को शेष।
भीमादिक क्षत्रिय सबै, रोवत धर्मनरेश।।

——

वृंद

श्री गुरुनाथ प्रताप तै, होत मनोरथ सिद्ध ।
घन तै ज्यौ तरु बेलि दल, फूल फलन की वृद्धि ।।
नीकी पै फीकी लगै, बिनु अवसर की बात ।
जैसे बरनत युद्ध मैं, रस सिंगार न सुहात ।।
रागी अवगुन ना गनै, यहै जगत की चाल ।
देखा सब ही श्याम को, कहत बाल सब लाल ।।
जो जाकौ प्यारो लगै, सो तिहि करत बखान ।
जैसे विष को विष-भखी, मानत अमृत समान ।।
जो जा कौ गुन जानही, सो तिहि आदर देत ।
कोकिल अंबहि लेत है, काग निबौरी लेत ।।
जाही तै कछु पाइयै, करियै ताकी आस ।
रीते सरवर पै गए, कैसे बुझत पियास ।।
रस अनरस समझै न कछु, पढै प्रेम की गाथ ।
बीछू मत्र न जानई, सांप पिटारे हाथ ।।
अनमिलती जोई करत, ता ही को उपहास ।
जैसै जोगी जोग मै, करत भोग की आस ।।
गुरुता लघुता पुरुष की, आस्रय बस ते होय ।
करी बृंद मै विंध्य सौ, दर्पन मे लघु सोय ।।
उपकारी उपकार जग, सब सो करत प्रकास ।
ज्यो कटु मधुरे तरु मलय, मलयज करत सुबास ।।
हरि-रस परिहरि विषय-रस, सग्रह करत अयान ।
जैसे कोऊ करत है, छाड़ि सुधा विषपान ।।

कुल मारग छौडै न कोऊ, होहि वृद्धि कै हानि ।
गज इक मारत दूसरो, चढत महावत आनि ।।
ह्वै सहाय हित हू करै, तऊ दुष्ट दुख देत ।
जैसे पावक पवन कौ, मिलै जरायै लेत ।।
अपनी अपनी ठौर पर, सोभा लहत विसेख ।
चरन महावर ही भलौ, नैनन अजन-रेख ।।
नहि इलाज देख्यौ सुन्यौ, जा सों मिटत सुभाव ।
मधुपुट कोटिक देत तऊ, विष न तजत विषभाव ।।
जाकौ जासो मन लग्यो, सो तिहिं आवै धाय ।
भाल भस्म विष मुड शिव, तौ ऊ शिवा सहाय ।।
प्रेम निबाहन कठिन है, समझ कीजियौ कोय ।
भांग भखन है सुगम पै, लहर कठिन ही होय ।।
कोउ बिन देखे बिन सुनै, कैसे कहै विचार ।
कूपभेख जाने कहा, सागर कौ विस्तार ।।
जैसो बंधन प्रेम कौ, तैसो बंध न और ।
काठहि भेदै कमल कौ, छेद न निकसै भौर ।।
प्रेम पगत बरजी न क्यौ, अब बरजत बेकाज ।
रोम रोम बिष रमि रह्यौ,नाहि न बनत इलाज ।।
फेर न ह्वैहै कपट सों, जो कीजे ब्यौपार ।
जैसे हाडी काठ की, चढ़ै न दूजी बार ।।
आप बुरे जग है बुरौ, भलौ भले जग जानि ।
तजत बहेरा छांह सब, गहत आम्ब की आनि ।।
सौ जु सयाने एक मत, यहै कहावत सांच ।
कांचहि पांच कहै न कोउ, पाचहि कहै न कांच ।।

भले बुरे सब एक से, जब लौ बोलत नाहि ।
जान परतु है काक पिक, ऋतु बसत के माहि ।।
भले बुरे जहं एक से, तहां न बसिए जाय ।
ज्यौ अन्यायीपुर बिकै, खर गुर एकै भाय ।।
अति अनीति लहिये न धन, जो प्यारौ मन होय ।
पाए सोने की छुरी, पेट न मारै कोय ।।
हित हू की कहिये न तिहि, जो नर होय अबोध ।
ज्यौ नकटे को आरसी, होत दिखाए क्रोध ।।
अति हठ मत कर हठ बढै, बात न करिहै कोय ।
ज्यौ ज्यौ भीजे कामरी, त्यौ त्यौ भारी होय ।।
बात कहन की रीति मे, है अतर अधिकाय ।
एक बचन तै रिस बढ़ै, एक बचन तै जाय ।।
एक सदा निबहै नही, जनि पछतावहु कोय ।
दुरजोधन अति मान तै, भए निधन कुल खोय ।।
मूढ तहा ही मानिए, जहा न पडित होय ।
दीपक की रवि के उदै, बात न पूछे कोय ।।
बिन स्वारथ कैसे सहै, कोऊ करुए बैन ।
लात खाय पुचकारिए, होय दुधारू धैन ।।
सज्जन तजत न सजनता, कीन्हेहु दोष अपार ।
ज्यौ चदन छेदे तऊ, सुरभित करहु कुठार ।।
दुष्ट न छाड़ै दुष्टता, पोखै राखै ओट ।
सरप हि केतौ हित करौ, चुपै चलावै चोट ।।
जैसी हो भवितव्यता, तैसी बुद्धि प्रकास ।
सीता हरबे तै भयौ, रावनकुल को नास ।।

निहचै भावी कौ कहौ, प्रतीकार जौ होइ।
तौ नल से हरचंद से, विपत न भरते कोइ ॥
कछु सहय न चल सकै, होनहार के पास।
भीष्म युधिष्ठिर से तहा, भो कुरबस-बिनास ॥
अति ही सरल न हूजिये, देखौ ज्यो बनराय।
सीधे सीधे छेदिये, बाकौ तरु बच जाय ॥
बहुतन को न विरोधिये, निबल जानि बलवान।
मिल भख जाहि पिपीलिका, नागहि नगके मान ॥
सुजन कुसगति सग तैं, सज्जनता न तजत।
ज्यौ भुजग गन सग तऊ, चदन विष न धरत ॥
ऊचे बैठे ना लहै, गुन बिन बड़पन कोइ।
बैठो देवल सिखर पर, बायस गरुड न होइ ॥
जे पर ते पर यह समझ, अपनो होय न कोय।
पालै पोषै काग तऊ, पिक-सुत काग न होय ॥
भेष बनावै सूर कौ, कायर सूर न होय।
खाल उढावै सिह की, स्यार सिह नहि होय ॥
सब तैं लघु है मागिबौ, जामे फेर न फार।
बलि पै जाचत ही भए, वामनतन करतार ॥
नाम भलौ होत न भलौ, भलौ भाग जिहि भाल।
लच्छि नाम मागत फिरै, भूखो नाम भुवाल ॥
देवन हू सो देव प्रभु, कहा सुरेस नरेस।
कीनौ मीत धनेस तऊ, पहरै चर्म महेस ॥
छल वल समय विचारि कै, अरि हनिये अनयास।
कियौ अकेले द्रोणसुत, निसि पांडवकुल नास ॥

रसिकसभा मे निरस नर, होत होत रस हानि ।
जैसे भैंसा ताल परि, मलिन करत जल आनि ।।
होय पहुच जाकी जिती, तेतो करत प्रकास ।
रवि ज्यौ कैसे करि सकै, दीपक तम को नास ।।
जहा चतुर नाहि न तहां, मूढनि सो व्यवहार ।
बर पीपर बिन हो रहे, ज्यो एरड अधिकार ।।
होत न कारज मो बिना, यह जु कहै सु अयान ।
जहां न कुक्कुट शब्द तह, होत न कहा बिहान ।।
दुष्ट निकट बसिए नही, बस न कीजिए बात ।
कदली बेर प्रसग तै, छिदै कटकन पात ।।
तिनके कारज होत है, जिनके बड़े सहाय ।
कृष्ण पक्ष पांडव जयी, कौरव गए बिलाय ।।
अरि छोटौ गनिए नही, जाते होत बिगार ।
तिन समूह को छिनक मैं, जारत तनक अगार ।।
वीर पराक्रम तै करै, भुव-मडल को राज ।
जोरावर या तै करत, बन अपनौ मृगराज ।।
जोरावर अरि मारिये, बुधबल किये उपाय ।
कालयमन कौ ज्यौ किसन, पट मुचुकुद उठाय ।।
नृप प्रताप तै देस मे, रहे दुष्ट नहि कोय ।
प्रगटत तेज दिनेस कौ, तहां तिमिर नहि होय ।।
बड़े अनीति करै तऊ, बुरो कहै नहि कोय ।
बालि हत्यो अपराध बिनु, ताहि भजे सब कोय ।।
लघु मिलिए गरुवे जदपि, बडे कछू ले ताहि ।
गिरिवर आने कपिन के, जौ मकरालय माहि ।।

छल-बल धर्म अधर्म करि, अरि साधिए अभीति ।
भारत मे अर्जुन किसन, कहा करी युध रीति ।।
सुख दिखाय दुख दीजियै, खल सो लरियै नाहि ।
जो गुर दीने ही मरै, क्यो विष दीजै ताहि ।।
एक अनीति करै लहै, सगी दुख सुख नाहि ।
भीम कीचकन कौ दिए, मारि चिता के माहि ।।
बड़े बिपत मे हू करै, भले बिराने काम ।
किय विराटतनु की विजय, अर्जुर करि संग्राम ।।
बड़े बड़ै हू काम करि, आप सिहावत नाहि ।
जयजस उत्तर को दियो, पथ बिराट के माहि ।।
चपचप करती ना रहै, नर लबार की जीह ।
चलहल दल जैसे चपल, चलत रहै निस दीह ।।
जैसो प्रभु तैसो अनुग, होय सु बात प्रमान ।
बामन कर की लष्टिका, बढ़ी चढी असमान ।।
हार बडे की जीत है, निबल न मानै तास ।
विमुख होय हरि ज्यो कियो, कालयमल कौ नास ।।
होय भले चाकरन तै, भलो धनी को काम ।
ज्यौ अगद हनुमान तै, सीता पाई राम ।।
सबको समै बिनास मे, उपजति मति विपरीति ।
रघुपति मार्यो लकपति,जो हरि लै गयो सीति ।।
प्रेम नेम के पथ कौ, है कछु अद्भुत रूप ।
पिय हिय लागै लगत ज्यौ, सरद जौन सी धूप ।।
दुखदाई सोइ देत सुख, सुखदाई संग जात ।
घट जल भीजे चीरकौ, लागि लूअ सियरात ।।

रहै प्रजाधन यत्न सौ, जह बाकी तरवार ।
सो फल कोउ न लै सकै, जहा कटीली डार ॥
बिना प्रयोजन भूलिहू, उठिये नाही ठाट ।
जैबौ नहि जा गाव कौ, ताकी पूछ न बाट ॥
जो कहियै सो कीजियै, पहिलै करि निर्धार ।
पानी पी घर पूछबौ, नाहि न भलौ बिचार ॥
अरिहू बूझै मत्र कौ, कहिये साच सुनाय ।
ज्यौ भीषम पाडवन कौ, दीनौ मरन बताय ॥
नीचहु उत्तम सग मिलि, उत्तम ही ह्वै जाय ।
गग सग जल निद्य हू, गगोदक के भाय ॥
गुन सनेह जुत होतु है, ताही की छबि होत ।
गुन सनेह के दीप की, जैसे जोति उदोत ॥
रस की कथा सुनी न तिहि, कूर कथा की चाहि ।
जिन दाखै चाखी नही, मिष्ट निबौरी ताहि ॥
अति उदारता बडेन की, कह लौ बरनै कोय ।
चातक जाचै तनिक धन, बरस भरै घन तोय ॥
औसर बीते जतन कौ, करिबौ नहि अभिराम ।
जैसे पानी बह गए, सेतुबध किहि काम ॥
करै अनादर गुननि कौ, ताहि सभा छबि जाय ।
गजकपोल शोभा मिटत, ज्यौ अलि देत उड़ाय ॥
मीठी कोऊ बस्तु नही, मीठी जाकी चाह ।
अमली मिसरी छाड़ि कै, आफू खातु सराहि ॥
निहचै कारन बिपत कौ, किए प्रीति अरि सग ।
मृग के सुख मृगराज को, होत कबहु अगभग ॥

ताकौ बुरौ न ताकियै, जासौ जग व्यौसाइ ।
छाह फूल फल देत तरु, क्यौ तिहि कटन कराइ ।।
दुष्ट न छाड़ै दुष्टता, बडी ठौर हू पाय ।
जैसे तजत न श्यामता, बिष शिवकंठ बसाय ।।
छोटे अरि कौ साधिये, छोटो करि उपचार ।
मरे न मूसा सिह तैं, मारै ताहि मंजार ।।
बड़े बडे सो रिस करै, छोटे सों न रिसाय ।
तरु कठोर तोरै पवन, कोमल तृन बच जाय ।।
सेवक सोई जानियै, रहै बिपति मे सग ।
तन छाया ज्यौ धूप मे, रहै साथ इक रंग ।।
अंतर तनिक न राखियै, जहां प्रीति बिवहार ।
उर सौ उर लागै न तहं, जहा रहतु है हार ।।
निरखत पलक न मारियै, सज्जन मुख की ओर ।
उदय अस्त लौ एक टक, चितवत चद चकोर ।।

——

सूदन

सुजान-चरित्र

बजी चारिहू ओर ते टापबाजी । मनौ मेह आसाढ की बुद गाजी ।।
पुकारै दुहू ओर के बीर हा हा । करी भौह बाकी चढाई सु वाहा ।।
छुटी बान कम्मान दम्मान भारी । किहू भाल भाले बरच्छी संभारी ।।
इतै जट्ट जुट्टे उतै साहि सेना । मिलै जुद्ध कौ उद्धकै कुद्ध नैना ।।
कहूं चाप टकार हकार पारी । कहूं हूक बदूक मे ज्वाल झारी ।।
कहूं लैस कत्ती धरत्ती घुमाई । कहूं सैल की रेल हत्थौ चलाई ।।
तहा आपने आपने हत्थ किन्ने । तिन्है देखिकै अबरी मोद भिन्ने ।।
टुटे सार सनाह झन्नाहटे सो । परै छूटिकै भूमि खन्नाहटे सो ।।
भुसडीनु फुट्टे मही पिट्टि लुट्टे । छरौ खाइ हुट्टे सरौ फेरि जुट्टे ।।
किते रत्त मत्ते उमत्ते घुमत्ते । तुरत्ते उठे फेरि लै हत्थ कत्ते ।।
लरत्ते परत्ते बदक्सी उमडे । दिसा पुव्ब के से जलद्दा घुमडे ।।
लखै यो बदक्सी चमू माहि पैठे । धए सूर सूरज्ज सव्बै इकैठे ।
तहां यों घमडी गहै सैल धायौ । मनौ द्रोनको पुत्त है छोह छायौ ।।
किधौ पूत जमदग्नि को जग रूठचौ । बदक्सी सहसबाहु पै धाउ बैठचो ।।
हनै सैल सौ जाहि भू मे पटक्कै । सहसबाहु की सी भुजा लै कटक्कै ।।
लखै त्यो बदक्सी भरे जा अचभे । लिखे चित्र के से रहे घान थभे ।।
हुती एक पै त्यार बंदूक त्यौ ही । दई फूक कै धूक सुठ भेर ज्यो ही ।।
लगी आन नैजाब औ जीभ खडी । धुक्यौ बाजि तै त्यौ धरा पै घमडी ।।
गिरचौ देखि कै शत्रु सव्बै सपट्टे । लिए आपने आपने सस्त्र कट्टे ।।
पलक लागतै बाजि चढचौ घमडी । ललक्कारि कै तेग की जंग मडी ।।
रंग्यौ रत्त सू हत्थ समसेर सोहै । मनौ देह धारै रसं जान को है ।।

फुटे जावकै जीभ यो कढ्ढि आई । तहा देव नरसिंह की मोह पाई ॥
गहे तेग नंगी करी जग चगी । हनी साहि की सैन यौं श्रौनरगी ॥
तहा नंद बदनेस कै दृष्टि दीनी । उदैभान की सी प्रभा अग भीनी ॥
तुरी तेज कैसे हथी हत्थ लिन्नी । हियें देख हरिदेव की याद किन्नी ॥
मृगाधीस जैसे करी जूह दट्टे । खगाधीस ज्यौ ब्यालजालै झपट्टे ॥

× × ×

पुनि भोर भए बहु तोप दगी । इत उत्त घमाघम हौन लगी ॥
छिपि भान भयौ निसि फैल गई । दुहु ओर झरी झर लोइ गई ॥
पुनि ऊगत सूर मरत्थ गयौ । उनि साहि कही रहि जाय लयौ ॥
गज ग्यारह ऊट तुरग घनै । हनि लावत भौ मजबूत मनै ॥
पुनि कीनिय दौर दिलीसदल । गढ बल्लम पूरब ओर भल ॥
दस खेत प्रमान रहे जब ही । बलिरामहि सूर कह्यौ तब ही ॥
चढि जाइ इन्हे दबटाइ अरे । बढि आवतु है चहुं ओर खरे ॥
यह आयसु सिह सुजान दिय । उठियौ बलिराम हरष्षि हिय ॥
असवार भयौ गढ तै कढिय । जिमि सिह छवा बन ते बढिय ॥
तब छतरसाल सतोष हुवौ । अस राम बली अस्वार हुवौ ॥
पुनि जोधहुसिह सवार हुव । गढ बैरि रहा तिहि अग्ग हुव ॥
अरु पाषरहू लछिमन्न महा । हय हक धमकिय जोर गहा ॥
सत अर्ध सवारनु लै दबट्यौ । झपट्यौ अति साहि दलै लवठ्यौ ॥
बस पाच बंदूक तहा धमकी । पुनि साग कि सैल असै झमकी ॥
उतहू सरदार महा मनकौ । किय आनि असीलनुकौ झनकौ ॥
इततै बलिराम उठाइ हयं । कर सेल घुमाइ हरीफ हय ॥
उनहू अति झारिय रोस सन । बिच ही गहि काटिय सेल रन ॥
लखि जोधहुसिंह उठाइ पर । हिय सेल हयद्वय मीर मर ॥

हय तै सु गिरचौ वह भुम्मि भरं। बलिराम दई एक तेग गरं॥
हनि तासु सिरै बलिराम बली। तिहि सैनहि धाइय देतु झली॥
सब ही भट चोटनु देत भये। अपने अपने अरि बाट लिये।
मरते परते भट साहि भजे। रन पाइ बिजय भट सूर गजे॥
बलिराम फिरचौ ढिग सूरज कौ। सु बजाय विजयरन तूरज कौ॥

आधुनिक युग
बहुमुखी अनेक शाखाएं

हरिश्चंद्र

गंगावर्णन

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति।
बिच बिच छहरति बूंद मध्य मुक्तामनि पोहति॥
लोल लहर लहि पवन एक पै इक इमि आवत।
जिमि नरगन मन बिबिध मनोरथ करत मिटावत॥
सुभग स्वर्गसोपानसरिस सबके मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिबिध भय दूर मिटावत॥
श्री हरिपद नख चंद्रकांतमनिद्रवित सुधारस।
ब्रह्मकमंडलमंडन भवखंडन सुरसरबस॥
शिवसिर मालतिमाल भगीरथनृपति पुण्यफल।
ऐरावत गज गिरिपति हिम नग कंठहार कल॥
सगरसुवन सठ सहस परस जलमात्र उधारन।
अगनित धारा रूप धारि सागर संचारन॥
कासी कहं प्रिय जानि ललकि भेट्यो जग धाई।
सपनेहू नहिं तजी रही अंकम लपटाई॥
कहूँ बंधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत।
कहुं छतरी कहुं मढ़ी बढ़ी मन मोहत जोहत॥
धवल धाम चहुं ओर फरहरत धुजा पताका।
घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका॥
मधुरी नौबत बजत कहूं नारी नर गावत।
बेद पढ़त कहुं द्विज कहुं जोगी ध्यान लगावत॥

कहु सुदरी नहान नीर करजुगल उछारत ।
जुग अबुज मिलि मुक्त गुच्छ मनु सुच्छ निकारत ।।
धोवत सुदरि बदन करन अति ही छबि पावत ।
बारिधि नाते ससि कलक मनु कमल मिटावत ।।
सुदरि ससिमुख नीरमध्य इमि सुदर सोहत ।
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ।।
दीठि जही जहं जात रहत तितही ठहराई ।
गगा छबि हरिचंद कछू बरनी नहिं जाई ।।

कालिंदी सुषमा

तरनितनूजातट तमाल तरुवर बहु छाए ।
झुके कूल सो जलपरसनहित मनहु सुहाए ।।
किधौ मुकुर मैं लखत उझकि सब निज निज सोभा ।
कै प्रनवत जल जानि परम पावन फललोभा ।।
मनु आतप बारन तीर को सिमिट सबै छाए रहत ।
कै हरिसेवाहित नै रहे निरखि नैन मन मुख लहत ।।
कहू तीर पर कमल अमल सोभित बहु भातिन ।
कहुं सैवालनमध्य कुमुदिनी लहि रहि पातिन ।।
मनु दृग धारि अनेक जमुन निरखत निज सोभा ।
कै उमगे प्रिय प्रिया प्रेम के अनगिन गोभा ।।
कै करिकै कर बहु पीय कों टेरत निज ढिग सोहई ।
कै पूजन को उपचार लै चलति मिलन मन मोहई ।।
कै प्रियपदउपमान जानि एहि निज उर धारत ।
कै मुख करि बहु भृंगन मिस अस्तुति उच्चारत ।।

कै ब्रजतियगनवदनकमल की झलकत झाई ।
कै ब्रज हरिपदपरसहेत कमला बहु आई ।।
कै सात्त्विक अरु अनुराग दोऊ ब्रजमडल बगरे फिरत ।
कै जानि लक्ष्छमी भौन एहि करि सतधा निज जल धरत ।।
तिन पै जेहि छिन चद जोति राका निसि आवति ।
जल मे मिलिकै नभ अवनी लौ तान तनावति ।।
होत मुकुरमय सबै तब उज्जल इक ओभा ।
तन मन नैन जुडात देखि सुदर सो सोभा ।।
सो कौ कवि जौ छवि कहि सकै ता छन जमुनानीर की ।
मिलि अवनि और अबर रहत छवि इसकी नभ तीर की ।।
परत चद्रप्रतिबिंव कहू जलमधि चमकायो ।
लोल लहर लहि नचत कबहुं सोई मन भायो ।।
मनु हरिदरसन हेत चद जल बसत सुहायो ।
कै तरग कर मुकुर लिये सोभित छबि छायो ।।
कै रासरमन मे हरिमुकुटआभा जल दिखरात है ।
कै जलउर हरिमूरति बसति वा प्रतिबिब लखात है ।।
कबहु होत सत चद कबहु प्रगट दुरि भाजत ।
पवन गवन बस बिबरूप जल मे बहु साजत ।।
मनु सीस भरि अनुराग जमुनजल लोटत डोलै ।
कै तरग की डोर हिडोरन करत कलोलै ।।
कै बालगुडी नभ मै उडी सोहत इत उत धावती ।
कै अवगाहत डोलत कोऊ ब्रजरमनी जल आवती ।।
कूजत कहू कलहस कहूं मज्जत पारावत ।
कहुं कारडव उड़त कहू जलकुक्कुट धावत ।।

चक्रवाक कहुं बसत कहूँ बक ध्यान लगावत।
सुक पिक जल कहु पियत कहू भ्रमरावलि गावत॥
कहुं तट पर नाचत मोर बहु रोर बिबिध पच्छी करत।
जलपान न्हान करि सुख भरे शोभा सब जिय धरत॥
कहू बालुका बिमल सिकत कोमल बहु छाई।
उज्जत झलकत रजत सिढी मनु सरस सुहाई॥
पियके आगम हेत पावडे मनहु बिछाए।
रत्नरासि करि चूर कूल मे मनु बगराए॥
मनु मुक्त माग सोभित भरी श्याम नीर चिकरन परसि।
सत गुन छायो कै तीर मै ब्रज निवास लखि हिय हरसि॥

देशभक्त के आंसू

रोवहु सब मिलि कै आवहु भारत भाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥
सब के पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सब के पहिले जेहि सभ्य बिधाता कीनो॥
सब के पहिले जो रूप रग रस भीनो।
सब के पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो॥
अब सब के पीछे सोई परत लखाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥

जह भये शाक्य हरिचद्नरु नहुष ययाती।
जह राम युधिष्ठिर बासुदेव सर्याती॥
जह भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती।

तह रही मूढ़ता कलह अविद्या राती ।।
अब जहं देखहु तह दुखही दुख दिखलाई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।।

लरि वैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी ।
करि कलह बुलाई जवनसैन पुनि भारी ।।
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु बारी ।
छाई अब आलस कुमति कलह अंधियारी ।।
भए अध पगु सब दीन हीन बिलखाई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।।

अगरेज राजसुख साज सजे सब भारी ।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी ।।
ताहु पै महगी काल रोग बिस्तारी ।
दिन दिन दूने दुख ईस देत हा हा री ।।
सब के ऊपर टिक्कस की आफत आई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।।

कोमल भावना

रहै क्यो एक म्यान असि दोय ।
जिन नयनन मे हरि रस छायो तेहि क्यो भावै कोय ।।
जा तन मन मै रमि रहे मोहन तहॉ ज्ञान क्यों आवै ।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्यां को जौ पतियावै ।।
अमृत खाइ अब देखि इनारुनि को मूरख जो भूलै ।
हरीचद व्रज तो कदलीबन काटो तो फिरि फूलै

निराशा

सब भाति दैव प्रतिकूल होइ एहि नासा।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा।।
अब सुखसूरज को उदय नही इत ह्वैहै।
सो दिन फिर इत सपने हू नहिं एहै।।
मगलमय भारतभुव मसान ह्वै जैहै।।
दुख ही दुख करिहै चारहु ओर प्रकासा।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा।।

इत कलह बिरोध सबन मे हिय घर करिहै।
मूरखता को तम चारहु ओर पसरिहै।।
बीरता एकता ममता दूर सिधरिहै।
तजि उद्यम सब ही दासवृत्ति अनुसरिहै।।
ह्वै जैहै चारहु बरन शूद्र बनि दासा।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा।।

ह्वैहै इत के सब भूत पिशाच उपासी।
कोउ बनि जैहै आपहु स्वयप्रकासी।।
नसि जैहै सगरे सत्य धर्म अविनासी।
निज हरि सौ ह्वैहै विमुख भरतभुववासी।।
तजि सुपथ सबहि जन करिहै कुपथबिलासा।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा।।

अपनी वस्तुन कहु लखिहै सबहि पराई।
निज चाल छोड़ गहिहै औरन की धाई।।
तुरकनहित करिहै हिंदूसग लराई।

यवनन के चरनहि रहिहै सीस चढाई ।।
तजि निज कुल करिहैं नीचन सग निवास। ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

रहे हमहु कबहु स्वाधीन आर्य बलधारी ।
यह दैहै जिय सौ सब ही बात विसारी ।।
हरिबिमुख धरम बिनु धनबलहीन दुखारी ।
आलसी मद तनछीन छुधित ससारी ।।
सुख सो सहिहै सिर यवनपादुकात्रासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

सूक्ति–सुमन

प्रारंभ ही नहि विघ्न के भय अधम जन उद्यम सजै ।
पुनि करहि तौ कोउ विघ्न सो डरि मध्य ही मध्यम तजै ।।
धरि लात विघ्न अनेक पै निरभय न उद्यम ते टरै ।
जे पुरुष उत्तम अत मै ते सिद्ध सब कारज करै ।।

का सेसहि नहि भार ? पै धरती देत न डारि ।
कहा दिवसमनि नहि थकत ? पै नहि रुकत बिचारि ।।
सज्जन ताको हित करत जेहि किय अगीकार ।
यहै नेम सुकृतीन को, निज जिय करहु बिचार ।।

जो दूजे को हित करै तौ खोवै निज काज ।
जो खोयो निज काज तौ कौन बात को राज ? ।।
दूजे ही को हित करै तौ वह परबस मूढ ।
कठपुतरी सो स्वाद कछु पावै कबहुं न कूढ ।।

लक्ष्मी

कूर सदा भाखति पियहि, चचल सहज सुभाव।
नर गुन औगुन नहि लखति, सज्जन खल सम भाव।।
डरति सूर सो, भीरु कह, गनति न कछु रतिहीन।
बारनारि अरु लच्छमी, कहौ कहौ बस कीन ।।

गुरुवश्यता

जब लौ बिगरै काज नहि, तब लौ न गुरु कछु तेहि कहै।
पै शिष्य जाइ कुराह तौ, गुरु सीस अकुस ह्वै रहै ।।
तासों सदा गुरु वाक्यबस, हम नित्य पर आधीन है।
निर्लोभ गुरु से सत जन ही, जगत मे स्वाधीन है ।।

शारदी सुषमा

सरद बिमल ऋतु सोहई निरमल नील अकास।
निसानाथ पूरन उदित सोलह कला प्रकास ।।
चारु चमेली बन रही महमह महकि सुबास।
नदी तीर फूले लखौ सेत सेत बहु कास ।।

कमल कुमोदिनि सरन मे फूले सोभा देत।
भौर बृद जा मै लखौ गूजि गूजि रस लेत ।।
बसन चादनी, चदमुख, उडुगन मोती माल।
कास फूल मधुहास यह, सरद किधौ नव बाल ।।

अहो यह सरद सभु ह्वै आई।
कास फूल फूले चहु दिसि ते सोई मनु भस्म लगाई ।।

चद उदित सोइ सीस अभूषन सोभा लगति सुहाई ।
ता सों रजति घनपटली सोइ मनु गजखाल बनाई ।।
फूले कुसुम मुडमाला सोइ सोहत अति धवलाई ।
राजहस सोभा सोइ मानो हासविभव दरसाई ।।
अहो यह सरद सभु बनि आई ।।

सेवाधर्म

नृप सो सचिव सों सब मुसाहेबगनन सों डरते रहौ ।
पुनि बिटहु जे अति पास के तिनको कह्यौ करते रहौ ।।
मुख लखत बीतत दिवस निसि, भय रहत सकित प्रान है ।
निज उदरपूरनहेतु सेवा श्वानवृत्ति समान है ।।
सेवक प्रभु सो डरत सदा ही । पराधीन सपने सुख नाही ।।
जे ऊचे पद के अधिकारी । तिनको मनही मन भय भारी ।।
सब ही द्वेष बडन सो करही । अनुछिन कान स्वामिको भरहि ।।

बदरीनारायण चौधरी

विजयी भारत

जय जय भारत भूमि भवानी ।

जाकी सुयश पताका जग के, दसहु दिसि फहरानी ।
सब सुखसामग्री पूरित ऋतु, सकल समान सोहानी ।।
जाकी सोभा लखि अलका अरु, अमरावती खिसानी ।
धर्मसूर जित ज्यो नीति जह, गई प्रथम पहिचानी ।।
सकल कला गुन सहित सभ्यता, जह सो सबहि सुझानी ।
भये असख्य जहा जोगी तापस, ऋषिवर मुनि ज्ञानी ।।
बिबुध विप्र बिज्ञान सकल विद्या, जिन ते जग जानी ।
जगविजयी नृप रहे कबहु जह, न्यायनिरत गुनखानी ।।
जिन प्रताप सुर असुरन हू की, हिम्मत बिनसि बिलानी ।
कालहु सम अरि तृन समझत, जह के छत्री अभिमानी ।।
बीरबधू बुधजननी रही, लाखन जित सती सयानी ।
कोटि कोटि जित कोटपती, रत बनिक बनिक धनधानी ।।
सेवत शिल्प यथोचित सेवा, सूद्र समृद्धि बढानी ।
जाको अन्न खाय ऐडत जग, जाति अनेक अघानी ।।
जाकी सपति लुटत हजारन, बरसन हू न खोटानी ।
सहस सहस बरिसन दुख नित, नव जो न ग्लानि उर आनी ।।
धन्य धन्य पूरब सम जग, नृपगन मन अजहु लोभानी ।
प्रनमत तीस कोटि जन अजहूं, जाहि जोरि जुग पानी ।।
जिनमै झलक एकता की लखि, जगमति सहमि सकानी ।
ईस कृपा लहि बहुरि प्रेमघन, कनहु सोई छवि छानी ।।
सोइ प्रताप गुनजन गर्वित ह्वै, भरी पुरी धन धानी ।।

प्रतापनारायण मिश्र

जनम के ठगिया

साधो मनुवा अजब दिवाना ।
माया मोह जनम के ठगिया, तिनके रूप भुलाना ।
छल परपच करत जग धूनत, दुख को सुख करि माना ।।
फिकिर तहां की तनिक नही है, अंत समय जह् जाना ।
मुख ते धरम धरम गोहरावत, करम करत मनमाना ।।
जो साहब घट घट की जानै, तेही करत बहाना ।
तेहि ते पूछत मारग घर को, आपहि जौन भुलाना ।।
हियां कहा सज्जन कर वासा, हाय न इतनो जाना ।
यहि मनुवा के पीछे चलकै, सुख का कहा ठिकाना ।।
जो परताप सुखद को चीहे, सोई परम सयाना ।।

अपने करम आपने संगी

जागो भाई जागो रात अब थोरी ।
काल चोर नहि करन चहत है, जीवनधन की चोरी ।
औसर चूके फिरि पछितैहो, हाथ मीजि सिर फोरी ।।
काम करो नहि काम न ऐहै, बाते कोरी कोरी ।
जो कछु बीती बीत चुकी सो, चिंता ते मुख मोरी ।।
आगे जामे बनै सो कीजै, करि तन मन इक ठौरी ।
कोऊ काहु को नहि साथी, मात पिता सुत गोरी ।।
अपने करम आपने सगी, और भावना भोरी ।
सत्य सहायक स्वामि सुखद से, लेहु प्रीति जिय जोरी ।।
नाहि तु फिर परतापहरी, कोउ बात न पूछिहि तोरी ।।

नाथूराम शंकर

मंगलकामना

द्विज वेद पढ़ै सुविचार बढे, बल पाप चढ़े सब ऊपर को।
अविरुद्ध रहे ऋजु पथ गहे, परिवार कहै वसुधा भर को।।
ध्रुव धर्म धरे परदुःख हरे, तन त्याग तरे भवसागर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शकर को।।

विदुषी उपजै क्षमता न तजै, व्रत धार तजै सुकृतीवर को।
सधवा सुधरे विधवा उबरे, सकलक करे न किसी घर को।।
दुहिता न बिके कुटनी न टिके, कुलबोर छिकै तरसै दर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शकर को।।

नृपनीति जगे न अनीति ठगे, भ्रमभूत लगे न प्रजाघर को।
झगडे न मचे खल खर्व लचे, मद से न रचे भट सगर को।।
सुरभी न कटे न अनाज घटे, सुख भोग डटे डपटे डर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

महिमा उमड़े लघुता न लडे, जडता जकडे न चराचर को।
शठता सटके मुदिता मटके, प्रतिभा भटके न समादर को।।
विकसे विमला शुभ कर्मकला, पकड़े कमला श्रम के कर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शकर को।।

मतजाल जले छलिया न छले, कुल फूल फले तज मत्सर को।
अघदभ दबे न प्रपच फबे, गुनवान नवे न निरक्षर को।।
सुमरे जप से निरखे तप से, सुर पादप से तुझ अक्षर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शकर को।।

शंकर-मिलन

मै समझता था कही भी कुछ पता तेरा नही ।
आज शकर तू मिला तो अब पता मेरा नही ।।
अब लो न चले उस पद्धति पै, जिस पै व्रतशील विनीत गये ।
वह आज अचानक सूझ पड़ी, भ्रम के दिन बाधक बीत गये ।।
प्रभु शकर की सुधि साथ लगी, मुख मोड़ हठी विपरीत गये ।
चलते चलते हम हार गये, पर पाय मनोरथ जीत गये ।।

रसविहीन के लिये कविता वृथा है

भरिबो है समुद्र को शबुक मे, छिति को छिगुनी पर धारिबो है ।
बाधिबो है मृणाल सो मत्त करी, जुही फूल सो शैल बिदारिबो है ।।
गनिबो है सितारन को कवि शकर, रेणु सो तेल निकारिबो है ।
कविता समुझाइबो मूढन को, सविता गहि भूमि पै डारिबो है ।।

अंध जगत्

बोझ लदे हय हाथिन पै,
खर खात खडे नित जाय खुजाये ।
बधन मे मृगराज पड़े,
शठ स्यार स्वतत्र पुकारत पाये ।।
मानसरोवर मे बिहरे बक,
शकर मार मराल उडाये ।
मान घटो गुरु लोगन को,
जगबंचक पामर पच कहाये ।।

पितृदेव क्या थे और मैं क्या हूं ?

क्या शंकर, प्रतिकूल काल का अंत न होगा ?
क्या मगल से मेल मृत्युपर्यंत न होगा।
क्या अनुभूत दरिद्रदु.ख अब दूर न होगा।
क्या दाहक दुर्दैवकोप कर्पूर न होगा ।।

होकर मालामाल पिता ने नाम किया था।
मैंने उन के साथ न घर का काम किया था ।।
विद्या का भरपूर अटल अभ्यास किया था।
पर औरों की भाति न कुछ भी पास किया था।

जीवन का फल पूज्य पिता जी पाय चुके थे।
कर पूरे सब काम कुलीन कहाय चुके थे ।।
सुदर स्वर्गसमान विलास बिसार चुके थे।
हम सव उनका अत अनत निहार चुके थे ।।

बाध बाप की पाग बना मुखिया घर का मैं।
केवल परमाधार रहा कुनबे भर का मैं ।।
सुख से पहली भाति निरकुश रहता था मैं।
क्या कहता है कौन न कुछ भी करता था मैं ।।

जिनका सचित कोश खिलाया खाया मैंने।
करके उनकी होड़ न द्रव्य कमाया मैंने ।।
लूट रहे थे लोग न छल पहचाना मैंने।
घाटे का परिणाम कठोर न जाना मैंने ।।

अटके डिगरीदार किसी ने दाम न छोड़े।
छीन लिये धन धाम ग्राम आराम न छोड़े॥
हाय किसी के पास विभूषण वस्त्र न छोडे।
नाम रहा निरुपाधि पुलिस ने शस्त्र न छोड़े॥

बैठ रहे मुख मोड पुराने आने वाले।
लेते नही प्रणाम लूट कर खाने वाले॥
देते है दुर्वाद बडाई करने वाले।
लड़ते है बिन बात अड़ी पर मरने वाले॥

कविताप्रेमी लोग न अब सत्कवि कहते है।
हा ! न विज्ञ विज्ञानगगन का रवि कहते है॥
धर्मधुरधर धीर नही गुरुजन कहते है।
मुझको सब कगाल धनी निर्धन कहते है॥

वित्त बिना विख्यात विरद विपरीत हुआ है।
मन मेरा नि शक महा भयभीत हुआ है॥
कगाली की मार पडी रसभग हुआ है।
जीवन का मग हाय विधाता तग हुआ है॥

प्रतिभा को प्रतिवाद प्रचड लताड चुका है।
आदर को अपमानपिशाच पछाड चुका है॥
पौरुष का सिर नीच निरुद्यम फोड चुका है।
हाय हर्ष का रक्त विषाद निचोड़ चुका है॥

दरसे देश उदास जाति अनुकूल नही है।
शत्रु करे उपहास मित्र सुखमूल नही है॥

छूटे नातेदार किसी से मेल नही है ।
घर मे हाहाकर खुशी का खेल नही है ।।

बालक चोखे खान पान पर अड जाते है ।
खेल खिलौने देख पिछाडी पड़ जाते है ।।
पर मनमानी वस्तु बिना बस रह जाते है ।
हाय हमारे काढ कलेजे सो जाते है ।

फूल फूल कर फूल फली फल खाने वाले ।
नाना व्यजन पाक प्रसादी पाने वाले ।।
दूध रसाला आदि सुधारस पीने वाले ।
हाय बने हम शाक चनो पर जीने वाले ।

लड़के लकडी बीन बीन कर ला देते है ।
ईधन भर का काम अवश्य चला देते है ।।
वृद्ध चचा दो तीन बार जल भर देते है ।
माग माग कर छाछ महेरी भर देते है ।।

छप्पर मे बिन बास घुने एरड पडे है ।
बरतन का क्या काम घने घनखंड पडे है ।
खाट कहा ? छै सात फटे से टाट पड़े है ।
चक्की पीसे कौन बिना भिड पाट पडे है ।।

जाडे का प्रतियोग, न उष्णविलास मिलेगा ।
गरमी का प्रतिकार न शीतल वास मिलेगा ।।
घेर रही बरसात न सूखा ठौर मिलेगा ।
इस खडहर को छोड कहा घर और मिलेगा ।।

कर कर केहरिनाद वलाहक बरस रहे है।
अस्थिर विद्युद्दृश्य दशो दिश दरस रहे है ।।
गदला पानी छेद छत्त से छोड रहे है।
इद्रदेव जी टाग त्राण की तोड रहे है ।।

दिया जले किस भाति तेल को दाम नही है।
काटे मच्छर डास कही आराम नही है ।।
टूट पडे दीवार यहा सदेह नही है।
कर दे पनियाढार नही तो मेह नही है ।।

बीत गई अब रात अंधेरा दूर हुआ है।
सटक का कुल हाय न चकनाचूर हुआ है ।।
आज तीसरा रुद्र रूप उपवास हुआ है।
हा ! हम सबका घोर नरक मे वास हुआ है ।।

जो जगती पर बीज पाप के बो न सकेगा।
जिसका साहस सत्य धर्म को खो न सकेगा ।।
जो विधिविपरीत कभी कुछ न कर सकेगा।
रो रो कर वह रक कहा तक मर न सकेगा ।।

आत्म-बोध

पठ पाठ प्रचड प्रमादभरे, कपटी जन जन्म गमाय गये।
रण रोप भयानक आपस मे, भट केवल पाप कमाय गये ।।
धन, धाम विसार धरातल मे, धनवान असख्य समाय गये।
कवि 'शकर' सिद्धि मनोरथ की, जड शुद्ध सुबोध जमाय गये ।।

उपदेश अनेक सुने मन को, रुचि के अनुसार सुधार चुके ।
धर ध्यान यथाविधि मत्र जपे, पढ वेद पुराण विचार चुके ।।
गुरु गौरव धार महत बने, धन धाम कुटब विसार चुके ।
कवि 'शकर' ज्ञान बिना न तरे, सब ओर फिरे झक मार चुके ।।
निगमागम तत्र पुराण पडे, प्रतिवाद प्रगल्भ कहाय खरे ।
रच दभ प्रपच पसार घने, बन वंचक वेष अनेक धरे ।।
विचरे कर पान प्रमाद सुरा, अभिमान हलाहल खाय मरे ।
कवि 'शकर' मोहमदोदधि से, वकराज विवेक बिना न तरे ।।
घरबार बिसार विरक्त बने, ठनि वेष बनाय प्रमत्त रहे ।
बकबाद अबोध गृहस्थ सुने, शठ शिष्य अनन्य सुजान कहे ।।
घुस घोर घमड महावन में, विचरैं कुलबोर कुपथ गहे ।
कवि 'शंकर' एक विवेक विना, कपटी उनपात अनेक सहैं ।।
तन सुदर रोगविहीन रहैं, मन त्याग उमग उदास न हो ।
सुख धर्म प्रसग प्रकाश करे, नरमडल मे उपहास न हो ।।
धन की महिमा भरपूर मिले, प्रतिकूल मनोजविलास न हो ।
कवि 'शकर' ये उपभोग वृथा, पटुता प्रतिभा यदि पास न हो ।।
दिन रात समोद विलास करे, रसरग भरे सुखसाज बने ।
शिर धार किरीट कृपाण गहे, अवनी भर के अधिराज बने ।।
अनुकूल अखड प्रताप रहै, अविरुद्ध अनेक समाज बने ।
कवि 'शकर' वैभव ज्ञान बिना, भवसागर के न जहाज बने ।।

श्रीधर पाठक

उजड़ा गांव

कबहु न तहा पधारि ग्राम्य जन पग अब धरिहै ।
मधुर भुलौनी माहि नित्य चिताहि बिसरिहै ।।
ना किसान अब समाचार तह आय सुनैहै ।
ना नाऊ की बाते सब को मन बहलैहै ।।
लकडहार कौ बिरहा कबहु न तह सुनि परिहै ।
तान श्रवन आनदउदधि कबहु न उभरिहै ।।
माथौ पोछि लोहार काम को तह रुकिहै ना ।
भारी बलहि ढिलाय सुनन बातै झुकिहै ना ।।
घर को स्वामी आपु दीखिहै तह अब नाही ।
झाग उठे प्याले को फिरवावत सब पाही ।।
धनी करहु उपहास तुच्छ मानहु किन मानी ।
दीनन की यह लघु सम्पति साधारन जानी ।।
मोहि अधिक प्रिय लगै अधिक ही मो हिय भाई ।
सब ही बनावटनि सो एक सहज सुघराई ।।

जादूभरी थैली

कै यह जादूभरी विश्वबाजीगर थैली ।
खेलत मे खुलि परी शैल के सिर पै फैली ।।
पुरुष प्रकृति कौ किधौ जबै जोबनरस आयौ ।
प्रेमकेलि रसरेलि करन रगमहल सजायौ ।।
खिली प्रकृति पटरानी के महलन फुलवारी ।
खुली धरी कै भरी तासु सिगारपिटारी ।।

प्रकृति यहा एकांत बैठि निज रूप सवारति ।
पल पल पलटति भेस छनिक छवि छिन-छिन धारति ।।
बिमल अम्बुसर मुकुरन मह मुखबिम्ब निहारति ।
अपनी छबि पै मोहि आपही तन मन वारति ।।
यही स्वर्ग सुरलोक यही सुरकानन सुदर ।
यहि अमरन कौ ओक यही कहु बसत पुरंदर ।।

स्वर्गीय वीणा

कही पै स्वर्गीय कोई बाला, सुमंजु वीणा बजा रही है ।
सुरो के संगीत की सी कैसी, सुरीली गुजार आ रही है ।।

हरेक स्वर मे नवीनता है, हरेक पद मे प्रवीनता है ।
निराली लय है औ लीनता है, अलाप अद्भुत मिला रही है ।।

अलक्ष्य पर्दो से गत सुनाती, तरल तरानो से मन लुभाती ।
अनूठे अटपट स्वरो मे स्वर्गिक, सुधा की धारा बहा रही है ।।

कोई पुरदर की किकिरी है, कि या किसी सुर की सुदरी है ।
वियोगतप्ता सी भोगमुक्ता, हृदय के उद्गार गा रही है ।।

कभी नई तान प्रेममय है, कभी प्रकोपन कभी विनय है ।
दया है दाक्षिण्य का उदय है, अनेको बानक बना रही है ।।

भरे गगन मे है जितने तारे, हुए है बदमस्त गत पै सारे ।
समस्त ब्रह्माड भर को मानों, दो उगलियो पर नचा रही है ।।

सुनो तो सुनने की शक्ति वालो, सको तो जाकर के कुछ पता लो ।
है कौन जोगन ये जो गगन मे, कि इतनी चुलबुल मचा रही है ।।

ओ घन श्याम ?

हे बारिद ! नव जलधर ! हे धाराधर नाम ।
हे पयोद ! पय सुदर हे अतिशय अभिराम ॥
हे प्रानद आनद घन हे जगजीवनसार ।
हे सजीव जीवनधन हे त्रिभुवन आधार ॥
हे घन स्याम परम प्रिय हे आनदघन स्याम ।
मुदित करन हरिजनहिय हे हरितनुज सुदाम ॥
हे जग जीयजुड़ावन भीयछुडावनहार ।
हे बकतीयउडावन हीयबढावनहार ॥
हे रनबंक धनुसधर सर तरकस जलधार ।
ग्रीसमबिसमकलुसहर रविकरप्रखरप्रहार ॥
हे गिरितुगशिखरचर हे निर्भय नभयान ।
हे नित नूतन तनधर हे पवमान विमान ॥
तुम भारत के धन बल गुन गौरव आधार ।
तुम ही तन तुम ही मन तुम प्राननपतवार ॥
परम पुरातन तुम्हरौ भारत संग सत प्रेम ।
जिहि जानत जग सगरौ मानत निहिचल नेम ॥
सो तुमको नहिं चहियत छाडन हित सम्बध ।
अटल सदैवहि कहियत पूरन प्रकृति प्रबंध ॥
सोचहु सुमिरि सुजस निज हे उज्ज्वल जस मौन ।
इन दुखियनहि तुमहि तज घन अवलम्बन कौन ॥
पठवहु परम सुहावनि पावनि पूरब पौन ।
सुभ सदेससुनावनि जरझरलावनि जौन ॥

स्याम घटा लै धावहु छावहु नभहि दबाय ।
दिव्य छटा फैलावहु लावहु दलहि सजाय ।।
घोरहु घुमडी घमकहु घेरहु दसहु दिसान ।
दामिनि द्रुतहि दमकहु धाइहु धनुस निसान ।।
गरजन गहन सुनावहु रनव्रतबीरसमान ।
लरजन ललित दिखावहु बाधहु धुर धुरवान ।।
मुग्ध मयूर नचावहु निज घनघोर सुनाय ।
दादुर भेक बुलावहु नव अभिषेक कराय ।।
कहु कहुं कड़कि सुनावहु विज्जुपतन ठनकार ।
कहु मृदु श्रवन करावहु झिल्लीगनझनकार ।।
बन बन कीट पतगन घर घर तियगनतान ।
पुरबहु रग विरगन हे बहु ढगनिधान ।।
करि कृतकृत्य किसानन सम्बत सर सरसाउ ।
सीचि सस्य तृन धानन तब निज धाम सिधाउ ।।
समै समै पुनि आवहु पुनि जावहु इहि रीति ।
सहज सुभाग बढावहु गहि मग प्राकृत नीति ।।
ग्रथित प्रेम रस पागहु पूरन प्रनय प्रतीत ।
सदा सरस अनुरागहु हे घन ! विनय विनीत ।।

अयोध्यासिंह उपाध्याय

युवक

जाति-आशा-निशि-मंजु-मयंक, कामना-लतिका-कुसुम-कलाप,
युवक है लोक-कालिमा-काल, देश-कमनीय-कंठ–आलाप।
जगाता है नव जीवनज्योति, राग-आरंजित जिसका गात;
लोक-लोचन का है जो ओक, युवक है वह भव-भव्य-प्रभात ।।

सुमनता है जिसकी स्वर्गीय, सफलता वसुधा-सिद्धि-विधान,
मिली जिसमे मोहकता दिव्य, युवक है वह महान उद्यान।
बने महिमा-मंडित अवनीप, दे जिसे स्वमुकुट-मंडप-मान;
अचल है जिसकी अंतर्ज्योति, युवक है वह महि-रत्न महान ।।

बहा वसुधा पर सुधाप्रवाह, बन सका जो मंडन भव-शीश,
तिमिर मे भरता है जो भूति, युवक है वह राका-रजनीश।
ललित लय है जिसकी प्रलयाग्नि, या परम द्रवणशील नवनीत;
भरित है जिसमे विजयोल्लास, युवक है वह स्वदेश-संगीत ।।

नरक जिससे बनता है स्वर्ग, मरु महितल नंदन उद्यान,
कल्पतरुसम कमनीय करील, युवक है वह अनुभूत विधान।
प्रबल है जिसका हृदयोल्लास, उदधि-उत्ताल-तरंग-समान;
पवि-पतन है जिसका विक्षोभ, युवक है वह प्रचंड उत्थान ।।

दग्ध कर शिर पर पड उर वेध, दुर्जनों का करता है अंत,
भयंकर प्रलय-भानु यम-दंड, युवक है काल-सर्प-विष-दंत।
प्रलय-पावक का प्रबल प्रकोप, अग्निगिरि का ज्वलंत उद्‌गार;
त्रिलोचन-अनल-वमन-रत-नेत्र, युवक है मूर्तिमत संहार ।।

सफलता-सूत्र

दूर कर अवनि-तल-तम-तोम, तमी-तामस का कर संहार,
दलन कर दानव-दल का व्यूह, भानु करता है प्रभा-प्रसार।
प्रति-दिवस कला-हानि अवलोक, कलानिधि होता नहीं सशंक;
समय पर सकल कला कर लाभ, सरस करता है भूतल-अंक।।

वायु से ताडित हो बहु वार, टला कब वारिवाह गंभीर,
सघनता कर संचय सब काल, बरसता है वसुधा पर नीर।
विटप-कुल होकर पत्र-विहीन, बना कुसुमाकर को अनुकूल,
पुनः पाता है बहु कमनीय, नवल श्यामल दल औ फलफूल।।

शोक हर शोकित लोक अशोक, सहन कर ललना-पाद-प्रहार,
पहनता है तज अविकच भाव, विकच सुमनों का सुंदर हार।
धीर धर ले धरती अवलंब, अधिक नुच कट छट कर बहु वार;
पद-दलित प्रति-दिन हो-हो दूब, पनपती है रख पानिप प्यार।।

कुसुम-तरु-कंटक को अवलोक, समाकुल होता नहीं मिलिंद,
सफलता पाता है सब काल, छिन्न हो कदली-पादप-वृंद।
टले है करतब हिम बल देख, विघ्न-बाधा कृमि-कुल का व्यूह,
सहमता है पौरुष-तम देख, विफलता गृह-मक्षिका-समूह।।

हुई जिसको अवगत यह बात, सका यह मर्म मनुज को जान,
मिली जिसको अनुभूति-विभूति, हुआ जिसको भव-हित का ज्ञान।
सजाने को जीवन-कल-कंठ, कर सुयश-सौरभ का विस्तार;
वही ले साहस-सुमन-समूह, सफलता का गूंधेगा हार।।

कुल-ललना

आख मे लज्जा हो ऐसी, फाड जो परदों को फेंके,
राह जो बुरे तेवरों की, पहाढी घाटी बन छेके।
चाद सा मुखडा ऐसा हो, न जिस पर हो धब्बे काले;
चादनी उससे वह छिटके, सुधा जो वसुधा पर ढाले ॥

हंसे तो वह बिजली चमके, गिरे जो पापी के सर पर,
बहे उससे वह रस-धारा, करे जो खुलती आखे तर।
कान सीपो जैसे सुदर, मैल से सदा रहे डरते;
बड़ी ही सुदर बातों के, मोतियो से होवे भरते ॥

हिलावे जो वे होठो को, फूल तो मुह से झड़ पावे,
रहे जिसमे ऐमी रंगत, काठ उकठा भी फल लावे।
कलेजा उनका कमलो सा, खुले मे खिले रंग लावे;
दिशा जिससे महमह महके, रमा जिसमे घर कर पावे ॥

रहे जी मे सब दिन बहती, देश-ममता की वह धारा,
वेग से जिसके वह जावे, जमा कूडा करकट सारा।
लगे निजता इतनी मीठी, परायापन इतना कडुआ;
कि जिससे ग्लास काच के ले, न फेंके गगा-जल-गडवा ॥

अलग जो कर दे पय पानी, हस की सी चाले चले,
जहा अधियाला दिखलावे, वहा पर दीपक जैसी बले।
सदा अपने हाथो मे ले, लोक-हित फूलों की डाली,
कुलवती ललनाए रख ले, लाल के मुखड़े की लाली ॥

भारत के नवयुवक

जाति-धन प्रिय नव-युवक-समूह, विमल मानसके मजु मराल।
देश के परम मनोरम रत्न, ललित भारत—ललना के लाल॥
लोक की लाखो आंखे आज, लगी हैं तुम लोगो की ओर।
भरी उनमे हैं करुणा भूरि, लालसामय है ललकित कोर॥
उठो, लो आखे अपनी खोल, विलोको अवनी तल का हाल।
अनालोकित मे भर आलोक, करो कमनीय कलकित भाल॥
भरे उर मे जो अभिनय ओज, सुना दो वह सुदर झनकार।
ध्वनित हो जिससे मानस-यत्र, छेड दो उस तत्री का तार॥
रगो मे बिजली जावे दौड़, जगे भारत-भूतल का भाग।
प्रभावित धुन से हो भरपूर, उमग गाओ वह रोचक राग॥
हो सके जिससे सुघटित जाति, सुकठो मे गूजे वह तान।
भाव जिसमे हो भरे सजीव, करो ऐसे गीतो का गान॥
कर विपुल साहस वज्र-प्रहार, विफलता-गिरि को कर दो चूर।
जगा दो सफल साधना-ज्योति, विविध बाधातम कर दो दूर॥
गगन मे जा, भूतल मे घूम, निकालो कार्य-सिद्धि की राह।
अचल को विचलित कर दो भूरि, रोक दो वारिधि-वारि-प्रवाह॥
धूल मे क्यो मिलती है धाक, बचा लो बची बचाई आन।
मचा दो दोषदलन की धूम, मसल दो दुख को मशक-समान॥
लाभ-हित देश-प्रेम-रवि-ज्योति, आख लो निज भावो की खोल।
त्याग करके निजता-अभिमान, जाति-ममता का समझो मोल॥
देश के हित निज-जाति-निमित्त, अतुल हो तुम लोगो का त्याग।
अवनि-जन-अनुरजन के हेतु, वनो तुम मूर्तिमान अनुराग॥
अनाथों के कहलाओ नाथ, हरो अवला-जन-दुख अविलब।

सबलता करो जाति को दान, अबल-जन के होकर अवलंब ॥
बनो असहायों के सर्वस्व, अबुध-जन की अनुपम अनुभूति ।
वृद्ध जन के लोचन की ज्योति, अकिंचन-जन की विपुल विभूति ॥
सरस रुचि रुचिर कंठ के हार, सुजीवन-नव-घन-मत्त-मयूर ।
लोक-भावुकता-तन शृंगार, सुजनता-भव्य-भाल-सिंदूर ॥
भरो भूतल में कीर्तिकलाप, दिखा भारतजननी से प्यार ।
करो पूजन उनका पद-कंज, बना सुरभित सुमनों का हार ॥

कमनीय कामना

ऐ नव-जीवन के जीवन-धन, ऐ अनुरंजन के आधार ।
ऐ मंजुलता के अवलंबन, ऐ रसमयता के अवतार ॥
ऐ उमंगमय मानस के मधु, ऐ तरंगमय चित के चाव ।
प्रकृति कंठ के हार मनोहर, भवभावुकता के अनुभाव ॥

ऐ कुसुमाकर जो भारत को, कुसुमित करते हो कर प्यार ।
तो जीवन-विहीन में कर दो, अभिनव जीवन का संचार ॥
मलय-पवन नित मंद मंद बह, करे मंदता मन की दूर ।
सौरभ-रहित भाव-भवनों में, सरस सुरभि भर दे भरपूर ॥

कोकिल की काकली सुनाके, वह अति कलित अलौकिक गान ।
जिससे कुंठित विपुल कंठ में, पूरित हो उत्कंठित तान ॥
भरी मत्तता मोहकता से, अलिकुल की आकुल झंकार ।
झंकृत करे अलंकृत मानस, छेड़े हृत्तंत्री के तार ॥

तरु-किसलय की नवल लालिमा, भरे लोचनों में अनुराग ।
लता-बेलियों के विलास से, विलसे अंतर का नव राग ॥

विकसे विकसे कुसुम देख हो, देश-प्रेम का परम विकास।
जाति-वासनाएं बन जाएं, सरस वास का वर आवास॥
लाली मुख की रखे मुखो पर, लग लग करके लाल गुलाल।
रंजित करे अरजित जन को, आरजित अबीर का थाल॥
रग बिगडता रहे बनाता, समय रग रख रख कर रग।
भग भग कर सके न गौरव, सु उमडित हो फाग उमग॥

अतीत-संगीत

था भव-प्रात काल राग-रजित था नभ-तल;
लोहित–वसन ललित अक था लोक समुज्ज्वल।
था अभिव्यक्ति-विकास प्रकृति-मानस मे होता,
धीरे धीरे तिमिर-पुज था तामस खोता।
क्षितिज-अंक से निकल विभा के बहु-विध गोले,
केलि-निरत थे विविध कल्पना-कुसुमो को ले।
मथर गति से पवन-प्रगति थी विकसित होती,
नव-जीवन का बीज नवल निधि मे थी बोती॥
सलिल-निलय संसार-लहरियो द्वारा चुबित,
अरुण असित सित विपुल बिब से था प्रतिबिबित।
किसी अकल्पित दिशा मध्य कर महा उजाला,
एक अलौकिक तम तमोरि था उगने वाला।
इसी समय इस सलिल-राशि मे महा मनोहर,
एक अयुत-दल कमल हुआ भव-लोचन-गोचर।
उसकी परमिति किसी काल मे गई न मापी,
उसका था विस्तार अमित जगतीतलव्यापी।

विश्व-महान-विभूति-भूत थी उस पर विलसी;
जिसमे विविध विधान की विबुधता थी निवसी।
था जिस काल असख्य लोक लीलामय बनता;
भव कमनीय वितान जिस समय विभु था तनता।
उसी समय ससारमयी नीरवता टूटी;
महा कठ का गान हुआ रवजडता छूटी।
उससे हुआ दिगत ध्वनित नभ-निधि लहराया;
सकल लोक के स्वर-समूह मे जीवन आया।
गिरा हुई अवतीर्ण अनाहत नाद सुनाया;
कर की वीणा वजी विमोहित विश्व दिखाया।
लोकोत्तर झकार अखिल लोको मे फैली;
विविध-कठ आधार बनी अवधारित शैली।
जो ज्वलत बहुपिड व्योमतल मे थे फिरते;
जहा-तहा जो विविध रग के घन थे घिरते।
महा उदधि मे तरल तरगे जो उठ पाती,
सरिताए जो मद मद बहती दिखलाती।
जितने थे सर-स्रोत, रहे जो झरने झरते;
अपर तरुलता आदि जो विविध रव थे करते।
उनमे भी थी बजी बीन ही झकृत होती,
जिससे जागी जगविकास की ममता सोती।
वेद-ध्वनि से ध्वनित हुआ भव-मडल सारा;
लोक-लोक मे बही मधुर स्वर-सप्तक-धारा।
श्रवण-रसायन बनी, मुग्धमानस मे निवसी;
विविध राग-रागिनी-मध्य, वह वहुविधि विलसी।

उससे होकर मत्त गान, वह शिव ने गाया;
जिसने सारे विबुध-वृंद को चकित बनाया।
उसकी मंजुल गूंज भूरि भुवनों में गूंजी;
बनी विश्व के विविध-धर्म-भावों की पूंजी।
उसके रस से सिंची लोक-भाषा-लतिकाएं;
जिनमें विकसीं कलित-ललित सुरभित कलिकाएं।
वह सुकंठता उससे साधु नारद ने पाई;
जिसने सुरपुर सदन-सदन में सुधा बहाई।
उससे भर भर मिले छलकते मानस प्याले;
जिनको पी गंधर्व बने मधुता मतवाले।
नाच उठीं अप्सरा, गान वह मोहक गाया।
जिसने सारे स्वर-समूह को सरस बनाया।
ले ले उसका स्वाद किन्नरों ने रस पाया;
सुना मनोहर तान वाद्य बहु मंजु बजाया।
उसकी ही कमनीय कला मुरली ने पाई;
मनमोहन ने जिसे महा मधुमयी बनाई।
जब यह मुरली बड़े मधुर स्वर से बजती थी;
प्रकृति उस समय दिव्य साज द्वारा सजती थी।
पाहन होते द्रवित पादपावलि छवि पाती;
रस-धारा थी लता-बेलियों पर बह जाती।
खग मृग बनते मत्त, नाचते मोर दिखाते;
विकसित होते फूल, फल मधुर रस टपकाते।
रुकता सलिल प्रवाह कलित कालिंदी होती;
वृंदावन की भूमि मलिनताएं थीं खोती।

होता हृदय-विकास, मुग्ध मानस बन जाते;
साधक-सिद्ध पुनीत साधना के फल पाते।
साहस-हीन मलीन जनो मे जीवन आता;
पातक होता दूर, मुक्ति-पथ मानव पाता।
क्या न कभी फिर मधुर मुरलिका बज पावेगी,
क्या न कान मे सरस सुधा फिर टपकावेगी।
जो जन-जन मे भर विनोद-रस बरसावेगा;
वह अतीत संगीत क्या न गाया जावेगा।।

देवीप्रसाद पूर्ण

मृत्युंजय

प्रतिनिधे खल काल कराल के । कुटिल क्रूर भयानक पातकी ।।
अति विलक्षण है तव दुष्क्रिया। अशुचि मृत्यु हरे अधमाधम ।।
करत सैर हुते कल बाग की। तुरगबाग गहे कर रेशमी ।।
सुनि परै तिनकी अब वारता। चल बसे तजिके जगबाग सो ।।
रतनमदिर मजु अमद मे। रमत जौन निरतर ही रहे ।।
दिवस अतर मे सोइ सोवही। अब भयंकर घोर मसान मे ।।
गतिसुधारन की करि धारना। उचित है चित धीरज धारियो ।।
झटिति हो अथवा कछु काल मे। अवशि जीतहिंगै हम काल को ।।
सकल पापन सो बचि कै सदा। शुभ सुकर्म करौ बिन वासना ।।
परम सार रहै नित ध्यान मे। सुखद पथ यही वर ज्ञान को ।।
जगत है मन की सब कल्पना। दृढ जबै यह निश्चय होत है ।।
जगत भासत पूरन ब्रह्म ही। बस वही परिपूरन ज्ञान है ।।
पर दशा वह पूरन ज्ञान की। स्थिर सदा रस एक रहै नही ।।
न जब लौ मनको बस कीजिये। तजि सबै जड जगम वासना ।।
सुहृद सग सहोदर सुदरी। सुखद सतति धाम वसुधरा ।।
सुजस सपति की मनकामना। सबन को बस बधन मानिये ।।
यदि लखात असार जहान है। कुढत जो जग बधन ते हियो ।।
उदित जो उर मुक्ति सुकामना। करहु तो तुम साधन ज्ञान को ।।
तिमिरनाश प्रकाश बिना नही। न बिलै घन वात बिना यथा ।।
न बरखा बिन जात निदाघ ज्यो। मिटत काल नही बिन ज्ञान के ।।
बिलग वारिधि ते न तरंग है। पृथकता बरु मंद विचारही ।।

लहर अबुधि दोनहुं अबु है । जगत ब्रह्ममयो तिमि जानिये ।।
कनक के बरु ककन किकिनी । अमित आकृति के रचिये तऊ ।।
कनक ते नहि अन्य कछू तथा । सकल ब्रह्ममयो जग जानिये ।।
भवन मे मठ मे घट मे तथा । गगन देखि अनेक परो तऊ ।।
विमल बुद्धिन को नभ एक है । सबन में परमातम है तथा ।।

विधि – विडंबना

पतन निश्चित है जिसका हुआ, हठ उसे प्रिय है निज देह से ।
अटल है उसकी विधिवामता, विनय से नय से घटती नही ।।
महिमता जिसकी अवलोक के, अनिश निदक है खलमडली ।
सुयश क्या उसका जग मे नही, धवल है, बल है यदि दैव का ।।
हृदय सुस्थिर होकर देख तू, नियति का बल केवल है जिसे ।
कठिन कटकमार्ग उसे सदा, सुगम है गम है करना वृथा ।।
शतसहस्रगुणान्वित है यहा, विविध शास्त्रविशारद है पडे ।
हृदय ! क्यो उनमे फिर एक दो, सुकृत से कृत सेवक लोक है ।।
जनन का मरना परिणाम है, मरण हा न मिले फिर देह क्यो ।
मन ! बली विधि की करतूत से, पतन का तन का चिर सग है ।।
मन ! रमारमणीरमणीयता, मिल गई यदि ये विधियोग से ।
पर जिसे न मिली कवितासुधा, रसिकता सिकतासम है उसे ।।
सुविधि से विधि से यदि है मिली, रसवती सरसीव सरस्वती ।
मन ! तदा तुझको अमरत्वदा, नवसुधा वसुधा पर है मिली ।।
चतुर है चतुरानन-सा वही, सुभगभाग्यविभूषितभाल है ।
वह ! जिसे मन मे परकाव्य की, रुचिरता चिरतापकरी न हो ।।

रामचंद्र शुक्ल

उपदेश

अप्रमेय को शब्द बाधि कै बताइये,
जो अथाह ताहि यो न बद्धि सो थहाइये।
ताहि पूछि औ बताय लोग भूल ही करै,
सो प्रसग लाय व्यर्थ वाद माहि ते परै ॥

अंधकार आदि मे रह्यो पुराण यो कहै,
वा महानिशा अखडबीच ब्रह्म ही रहै ।
फेर मे न ब्रह्म के, न आदि के रहौ, अरे,
चर्मचक्षु को अगम्य और बुद्धि के परे ॥

चलत तारे रहत पूछन जात यह सब नाहि,
लेहु एतो जानि बस है चलत या जग माहि ।
सदा जीवन मरण, सुख दुख शोक और उछाह,
कार्यकारण की लरी औ कालचक्रप्रवाह ॥

और यह भवधार जो अविराम चलति लखाति,
दूर उद्गम सो सरित चलि सिधु दिशि ज्यो जाति।
एक पाछे एक उठति तरग तार लगाय,
एक है सब, एक सी पै परति नाहि लखाय ॥

जानिबो एतो बहुत भूस्वर्ग आदिक धाम,
सकल माया दृश्य है सब रूप है परिणाम ।
रहत घूमत चक्र यह श्रम दुःखपूर्ण अपार,
थामि याको सकत कोऊ नाहि काहु प्रकार ॥

ब्रह्मलोक ते परे सनातन शक्ति विराजति,
जो या जग मे 'धर्म' नाम सो आवति बाजति ।
आदि अंत नहि जासु नियम है जाके अचल,
सत्वोन्मुख जो करति सर्गगति सचित करि फल ।।

कला ताकी करत है घनपुजरजित जाय,
चद्रिकन पै मोर की दुति ताहि की दरसाय ।
नखत ग्रह मे सोइ ताही को करै उपचार,
दमकि दामिनि वहि पवन औ मेघ दै जलधार ।।

नाहि कुठित होति कैसहु करन मे व्यवहार,
होत जो कछु जहा सो सव तासु रुचि अनुसार ।
भरति जननि उरोज मे जो मधुर छीर रसाल,
धरति सोई व्यालदशनन बीच गरल कराल ।।

गगनमडप बीच सोई ग्रह नछत्र सजाय,
बाधि गति, सुर ताल पै निज रही नाच नचाय।
सोइ गहरे खात मे भूगर्भ भीतर जाय,
स्वर्ण, मानिक, नील मणि की राशि धरत छपाय ।।

शक्ति तुम्हरे हाथ देवन सो कछू कम नाहि,
देव, नर, पशु आदि जेते जीव लोकन माहि ।
कर्मवश सव रहत भरमत बहुत यह धार,
लहत सुख औ सहत दुख निज कर्म के अनुसार ।।

———

मैथिलीशरण गुप्त

भारतवर्ष की श्रेष्ठता

भूगोल का गौरव प्रकृति का पुण्य लीलास्थल कहां ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गगाजल जहा।
सपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है।
उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन ? भारतवर्ष है।

हा! वृद्ध भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है।
ऐसा पुरातन देश कोई विश्व मे क्या और है ?
भगवान की भवभूतियों का यह प्रथम भडार है।
विधि ने किया नरसृष्टि का पहले यही विस्तार है ।।

यह पुण्यभूमि प्रसिद्ध है इसके निवासी आर्य है,
विद्या कला कौशल्य सबके जो प्रथम आचार्य है।
सतान उनकी आज यद्यपि हम अधोगति मे पडे,
पर चिन्ह उनकी उच्चता के आज भी कुछ है खडे ।।

शुभ शातिमय शोभा जहा भवबधनो को खोलती,
हिलमिल मृगो से खेल करती सिहिनी थी डोलती।
स्वर्गीय भावो से भरे ऋषि होम करते थे जहां,
उन ऋषिगणो से ही हमारा था हुआ उद्भव यहा ।।

उन पूर्वजो की कीर्ति का वर्णन अतीव अपार है,
गाते हमी गुण है न उनके गा रहा ससार है।
वे धर्म पर करते निछावर तृणसमान शरीर थे,
उनसे वही गभीर थे, वर वीर थे, ध्रुव धीर थे ।।

उनके अलौकिक दर्शनो से दूर होता पाप था,
अति पुण्य मिलता था तथा मिटता हृदय का ताप था।
उपदेश उनके शांतिकारक थे निवारक शोक के,
सब लोक उनका भक्त था वे थे हितैषी लोक के ॥

वे ईशनियमो की कभी अवहेलना करते न थे,
सन्मार्ग मे चलते हुए वे विघ्न से डरते न थे।
अपने लिये वे दूसरो का अहित कभी करते न थे,
चिताप्रपूर्ण अशातिपूर्वक वे कभी मरते न थे ॥

वे मोहबंधनमुक्त थे स्वच्छद थे स्वाधीन थे,
सपूर्णसुखसंयुक्त थे वे शातिशिखरासीन थे।
मन से वचन से कर्म से वे प्रभुभजन मे लीन थे,
विख्यात ब्रह्मानदनद के वे मनोहर मीन थे ॥

वे आर्य ही थे जो कभी अपने लिये जीते न थे,
वे स्वार्थवश हो मोह की मदिरा कभी पीते न थे।
ससार के उपकारहित जब जन्म लेते थे सभी,
निश्चेष्ट होकर किस तरह वे बैठ सकते थे कभी ॥

आदर्श जन ससार मे इतने कहा पर है हुए ?
सत्कार्यभूषण आर्यगण जितने यहां पर है हुए।
है रह गये यद्यपि हमारे गीत आज रहे सहे,
पर दूसरो के वचन भी साक्षी हमारे हो रहे ॥

लक्ष्मी नही सर्वस्व जावे सत्य छोडेगे नही,
अधे बने पर सत्य से सबध तोड़ेगे नही।

निज सुतमरण स्वीकार है पर वचन की रक्षा रहे,
हैं कौन जो उन पूर्वजो के शील की सीमा कहे ॥

सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथिसत्कार मे फिर भी न जो रूखे रहे ।
परतृप्ति कर निजतृप्ति मानी रतिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथिसतोषकर पैदा किये किस देश ने ॥

आमिष दिया अपना जिन्होने श्येनभक्षण के लिये,
जो बिक गये चाडाल के घर सत्यरक्षण के लिये ।
दे दी जिन्होने अस्थिया परमार्थहित जानी जहा,
शिवि, हरिश्चद्र, दधीचि से होते रहे दानी कहा ॥

सत्पुत्र पुरु से थे जिन्होने तातहित सब कुछ सहा,
भाई भरत से थे जिन्होंने राज्य भी त्यागा अहा ।
जो धीरता के वीरता के प्रौढतम पालक हुए,
प्रह्लाद,ध्रुव,कुश लव तथा अभिमन्युसम बालक हुए ।।

वह भीष्म का इद्रियदमन उनकी धरा सी धीरता,
वह शील उनका और उनकी वीरता गभीरता ।
उनकी सरलता और उनकी वह विशालविवेकता,
है एक जन के अनुकरण मे सब गुणों की एकता ॥

बार बार तू आया

बार बार तू आया, पर मैंने पहचान न पाया ।
हिमकपित कृशपाणि पसारे, पहुच बुभुक्षित मेरे द्वारे ।
तू ने मेरा धक्का खाया, बार बार तू आया ।

दीन दृगो से निकल पडा तू, वडा सरस था विकल बड़ा तू।
पर मै कौतुक से मुसकाया, बार बार तू आया।
गलितागो का गध लगाये, आया फिर तू अलख जगाये।
हट कर मैंने तुझे हटाया, बार बार तू आया।
आर्त गिरा कानो मे आई, वह थी तेरी आहट लाई।
पर मै उस पर ध्यान न लाया, बार बार तू आया।
पीडित के नि श्वास अरे रे! मै क्या जानू कर थे तेरे!
मुझ पर मायामद था छाया, बार बार तू आया।
अब जो मै पहचानू तुझको, तो तू भूल गया है मुझको।
मै हू जिसने तुझे भुलाया, बार बार तू आया।
पर मैंने पहचान न पाया।

इंद्र-जाल

अच्छा इद्रजाल दिखलाया।
खोलू जव तक पलक कौतुकी, तुमने पेड लगाया!
भाति भाति के फूल खिले है, रग रूप रस गध मिले है,
भौरे हर्षसमेत हिले है, गुजारव है छाया!
अच्छा इद्रजाल दिखलाया।
उड उड कर पछी आते है, फुर फुर कर फिर उड जाते है,
क्या लाते है, क्या पाते है, तब भी पता न पाया!
अच्छा इद्रजाल दिखलाया।
यह जो अम्ल मधुर फल लाया, उसने किसे नही ललचाया।
वह पछताया जिसने खाया, और न जिसने खाया!
अच्छा इद्रजाल दिखलाया!

पहले के पत्ते झड़ते है, उडते है गिरते पडते है।
नवदल रत्नतुल्य जड़ते है, यह क्रम किसे न भाया !
अच्छा इद्रजाल दिखलाया !
फल मे स्वादु, सुगंध कुसुम मे पर है मूल कहा इस द्रुम मे,
क्या कहते हो, वह है तुम मे, राम तुम्हारी माया !
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया !

———

जयशंकर प्रसाद

किरण

किरण ! तुम क्यों बिखरी हो आज,
रंगी हो तुम किसके अनुराग ?
स्वर्ण सरसिज किंजल्कसमान,
उठाती हो परमाणुपराग ।
धरा पर झुकी प्रार्थनासदृश,
मधुर मुरली सी फिर भी मौन,
किसी अज्ञात विश्व की विकल—
वेदना दूती सी तुम कौन ?

अरुणशिशु के मुख पर सविलास
सुनहली लट घुघराली कांत,
नाचती हो जैसे तुम कौन ?
उषा के अंचल में अश्रांत ।
भला, उस भोले मुख को छोड़
चली हो किसे चूमने भाल,
खेल है कैसा या है नृत्य ?
कौन देता है सम पर ताल ?

कोकनदमधुधारा सी तरल,
विश्व में बहती हो किस ओर,
प्रकृति को देती परमानंद
उठाकर सुंदर सरस हिलोर ।

स्वर्ग के सूत्रसदृश तुम कौन ?
मिलाती हो उससे भूलोक,
जोड़ती हो कैसा संबंध
बना दोगी क्या विरज, विशोक ?

चपल, ठहरो कुछ लो विश्राम,
चल चुकी हो पथशून्य अनंत,
सुमनमंदिर के खोलो द्वार,
जगे फिर सोया वहाँ वसंत।

वियोगी हरि

उत्साह-तरंग

जयत कस करि केहरी, मधुरिपु केशी काल ।
कालियमदमर्दन हरे, केशव कृष्ण कृपाल ।।

परिनामहु जो देतु है, लोकोत्तर आनद ।
सुरस वीर रसराजु सो, सहित उछाह अमद ।।

छाडि वीररसु अब हमै, नहि भावतु रस आन ।
ध्यावतु नावन आवरो, हरो हरो हि जहान ।।

कहा करौ माधुर्य लै, मृदुल मजु बिनु ओज ।
दिपै न ज्योति बिकास बिनु, सुदर नैन सरोज ।।

खड खड ह्वै जाय वरु, देतु न पाछे पैड ।
लरत सूरमा खेत की, मरत न छाडतु मैड ।।

खलखडन मडनसुजन, सरल सुहृद सविवेक ।
गुणगभीर रणसूरमा, मिलतु लाख मे एक ।।

खलघालक पालकसुजन, सुहृद सदय गभीर ।
कहू एक मत लाख मे, प्रकृतिसूर रणधीर ।।

मुहमागे रणसूरमा, देतु दान परहेतु ।
सीसदान हू देतु पै, पीठिदान नहि देतु ।।

दया धर्म जान्यौ तु ही, सब धर्मनु कौ सार ।
नृप शिवि तेरे दान पै, बलि हू बलि सौ बार ।।

तू ही या नरदेह कौ, बलि पारखी अनूप ।
दया खड्ग मरमी तु ही, दयासूर शिवि भूप ।।

सुदर सत्य सरोजु सुचि, बिकस्यो धर्मतडाग ।
सुरभित चहुं हरिचद को, जुग जुग पुण्य पराग ।।

जौ न जन्म हरिचद कौ, होतो या जग माहि ।
जुग जुग रहति असत्य की, अमिट अंधेरी छाह ॥

इत गाधी उत सत्य दोउ, मिले परस्पर चाहि ।
यह छाडतु नहि ताहि त्यौ, वह छाडतु नहि याहि ॥

धनि तेरी तपधीरता, धनि गुणगण गभीर ।
या कलि मे गाधी तुही, इक सत्याग्रह बीर ॥

नही बिचल्यौ सत पथ ते, सहि असह्य दुखद्वद ।
कलि मे गाधीरूप ह्वै, प्रगट्यौ पुनि हरिचद ॥

हसत हसत निज धर्म पै, दियौ जु सीसु चढाय ।
धर्मसमर मे मरि भयौ, अमर हकीकतराय ॥

सुरतरु लै कीजै कहा, अरु चितामणि ढेरु ।
इक दधीचि की अस्थि पै, बारिय कोटि सुमेरु ॥

करि कादर सो मित्रता, कहा लाभ है मीत ।
सत्रुताहु रणसूर प्रति, मगलमूर्ति पुनीत ॥

कहतु कौन कायर तुम्हे, बल सायर रण माहि ।
भभरि भाजिबो पीठि दै, सब के बस कौ नाहि ॥

मति मनमानिक सौपियो, कुटिल कादरनु हाथ ।
है वै ही सत जौहरी, नहि निज धर पै नाथ ॥

औघट घाट कृपाण कौ, समरधार बिनु पार ।
सन्मुख जे उतरे तरे, परे बिमुख मझधार ॥

पैरि पार असिधार कै, नाघि युद्ध नद भीर ।
भेदि भानुमडलहि अब, चल्यौ कहा रणधीर ॥

लरतु काल सो लाख मे, कोइ माई को लाल ।
कहु केते करवाल को, करत कंठ कलमाल ॥

धन्य भीम ? रणधीर तू, धरि अरि छाती पाव।
भरि अजुरिनि शोणितु पियौ, इन मूछहि दै ताव ।।

धन्य कर्ण ! रिपुरक्त सो, दियो पूरि रण-कुड।
करि कंदुक अति चाव सो, उछरि उछारे मुड ।।

प्राण हथेरी पर धरे, किए ओजमदपान।
तबर तीर तलवार लै, चलै जूझिबै ज्वान ।।

छत्रिय छत्रिय कहे ते, छत्रिय होय न कोय।
सीसु चढावै खड्ग पै, छत्रिय सोई होय ।।

जोरि नाम संग सिह पदु, कियौ सिह बदनाम।
ह्वैहै क्यो करि सिह यों, करि श्रृगाल के काम ।।

वह दिनु वह छिनु वह घरी, पुनि पुनि आवत नाहि।
हिलुरि हिलुरि जब हस ए, समर माहि अवगाहि ।।

कादर तौ जीवत मरत, दिन मे बार हजार।
प्रानपखेरू बीर के, उडत एक ही बार ।।

अरे फिरत कत बावरे, भटकत तीरथ भूरि।
अजौ न धारत सीस पै, सहज सूरपगधूरि ।।

तह पुष्कर तह सुरसरी, तहं तीरथ तप याग।
उठ्यो सुबीरकबध जहं, तहंई पुण्य प्रयाग ।।

कै कृपाण की धार, कै अनल कुड कौ ठाठ।
ए ही बीरबधून के, द्वै अन्हान के घाट ।।

सुभटसीस सोनित सनी, समरभूमि धनि धन्य।
नहि तो सम तारणतरण, त्रिभुवन तीरथ अन्य ।।

नमो नमो कुरुखेत ! तुव, महिमा अकथ अनूप।
कण कण तेरो लेखियतु, सहसतीर्थप्रतिरूप ।।

जो जन लोभी सीस के, ते अधीन दिन दीन ।
सीसु चढाये बिनु भयौ, कहौ कौन स्वाधीन ॥
एक ओर स्वाधीनता, सीसु दूसरी ओर ।
जो दो मे भावै तुम्है, भरि सो लेहु अकोर ॥
चाहौ जो स्वाधीनता, सुनौ मत्र मन लाय ।
बलिवेदी पै निज करन, निज सिरु देहु चढाय ॥
सौप्यौ स्वामिहि कोउ जन, कोउ धन हिय गय ठौरु ।
पै वह सहजै सौपि सिरु, भयौ सबनु सिरमौरु ॥
लै वल बिक्रम बीन कवि !, किन छेडत वह तान ।
उठै डोलि जेहि सुनत ही, धरा मेरु ससि भान ॥
लै निज तंत्री छेड दै कवि !, वह राग अभग ।
उठै धरा ते ओज की, नभ लगि तुग तरंग ॥
अव नख सिख सिगार के, पढत कवित कमनीय ।
आजु लाल भूषण सरिस, रहे न कवि जातीय ॥
सिवाभुजससरसिज सुरस, मधुकर मत्त अनन्य ।
रसभूषण भूषण सुकवि, भूषण, भूषण धन्य ॥
रिपुगण सुनि भूषण कवितु, क्यो न होय सरविद्ध ।
जाकी रसना पै सदा, रहति चडिका सिद्ध ॥
एकछत्र बन कौ अधिप, पचानन ही एक ।
गजशोणित सो आप ही, कियौ राज-अभिषेक ॥
कापितु कोपित केहरी, मुहु बाये बिकराल ।
रहै धधकि अगार कै, प्रलयकाल के लाल ॥
छिन्न भिन्न ह्वै उर्डात क्यों, सद भौरन की भीर ।
दार्‍यो कुभ करीद्र कौ, कहूं केहरी बीर ॥

पराधीन सबु देखियतु, बल बीरज ते बीन।
या कानन में केसरी ! इक तू ही स्वाधीन।

या तनुवारिधि में सदा, खेलत अतनु तरग।
उमगेगी क्यो करि कहौ, ता मधि युद्ध उमग॥

होति लाख मै एक कहु, अनल वर्न वह आख।
देखत ही दह करति जो, दुवनदीहदलु राख॥

सुभट-नयन अगारु पै, अचरजु एकु लखातु।
ज्यौं ज्यौं परतु उमाह-जलु, त्यौं त्यौ धधकत जातु॥

जाव फूटि रतिरगरली, अलसौही वह आख।
सहज-ओज-ज्वाला-ज्वलित, चिर जीवौ जुग लाख॥

सुरत-रग कहं दृगनि मै, कह रण-ओज उदोतु।
या ते उज्ज्वल होतु मुखु, वा ते कज्जल होतु॥

बसति आपु लघु म्यान मे, वह कृपान लघु गात।
त्रिभुवन मे न समातु पै, सुजसु तासु अवदात॥

तडिन और तरवार मे, समता किमि ठहराय।
ज्यौं ही यह चमकनि दमकि, त्यौं ही वह दुरि जाय॥

वह नागी तरवार हू, बनी लजीली नारि।
नहि खौल्यौ मुख म्यान ते, ह्वै मनु परदावारि॥

इन नर सारंग पै चढतु, चढि रागत रण रागु।
उत अरि-अंगना अग ते, उतरतु सहज सुहागु॥

गोघातक वा बाघकी, जननि खैंचिहौ पूछ।
तीखन डाढैं तोरिहौ, अरु उखारिहौ मूछ॥

प्रेम-मरमु जानै कहा, विषयी कायर कूर।
इक साचो रणसूर ही, पहिचानतु रसमूर॥

रे विषयी प्रेमी बनत, नैक न लागति लाजु ।
केते कठिन कपोत व्रत, पालन हारे आजु ॥
सब तो साचे मे ढरे, ढरे न ए द्वै ढार ।
प्रेम मेड रखवार औ, सीसु-चढावन हार ॥
मथि मथि अच्छरनिधि मरे, कढ्यौ न कछु वै सार ।
इक प्रेमी इक सूरमा, भये उतरि भव पार ॥
और अस्त्र केहि काम के, प्रेम अस्त्र जो साथ ।
प्रेम रथी के हाथ हैं, महारथिनु के माथ ॥
खड खंड ह्वै जाव पै, धर्म न तजियौ एक ।
सपथ लाल या खग की, रहियौ गहि कुल टेक ॥
कह्यौ माय मुख चूमि कै, कर गहाय करवाल ।
जनि लजाइयौ दूध मो, पयोधरनु कौ लाल ॥
चूर चूर ह्वै अंत लौ, रखियौ कुल की लाज ।
जननि दूध पितु खग की, अहै परिच्छा आज ॥
लोटि लोटि जापै भये, धूरि–धूसरित आज ।
वत्स तुम्हारे हाथ है, ता धरनी की लाज ॥
मिलतु न पत्रा मे सुदिनु, भिरत न कादर मद ।
नहि सोधत रणबांकुरे, नखत बार तिथिचद ॥
रहिहौ अस्त्र गहाय हरि, रखि निज प्रण की लाज ।
कै अब भीषम ही यहा, के तुम ही यदुराज ॥
इत पारथ रथसारथी, उत भीषम रणधीर ।
तिल हू नहि टारे टरै, दुहू वज्र प्रण वीर ॥
भानु अस्त लौ आजु जौ, बच्यौ जयद्रथ जीव ।
चिता लाय तनु जारिहौ, तोर तोर गाडीव ॥

लै न सक्यौ हरि! आजु जौ, अधम जयद्रथ जीव।
तौ पारथ हौ क्लीब अब, नहि लैहौ गाडीव॥

मूछ न तौ लौ ऐठिहौ, हौ प्रताप-पुजहीन।
करि पायो जौ लौ न मै, गढ चितौर स्वाधीन॥

महल नाहि पगु धारिहौ, रहिहौ कुटी छवाय।
हौ प्रताप जौ लौ न ध्वज, दई फेरि फहराय॥

मिलियौ तह परखति प्रिये! मिलिहौ सरवसु वारि।
विसिख हारु हौ पौन्हि तुम, ज्वालमाल उर धारि॥

सुमृदु सिरीष प्रसून ते, कठिन बज्र ते होय।
प्रकृति बीरबर हीय कौ, चित्र न खीच्यौ कोय॥

झासी दुर्गम दुर्ग धनि, महिमा अमित अनूप।
जहा चचला अवतरी, प्रगट चडिका रूप॥

पराधीनता दुखभरी, कटति न काटे रात।
हा स्वतत्रता को कबै, ह्वैहै पुण्य प्रभात॥

अथयौ वीर प्रताप रवि, भावन भारत माझ।
अब तौ आई दुखमई, अधिक अधेरी साझ॥

निजता सो तो बैरु अब, है परता सो प्रीति।
निज तौ पर, पर निज भये, कहा दई यह रीति॥

परभाषा परभाव, परभूषन परपरिधान।
पराधीन जन की अहै, यह पूरी पहिचान॥

दंभ दिखावत धर्म कौ, यह अधीन मतिअध।
पराधीन अरु धर्म कौ, कहो कहा सबध॥

जैहै डूबि घरीक मे, भारत सुकृत समाज।
सुदृढ सौर्य बल वीर्य कौ, रह्यौ न आज जहाज॥

जरि अपमान अगार ते, अजहु जियत ज्यौ छार।
क्यो न गर्भ मे मरि गिर्‍यो, निलज नीच भूभार ॥
दई छाडि निज सभ्यता, निज समाज निज राज।
निज भाषा हू त्यागि तुम, भये पराये आज ॥
मरनु भलो निज धर्म मे, भयदायक परधर्म।
पराधीन जानै कहा, यह निज पर कौ मर्म ॥
तुच्छ स्वर्ग हू गिनतु जो, इक स्वतत्रता काज।
बस वाही के हाथ है, आज हिद की लाज ॥
भीख सरिस स्वाधीनता, कन कन जाचत सोधि।
अरे ! मसक की पासुरिनु, पाट्यौ कौन पयोधि ॥
अणु अणु पै मेवाड के, छगी तिहारी छाप।
तेरे प्रखर प्रताप ते, राणा प्रबल प्रताप ॥
जगत जाहि खोजत फिरै, सो स्वतत्रता आप।
बिकल तोहि हेरति अजौ, राणा निठुर प्रताप ॥
ओ प्रताप ! मेवाडपति ! यह कैसो तुव काम ?
खात खलनु तुव खग पै, होत कालकौ नाम ॥
गरब करत कत बावरे, उलघि उच्च गिरिशृग।
जसगौरव सिवराज कौ, इत नभ ते हु उतग ॥
पराधीनतासिधु मधि, डूबत हिदू हिद।
तेरे कर पतवार अब, पतधर गुरु गोविद ॥
माथ रहौ वा ना रहौ, तजै न सत्य अकाल।
कहत कहत ही चुनि गये, धनि गुरु गोविदलाल ॥
अरे अहेरी ! यह कहा, कायर करत अहेर।
क्यो न लपकि ललकारि तू, पकरि पछारत शेर ॥

बम काढो मत म्यान ते, यह तीछन तरवार।
जानत नहि ठाडे यहा, रसिक छैल सुकुमार ।।
कवच कहा ये धारिहै, लचकीले मृदु गात।
सुमनहार के भार जे, तीन तीन बल खात ।।
कहा भयो इक दुर्ग जो, ढायो रिपु रणधीर।
तुम तो मानिनिमानगढ, नित ढाहत रतिबीर ।।
सुमनसेजसग बाल तुम, पौढे करि सिगार।
को भीषमसर सेज की, अब पतराखनहार ।।
एहै कहु केहि काम ए, कादर कामअधीर।
तियमृगईछन ही जिन्है, है अति तीछन तीर ।।
बरषत विषम अगार चहु, भयौ छार वर बाग।
कविकोकिल कुहकत तऊ, नव दपतिरतिराग ।।
सुख सपति सब लुटि गयौ, भयौ देस उर घाय।
कनककिकिनी की अजौ, सुनत झनक कविराय ।।
तियकटिकृसता कौ कविनु, नित बखानु नव कीन।
वह तौ छीन भई नही, पै इनकी मति छीन ।।
मरत पूत उत दूध विनु, बिलपत बिकल किसान।
इत बैठ्यो सठ करत तै, मग कामिनि मदपान ।।
बृष रवि आतप तपि कृपक, मरत कलपि बिनु नीर।
इत लेपत तुम अरगजै, बिरमि उसीर कुटीर ।।
उत हाकिम रैयतरकत, करत पान उर चीर।
इत पीवत तै मद अरे! नृपति मनोजअधीर ।।
लखि जिनके मजबूत भुज, कापत है यमदूत।
भारतभू पै अब कहा, वै बाके रजपूत ।।

रे निलज्ज ! जिनके अछत, अरिहि झुकायौ माथ ।
अब तिन मूछन पै कहा, पुनि पुनि फेरत हाथ ।।

कह प्रताप कह दाप वह, कहा आन कह बान ।
कहा ऐंड़ वह मेड़ अब, है सब सूखी शान ।।

अब कोयल ! वह ऋतु कहा, कह कूजनतरुडार ।
वह रसाल रसबौर कह, वह बन बिहगबिहार ।।

ह्वैहौ पुनि स्वाधीन तुम, सदा न रहिहौ दास ।
या युग के बलिदान कौ, लिखियौ तब इतिहास ।।

आजु कालि कब ते करत, भये न अबहू तयार ।
घलाघली उत ह्वै रही, इत माजत हथियार ।।

भूलेहु कबहु न जाइये, देसविमुख जन पास ।
देसबिरोधी संगते, भलौ नरक कौ बास ।।

तन कारो कारो कुदिन, कारो कुल गृह गोत ।
पै कुरूपवारेनु कौ, हियौ न कारो होत ।।

चित्र आर्य साम्राज्य कौ, सक्यौ न कोउ उतारि ।
चीन ग्रीसहू के गये, चतुर चतेरे हारि ।।

ऐहैं याही ठौर हम, कहा फिरे जग होत ।
जैसे पछी पोत कौ, उडि आवतु पुनि पोत ।।

अथयौ सौ अथयौ न पुनि, उनयो भीषममान ।
आर्यशक्तिजयपद्मिनी, परी तबहि ते म्लान ।।

कठिन राम कौ नाम है, सहज राम कौ नाम ।
करत राम कौ काम जे, परत राम सो काम ।।

चूसि गरीबनु को रकतु, करत इन्द्रसम भोग ।
तउ 'गरीबपरबर' उन्हें, कहत कहो ए लोग ।।

नभ जिमि बिन ससि सूरके, जिमि पछी बिन पाख ।
बिना जीव जिमि देह तिमि, बिना ओज यह आख ।।

इन नैननि किन राखिये, दुखित दूबरे दीन ।
कीजै निज बलिदान दै, दलित देस स्वाधीन ।।

कलपावत कब ते हमे, धारि निठुरता रूप ।
करुनाधन ! तुम हू भये, आजकालि के भूप ।।

———

रामनरेश त्रिपाठी

तेरी छवि

हे मेरे प्रभु व्याप्त हो रही है, तेरी छवि त्रिभुवन मे ।
तेरी ही छवि का विकास है, कवि की वाणी मे मन मे ।।
माता के नि स्वार्थ नेह मे, प्रेममयी की माया मे ।
बालक के कोमल अधरो पर, मधुर हास्य की छाया मे ।।
पतिव्रता नारी के बल मे, वृद्धो के लोलुप मन मे ।
होनहार युवको के निर्मल, ब्रह्मचर्यमय यौवन मे ।।
तृण की लघुता मे पर्वत, की गर्वभरी गौरवता मे ।
तेरी ही छवि का विकास है, रजनी की नीरवता मे ।।
उषा की चचल समीर मे, खेतो मे खलियानो मे ।
गाते हुए गीत सुख दुख के, सरलस्वभाव किसानो मे ।।
श्रमी किंतु निर्धन मजूर की, अति छोटी अभिलाषा मे ।
पति की बाट जोहती बैठी, गरीबनी की आशा मे ।।
भूख प्यास से दलित दीन, की मर्मभेदिनी आहो मे ।
दुखिया के निराश आसू मे, प्रेमीजन की राहो मे ।।
मुग्ध मोर के सरस नृत्य मे, कोकिल के पचम स्वर मे ।
वन पुष्पो के स्वाभिमान मे, कलियो के सुदर घर मे ।।
निर्जनता की व्याकुलता मे, सध्या के सकीर्तन मे ।
तेरी ही छवि का विकास है, संतत परहितचितन मे ।।
खोल चद्र की खिडकी जब तू, स्वर्गसदन मे हसता है ।
पृथ्वी पर नवीन जीवन का, नया विकास विकसता है ।।
जी मे आता है किरणो मे, घुल कर पल भर मे ।
बरस पडू मै इस पृथ्वी पर, विस्तृत शोभासागर मे ।।

अन्वेषण

मै ढूढता तुझे था जब कुज और वन मे।
तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन मे॥
तू आह बन किसी की मुझ को पुकारता था।
मै था तुझे बुलाता सगीत मे भजन मे॥
मेरे लिये खडा था दुखियो के द्वार पर तू।
मै बाट जोहता था तेरी किसी चमन मे॥
बन कर किसी के आसू मेरे लिये बहा तू।
आखे लगी थी मेरी तब यार के बदन मे॥
बाजे बजा बजा के मै था तुझे रिझाता।
तब तू लगा हुआ था पतितो के सघटन मे॥
मै था विरक्त तुझ से जग की अनित्यता पर।
उन्थान भर रहा था तब तू किसी पतन मे॥
बेबस गिरे हुओ के तू बीच मे खडा था।
मै स्वर्ग देखता था झुकता कहा चरन मे॥
तू ने दिये अनेको अवसर न मिल सका मैं।
तू कर्म मे मगन था मै मस्त था कथन मे॥
हरिचद और ध्रुव ने कुछ और ही बताया।
मै तो समझ रहा था तेरा प्रताप धन मे॥
मै सोचता तुझे था रावण की लालसा मे।
पर था दधीचि के तू परमार्थ रूप तन मे॥
तेरा पता सिकदर को मै समझ रहा था।
पर तू बसा हुआ था फरहाद कोहकन मे॥

क्रीसस की हाय मे था करता विनोद तू ही।
तू अत मे हंसा था महमूद के रुदन मे॥
प्रह्लाद जानता था तेरा सही ठिकाना।
तू ही मचल रहा था मसूर की रटन मे॥
आखिर चमक पडा तू गाधी की हड्डियो मे।
मै था तुझे समझता सुहराब पील तन मे॥
कैसे तुझे मिलूगा जब भेद इस कदर है।
हैरान हो के भगवन्! आया हूं मै सरन मे॥
तू रूप है किरन मे सौदर्य है सुमन मे।
तू प्रान है पवन मे विस्तार है गगन मे॥
तू ज्ञान हिन्दुओ मे ईमान मुस्लिमो मे।
तू प्रेम क्रिश्चियन मे है सत्य तू सुजन मे॥
हे दीनबधु! ऐसी प्रतिभा प्रदान कर तू।
देखू तुझे दृगो मे मन मे तथा वचन मे॥
कठिनाइयो दुखो का इतिहास ही सुयश है।
मुझ को समर्थ कर तू बस कष्ट के सहन मे॥
दुख मे न हार मानू सुख मे तुझे न भूलू।
ऐसा प्रभाव भर दे मेरे अधीर मन मे॥

सूर्यकांत त्रिपाठी

नयन

मदभरे ये नयन नलिन मलीन है।
अल्प जल मे या विकल लघु मीन है ?
या प्रतीक्षा मे किसी की शर्वरी-
बीत जाने पर हुए ये दीन है।।
या पथिक से लोल लोचन कह रहे-
हम तपस्वी हैं सभी दुख सह रहे,
गिन रहे दिन ग्रीष्म वर्षा शीत के,
कालतालतरंग मे हम बह रहे।
मौन है पर पतन मे उत्थान मे,
वेणुवर वादननिरत विभुगान मे,
है छिपा जो मर्म उसका, नहि समझते,
किंतु तो भी है उसी के ध्यान मे।।
आह ! कितने विकल जन मन मिल चुके,
खिल चुके कितने हृदय हैं हिल चुके,
तप चुके वे प्रियव्यथा की आंच मे,
दुःख उन अनुरागियो के झिल चुके।।
क्यो हमारे ही लिये वे मौन है ?
पथिक !-वे कोमल कुसुम है कौन है ?

यमुना के प्रति

कस अतीत का दुर्जय जीवन, अपनी अलको मे सुकुमार।
कनककुसुम सा गूथा तू ने, यमुने ! किस का रूप अपार ?

निर्निमेष नयनो मे छाया, किस विस्मृतिमदिरा का राग ?
अब तक पलको मे पुलको मे, छलक रहा है विपुल सुहाग !
मुक्त हृदय के सिहासन पर, किस अतीत के वे सम्राट।
दीप रहे जिन के मस्तक पर, रवि शशि तारे विश्व विराट ?

स्मृति

जटिल जीवनमद मे तिर तिर, डूब जाती हो तुम चुपचाप।
सतत द्रुत गतमयि अयि फिर फिर, उमड करती हो प्रेमालाप ।।
सुप्त मेरे अतीत के गान, सुना प्रिय हर लेती हो ध्यान।

सफल जीवन के सब असफल, कही की जीत कही की हार ।।
जगा देता है गीत सकल, तुम्हारा ही निर्भय झकार।
वायुव्याकुल शत दल से हाय, विमल रह जाता हू निरुपाय !

मुक्त शैशव मृदु मधुर मलय, स्नेहकपित किसलय लघुगात।
कुसुम अस्फुट नव नव सचय, मृदुल वह जीवनकनकप्रभात ।।
आज निद्रित अतीत मे बद, तात वह गति, वह लय, वह छद।

आसुओ से कोमल झरझर, स्वच्छ निर्झर जल कण से प्राण ।।
सिमट सटपट, अतर भर भग, जिसे देते थे जीवनदान।
वही चुबन की प्रथम हिलोर, स्वप्न स्मृति, दूर अतीत अछोर !

तृप्ति वह तृष्णा की अविकृत, स्वर्ग आशाओ की अभिराम।
क्लाति की सरल मूर्ति निद्रित, गरल की अमृत अमृत की प्राण ।।
रेणु सी किस दिगंत मे लीन ? वेणुध्वनि सी न शरीराधीन।

तुम और मैं

तुम तुंगहिमालयश्रृंग और मै चचलगति सुरसरिता।
तुम विमलहृदयउच्छ्वास और मै कानकामिनी कविता॥
तुम प्रेम और मैं शाति
तुम सुरापानघनअधकार,
मैं हू मतवाली भ्राति।
तुम दिनकर के खर किरणजाल मैं सरसिजकी मुसकान।
तुम वर्षा के बीते वियोग मैं हूँ पिछली पहिचान॥
तुम योग और मैं सिद्धि।
तुम हो रागानुग निश्छल तप,
मैं शुचिता सरल समृद्धि॥
तुम मृदुमानस के भाव और मैं मनोरंजिनी भाषा।
तुम नदनवनघनविटप और मैं सुखशीतलतलशाखा॥
तुम प्राण और मैं काया।
तुम शुद्ध सच्चिदानद ब्रह्म,
मैं मनोमोहिनी माया।
तुम प्रेममयी के कठहार मैं वेणी कालनागिनी।
तुम करपल्लवझकृत सितार मैं व्याकुलविरहरागिनी॥
तुम पथ हो मैं हू रेणु।
तुम हो राधा के मनमोहन,
मैं उन अधरो की वेणु॥
तुम पथिक दूर के श्रात और मैं बाट जोहती आशा।
तुम भवसागर दुस्तार पार जाने की मैं अभिलाषा॥

तुम नभ हो मैं नीलिमा।
तुम शरद सुधाकरकलाहास,
मैं हू निशीथमधुरिमा।।
तुम गधकुसुमकोमलपराग मैं मृदुगति मलयसमीर।
तुम स्वेच्छाचारी युक्त पुरुष मैं प्रकृतिप्रेमजजीर।।
तुम शिव हो मैं हू शक्ति।
तुम रघुकुलगौरव रामचद्र,
मैं सीता अचला भक्ति।।

तुम हो प्रियतम मधुमास और मैं पिक कलकूजननान।
तुम मदन पचशरहस्त और मैं हू मुग्धा अनजान।।
तुम अबर मैं दिग्वसना।
तुम चित्रकार घनपटलश्याम,
मैं तडित्तूलिकारचना।।

तुम रणताडवउन्माद नृत्य मै युवतिमधुरनूपुरध्वनि,
तुम नाद वेद ओकारसार मैं कविश्रृगारशिरोमणि।।
तुम यश हो मैं हू प्राप्ति।
तुम कुंदइदुअरविद शुभ्र,
तो मैं हूँ निर्मल व्याप्ति

———

सुमित्रानंदन पंत

छाया

कहो कौन दमयती सी तुम, तरु के नीचे सोई?
हाय! तुम्हे भी त्याग गया क्या, अलि! नल सा निष्ठुर कोई?
नीले पत्तो की शय्या पर तुम विरक्ति सी मूर्छा सी
विजन विपिन मे कौन पड़ी हो, विरहमलिन दुखविधुरा सी?

पछनावे की परछाई सी तुम, भू पर छाई हो कौन?
दुर्बलता की अगडाई सी, अपराधी सी, भय से मौन?
निर्जनता के मानसपट पर, बार बार भर ठडी सास—
क्या तुम छिप कर क्रूर काल का, लिखती हो अकरुण इतिहास?

निज जीवन के मलिन पृष्ठ पर नीरव शब्दो मे निर्झर
किस अतीत का करुण चित्र तुम, खीच रही हो कोमलतर!
दिनकर कुल मे दिव्य जन्म पा, बढ कर नित तरुवर के सग
मुरझे प्रत्तो की साडी से, ढक कर अपने कोमल अग

सदुपदेश सुमनो से तरु के, गूथ हृदय का सुरभित हार,
परसेवारत रहती हो तुम, हरती नित पथश्राति अपार।
हा सखि आओ बाह खोल हम, लग कर गले जुडा ले प्राण।
फिर तुम तम मे मै प्रियतम मे, हो जावे द्रुत अतर्धान॥

मुसकान

कहेगे क्या मुझ से अब लोग, कभी आता है इसका ध्यान!
रोकने पर भी तो सखि हाय! नही रुकती है यह मुसकान

विपिन मे पावस के से दीप, सुकोमल सहसा सौ सौ भाव
सजग हो उठते नित उर बीच, नही रख सकती तनिक दुराव!
कल्पना के ये शिशु नादान, हसा देते है मुझे निदान!

तारको से पलको पर कूद, नीद हर लेते नव नव भाव
कभी बन हिमजल की लघु बूद, बढाते मुझ से चिर अपनाव,
गुदगुदाते ये तन मन प्राण, नही रुकती तब यह मुसकान
कभी उडते पत्तो के साथ मुझे मिलते मेरे सुकुमार,

बढा कर लहरो से निज हाथ बुलाते फिर मुझ को उस पार,
नही रखती मै जग का ज्ञान, और हस पडती हू अनजान,
रोकने पर भी तो सखि! हाय! नही रुकती तव यह मुसकान॥

मधुकरी

सिखा दो ना हे मधुपकुमारि! मुझे भी अपने मीठे गान।
कुसुम के चुने कटोरो से, करा दो ना कुछ कुछ मधु-पान॥

नवल-कलियो के धोरे झूम, प्रसूनो के अधरो को चूम।
मुदित, कवि-सी तुम पाठ, सीखती हो सखि! जग मे घूम।
सुना दो ना तब हे सुकुमारि! मुझे भी ये केसर के गान॥

किसी के उर मे तुम अनजान! कभी बध जाती बन चित-चोर
अधखिले, खिले सुकोमल-गान, गूथती हो फिर उड उड भोर
मुझे भी बतला दो न कुमारि! मधुर निशि-स्वप्नो के वे गान?

सूघ चुन कर सखि सारे फूल, सहज बिध बिध निज सुख-दुख भूल
सरस रचती हो ऐसा राग, धूल बन जाती है मधुमूल

पिला दो ना तव हे सुकुमारि! इसी से थोडे मधुमय-गान।
कुसुम के खुले कटोरो से, करा दो ना कुछ कुछ मधुपान।

चाह

म नही चाहता चिर-सुख, चाहता नही अविरत-दुख,
सुख-दुख की खेल-मिचौनी, खोले जीवन अपना मुख।
सुख-दुख के मधुर मिलन मे, यह जीवन हो परिपूरन,
फिर घन मे ओझल हो शशि, फिर शशि से ओझल हो घन।
जग पीडित है अति दुख से, जग पीडित है अति सुख से,
मानव जग मे बट जावे, दुख सुख औ सुख दुख से।
अविरत दुख है उत्पीडन, अविरत सुख भी उत्पीडन,
दुख-सुख की निशा-दिवा मे, सोता-जगता जग जीवन।
यह साझ-उषा का आगन, आलिगन विरह-मिलन का।
चिर हास-अश्रुमय आनन, रे! इस मानव जीवन का।।

बरसो

जग के उर्वर आगन मे, बरसो ज्योतिर्मय जीवन।
बरसो लघु-लघु तृण, तरु पर, हे चिर अव्यय नित-नूतन!
बरसो कुसुमो मे मधु बन, प्राणो मे अमर प्रणय-धन,
स्मिति-स्वप्न अधर-पलको मे, उर-अगो मे सुख यौवन?
छू-छू जग के मृत रज-कण, कर दो तृण तरु मे चेतन;
मृन्मरण बाध दो जग का, दे प्राणो का आलिगन!
बरसो सुख बन, सुखमा बन, बरसो जग-जीवन के धन;
दिशि-दिशि मे औ पल-पल मे, बरसो ससृति के सावन।

श्री गुलाबरत्न

कवि की पूजा

कंचन-डाली मे न सजे है, जवा-कुसुम चपा के फूल,
मेरी क्रोधभरी आखो के, जहर अश्रु तुम करो कबूल।
अपने खप्पर मे रह रह कर, गर्म खून मै भरता हू;
ज्वालामुखी समान फूट कर, अग्नि आरती करता हू,
चिताभस्म गिर गई धूल मे, पागल बना किशोर घमड,
दो त्रिपुड तुम हृदयरक्त का, हे प्रलयकर रौद्र प्रचंड।
हूल रहा हू पापपुरी मे, मै त्रिशूल बनकर जल्लाद;
नरमुडो की भीषण माला, पहन मुझे दो आशीर्वाद।
ताडव नृत्य करो हे शकर, बन मम कविता के अक्षर,
बिजली बनकर चमक पडो तुम, श्याम घनो मे प्रलयकर।
फिर भुजग से फुफकारो तुम, दुनिया के भक्षक विकराल;
कोलाहल मे क्राति मचाओ, करुणाहीन अनोखे काल।
ले आऊ नैवेद्य कहा से, छूछा है स्वार्थी ससार,
देख देख मै ऊब रहा हू, तव आलस्यभरा दरबार।
घडी घडी इन लघु चरणो मे, मस्तक मै न झुकाऊगा,
उन्मादिनी सैन्य मे तुमको, मै निज नाथ बनाऊगा।

आंधी

पगली विषम वायु, मै हू नगयदिनी सी,
मै हू यमदूतिका, करालिका करालिनी,
मै हू फुफकारती भुजगिनी प्रमत्त एक,
कालकट तुल्य शीघ्र मृत्युचक्रचालिनी।

विकट, पिशाचिनी, कुरूपा भी प्रपचभरी,
मै हूं अभिमन्युयुद्ध–चाल–प्रण चालिनी,
चुनती नुकीले कुल–कटक कठोर दृढ,
करू रखवाली विश्ववाटिका की मालिनी ।

भीषण अनत माम, नायिका अधर्मभरी,
पी अति अप्रीति–मद–प्याले मस्त झूमती,
खून कर देती खून चूसने पडे जो नित्य,
घोट अभिमानी गले, ध्यानभरी घूमती ।
उद्भट अपार, मै न डूबती अचभे बीच,
कभी वरवरो के भी चरण न चूमती;
जाती दुतकारी, पर मार किलकारी, नगी,
नाचती कृपाण सी प्रचड मै न ऊवती ।

धाराधर कृष्णवर्ण पूर्व के अनेक उठे,
पश्चिम दिशा मे खीच दक्खिन दिखाऊगी,
गरज गिरेगी गाज, प्रलय मचेगा घोर,
शकरसमान रण भीषण मचाऊगी ।
बन के अभागिनी न लूगी निज आखे मूद,
वासर उजाड तम अधम उठाऊगी'
बरस पडेगे मेघ लोचन बिलोक छवि,
तरणी अनोखी मझधार मे डुबाऊगी ।।

कलम कवीश्वर के कर से पडेगी छूट,
दुर्जन दबेगे, शाति शातिहीन पावेगे,
सूम कासा सोना लाल लेगी छिपा गोद मे मा,
भूत वर्तमान त्यो भविष्य भूल जावेगे ।

मोद मुसकान मे गिरेंगे गर्म आसू टूट,
कपित तरग सातो सागर उठावेगे,
दूगी लगा आग, जल जायेगे कलेजे कुल,
यत्र, मत्र, तत्र काम एक भी न आयगे ॥

विरही रहा जो मर पाकर विजन मौन,
ध्यान सजनी का धरे रजनी बिताता है,
कटक सरीखा महा दुर्बल शरीर लिये,
बैठ–उठ जाता नही, चिंतित दिखाता है।
जीवन जलाता, शीष फोडता अभागी बन,
पागल पुराना बात बेतुकी उडाता है,
मार मार धक्के खोल दूगी दृग अतर के,
मूढ देख सामने कराल काल आता है ॥

खड़ी जो विनोद भरी सुदरी समुद्र तीर;
बालिका समान क्या भरेगी सिसकारिया;
नागिन लटे जो लहराती माथ अचल के,
झपट उडेगी ले कपोल चुमकारिया।
रोष मे भरेगी तान भौहे तलवार तुल्य,
फेक लोचनों से अविराम चिनगारिया;
सबला बला सी बनी अबला करेगी धूम,
खाक मे मिलेगी फली-फूली फुलवारिया ॥

यौवन सरीखे मस्त झूम जो रहे है द्रुम,
पटक पहाड़ो मे हसूगी यम–जाली मै,
वल्लिया उखाड़, बेलिमडप उजाड़ चट,
छिन्न भिन्न दूगी कर पत्र बला काली मै।

खिले जो प्रसून हैं जुही के तारो पी के तुल्य,
नोच अमरो मे उडा दू गी, भय पाली मैं,
दीपक घरो के बुझा, देख दुनिया के दृश्य,
लौट ही पडूगी, ले कलक मतवाली मैं ॥

अंधकार

हत्याकर प्रचड रवि की, आखे फोड़ किसी छवि की,
चिता भूमि पर नग्न नाच तू, लील रहा है किस की लाश ?
अरे भयकर सत्यानाश ?
चक्र सुदर्शन ! विद्रोही, निपट निरकुश ! निर्मोही,
क्षमाहीन दुर्वासा सा तू टहल रहा है क्यो उस पार ?
विश्व-शक्ति का कर सहार !
रत्नाकर समान वन मे, लट बटोही मुख छन मे।
खून पीरहा गदगद तू, किस दुर्बल का उदर विदार ?
ओ प्रलयकर भीम विकार !
फैल निकट बादल-दल सा, खेल खेल खूनी खलसा,
मूर्ख ! बना भूकप भयानक, कपा रहा क्यो कलियुग-प्राण ?
अरे नीच निश्चर! पाषाण!
ओ पिशाच चुपके चुपके, विटप-ओट मे छुप-छुपके,
किधर आ रहा तू बर्बर सा अभिसारिका बधू के साथ ?
अट्टहास कर अरे अनाथ !
बन भूखा भुजग काला, जहर उगलता मतवाला,
फुफकारता रेगता है क्यो, देश-देश मे ओ दिग्भ्रांत ?
कालरूप धारण कर क्लांत !

बीहड गुप्त गुफावासी, क्रूर जितेंद्रिय सन्यासी,
हवनकुड मे होम रहा है, किस विनाश का कर बलिदान ?
निशाकलकिनिका कर ध्यान!
देख इधर दीपक-बाला, जला रही धक धक ज्वाला,
भाग शीघ्र सरपट, समेट तू, चिरकुट माया जाल-विशाल !
अरे शूद्र! पागल सम्राट !

सुभद्राकुमारी चौहान

समर्पण

सूखी सी अधखिली कली है, परिमल नही पराग नहीं ।
किन्तु कुटिल भौरो के चुम्बन का, है इस पर दाग नही ।।
तेरी अतुल कृपा का बदला, नही चुकाने आई हू ।
केवल पूजा मे ये कलिया, भक्तिभाव से लाई हू ।।
प्रणयजलपना चित्यकल्पना, मधुर वासनाए प्यारी ।
मृदु अभिलाषा विजयी आशा, सजा रही थी फुलवारी ।।
किंतु गर्व का झोका आया, यद्यपि गर्व था यह तेरा ।
उजड गई फुलवारी सारी, बिगड गया सब कुछ मेरा ।।
बची हुई स्मृति की कलिया, मै बटोर कर लाई हूँ ।
तुझे सुझाने तुझे रिझाने, तुझे मनाने आई हूँ ।।
प्रेमभाव से हो अथवा हो, दयाभाव से ही स्वीकार ।
ठुकराना मत इसे जान कर, मेरा छोटा सा उपहार ।।

बालिका का परिचय

यह मेरी गोदी की शोभा, सुख सुहाग की है लाली,
शाही शान भिखारिन की है, मनोकामना मतवाली ।
दीपशिखा है अधेरे की, घनी घटा की उजियाली,
ऊषा है यह कमलभृंग की, है पतझड की हरियाली ।
सुधाधार वह नीरस दिल की, मस्ती मगन तपस्वी की,
जीवित ज्योति नष्ट नयनो की, सच्ची लगन मनस्वी की ।
बीते हुए बालपन की यह, क्रीडापूर्ण वाटिका है,
वही मचलना वही किलकना, हसती हुई नाटिका है ।

मेरा मंदिर मेरी मसजिद, करवट काशी यह मेरी,
पूजापाठ ध्यान जप तप है, घट घटवासी यह मेरी।
कृष्णचंद्र की क्रीडाओं को, अपने आंगन में देखो,
कौसल्या के मातृ मोद को अपने ही मन में देखो,
प्रभु ईसा की क्षमाशीलता, नबी मुहम्मद का विश्वास,
जीवदया जिनवर गौतम की, आओ देखो इसके पास।
परिचय पूछ रहे हो मुझ से, कैसे परिचय दूं इसका,
वही जान सकता है इसको, माता का दिल है जिसका॥

झांसी की रानी

सिंहासन हिल उठे राज-वंशों ने भृकुटि तानी थी,
बूढ़े भारत में आई फिर से नई जवानी थी।
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी के करने की सब ने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

कानपूर के नाना की मुंहबोली बहिन छबीली थी,
लक्ष्मीबाई नाम पिता की वह संतान अकेली थी।
नाना के संग पढ़ती थी वह नाना के संग खेली थी,
बरछी, ढाल, कृपाण, करारी उसकी यही सहेली थी।
वीर शिवाजी की गाथाएं उसको याद जबानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वय वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारो के वार।
नकली युद्ध, व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना दुर्ग तोडना ये थे उसके प्रिय खिलवार।
महाराष्ट्र कुलदेवी उसको भी आराध्य भवानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी।

हुई वीरता की, वैभव के साथ सगाई झासी मे,
व्याह हुआ रानी बन आई लक्ष्मीबाई झासी मे।
राजमहल मे बजी बधाई खुशियां छाई झासी मे,
सुभट बुदेलो की विरुदावली-सी वह आई झासी मे।
चित्रा ने अर्जुन को पाया, शिव से मिली भवानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

उदित हुआ सौभाग्य मुदित महलो मे उजियाली छाई,
किंतु कालगति चुपके चुपके काली घटा घेर लाई।
तीर चलाने वाले कर मे उसे चूडिया कब भाई,
रानी विधवा हुई हाय! विधि को भी दया नही आई।
नि सतान मरे राजाजी, रानी शोकसमानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

बुझा दीप झासी का तब डलहौजी मन मे हरषाया,
राज्य हडप करने का, उसने यह अवसर अच्छा पाया।

फौरन फौजे भेज दुर्ग पर अपना झडा फहराया,
लावारिस का वारिस बन कर ब्रिटिश राज्य झासी आया।
अश्रुपूर्ण रानी ने देखा, झासी हुई बिरानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

अनुपम विनय न हा ! सुनता है विकट शासको की माया,
व्यापारी बन गया चाहता था यह जब भारत आया।
डलहौजी ने पैर पसारे, अब तो पलट गई काया,
राजाओ नव्बाबो को भी उसने पैरो ठुकराया।
रानी दासी बनी, बनी यह दासी अब महारानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लडी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

छिनी राजधानी देहली की, लखनऊ छीना बातो-बात,
कैद पेशवा था बिठूर मे, हुआ नागपुर पर भी घात।
उदैपुर तजौर सितारा करनाटक की कौन बिसात,
जब कि सिध, पजाब, ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्रनिपात।
बगाले मद्रास आदि की भी तो वही कहानी थी,
बुदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

रानी रोई रनवासो मे, बेगम गम से थी बेजार,
उनके गहने कपडे बिकते थे कलकत्ते के बाजार।
सरे आम नीलाम छापते थे अंग्रेजों के अखवार,
नागपुर के जेवर ले लो, लखनऊ के लो नौलखहार।

थी परन्दे की इज्जत परदेशी के हाथ विकानी थी,
बुंदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

कुटियो मे थी विषम वेदना, महलो मे आहत अपमान,
वीर सैनिको के मन मे था अपने पुरखो का अभिमान।
नाना धुदूपन पेशवा जला रहा था सब सामान,
बहिन छबीली ने रणचडी का कर दिया प्रकट आह्वान।
हुआ यह प्रारभ, उन्हे तो सोई ज्योति जगानी थी।
बुंदेले हरबोलो के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झासी वाली रानी थी॥

उत्तरार्ध

मुसलमान कवि

आदि युग

वीर गाथा शाखा

अमीर खुसरो

× × × ×

× × × ×

मध्ययुग

ज्ञानाश्रयी शाखा

कबीर

गुरुदेव

दडवत गोबिद करूं बदू अविजन सोय।
पहले भये प्रणाम तिन नमो जो आगे होय ॥
गुरू कीजे दडवत्, कोटि कोटि परनाम।
कीट न जानै भृग को, गुरु करि आप समान ॥
गुरु गोबिद कर जानिये, रहिये शब्द समाय।
मिलै तो दंडवत् बदगी, नहि पल ध्यान लगाय ॥
गुरु गोविद दोनो खड़े, किसके लागों पाय।
बलि हारे गुरु आपने, गोविद दियो बताय ॥
दीपक दीना तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहना, बहुरि न आवै हट्ट ॥

भली भई जो गुरु मिला, जाते पाया ज्ञान।
घर ही माहि चबूतरा, घर ही माहि दिवान ॥
कबिरा ते नर अध है, गुरु को कहते और।
हरि के रूठे ठौर है, गुरु रूठे नहि ठौर ॥
गुरु सो ज्ञान जो लीजिये, सीस दीजिये दान।
बहुतक भोदू बहि गये, राखि जीव अभिमान ॥
चेतन चौकी बैठि के सतगुरु दीनी धीर।
निर्भय होय निशक भजु, केवल कहै कबीर ॥
सतगुरु साचा सूरमा, नखशिख मारा पूरि।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकनाचूरि ॥

गुरु पारखी

गुरू मिला नहि शिष्य मिला, लालच खेला दाव ।
दोनो बूडे धार मे, चढि पाथर की नाव ।।

जा गुरु ते भ्रम ना मिटै, भ्राति न जीवकि जाय ।
गुरु तो ऐसा चाहिये, देई ब्रह्म बताय ।।

कनफुक्का गुरु हद्द का, बेहद का गुरु और ।
बेहद का गुरु जब मिले लहै ठिकाना ठौर ।।

जाका गुरु है गिरही, गिरही चेला होय ।
कीच कीच को धोवते, दाग न छूटे कोय ।।

यति

सदा कृपालु दुख परहरन, बैर भाव नहि दोय ।
क्षमा ज्ञान सत भाषिये, हिसारहित जो सोय ।।

दुख सुख एक समान है, हरष शोक नहि ब्याप ।
पर उपकारी भगत को, उपजै छोह न ताप ।।

इद्रियदमन निगरहकरन, हृदया कोमल होय ।
सदा शुचि आचार सो, रहि विचार सो सोय ।।

सदा रहै सतोष मे, धरम आप दृढ़ धारि ।
आश एक भगवान की, और न चित्त बिचारि ।।

षट हि बिकार शरीर के, तिन को चित्त न लाय ।
शोक मोह प्यासहि क्षुधा, जरा मृत्यु नशि जाय ।।

मान अपमान न चित धरै, औरन को सनमान ।
जो कोई आशा करै, उपदेशै तेहि ज्ञान ।।

उपदेश

अतर याहि बिचारिया, साखी कहो कबीर ।
भवसागर मे जीव है, सुनि कै लागे तीर ।।
हाड बड़ा हरि भजन कर, द्रव्य बड़ा कछु देह ।
अकल बडी उपकार कर, जीवन का फल येह ।।
इष्ट मिलै और मन मिलै, मिलै सकल रस रीति ।
कहै कबीर तह जाइये, यह सतन की प्रीति ।।
हस्ती चढ़िये ज्ञान के, सहज दुलीचा डारि ।
स्वान रूप ससार है, भूसन दे झक मारि ।।
हरि भजनी हारा भला, जीतन दे ससार ।
हारा तौ हरि सोंसन मिलै, जीता यम की लार ।।

जेता घट तेता मता, घट घट और स्वभाव ।
जा घट हार न जीत है, ता घट ब्रह्म समाव ।।
उदर समाता अन्न लै, तनहि समाता चीर ।
अधिकहि सग्रह ना करै, तिसका नाम फकीर ।।
कथा कीरतन कलि विषे, भवसागर की नाव ।
कहै कबीर या जगत मे, नाही और उपाव ।।
काम-कथा सुनिये नही, सुनि के उपजे काम ।
कहै कबीर बिचारि के, बिसरि जाय हरि नाम ।।
बदे तू कर वदगी, जो पावै दीदार ।
औसर मानुष जन्म का, वहुरि न बारबार ।।

सुमिरन

सुमिरन मारग सहज का, सत गुरु दिया बताय ।
स्वासहि स्वांस जो सुमिरता, एक दिन मिलसी आय ।।

माला स्वास उस्वास की, फेरेंगे निज दास।
चौरासी भरमे नही, कटै करम की फास ॥
कबिरा सुमरन सार है, और सकल जजाल।
आदि अत मधि सोधिया, दूजा देखा ख्याल ॥
निज सुख आतम राम है, दूजा दुख अपार।
मनसा वाचा कर्मना, कबिरा सुमिरन सार ॥
कबिरा हरि के नाम मे, सुरति रहै करतार।
ता मुख ते मोती झरै, हीरा अनंत अपार ॥

भक्ति

भक्ती द्राविड ऊपजी लाये रामानद।
परगट करी कबीर ने, सात द्वीप नव खड ॥
कबिरा हरि की भक्ति बिन, धिग जीवन ससार।
धूआ का सा धालहरा, जात न लागै बार ॥
भक्ति भाव भादौ नदी, सबै चली घहराय।
सरिता सोई जानिये, जेठ मास ठहराय ॥

प्रेम

यह तो घर है प्रेम का, मारग अगम अगाद।
शीश काटि पग तर धरै, निकसै प्रेम का स्वाद ॥
शीस काटि पासग किया, जीव सेर भर लीन।
जिहि भावै सो आइ लै, प्रेम आगे हम कीन्ह ॥
प्रम पियाला भरि पिया, राचि रह्या गुरु ज्ञान।
दिया नगारा शब्द का, लाल खडा मैदान ॥

सागर उमड़ा प्रेम का, खेवटिया कोइ एक।
सव प्रेमे मिलि बूडता, यह नहि होती टेक ।।
प्रेम बनिज नहि कर सकै, चढै न नाम के गैल।
मानुष केरी खालरी, ओढे फिरे ज्यो बैल ।।
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे रहो जो गृह हि मे, भावे बन मे जाय ।।
प्रेम पावरी पहरि के, धीरज कज्जल देय।
शील सद्गुर भराय कै, पुनि पिय का सुख लेय ।।
योगी जगम सेवरा, सयासी दरवेश।
विना प्रेम पहुचे नही, दुर्लभ हरि का देश ।।

विरह

या तन जारू मसि करू, लिखू राम को नाव।
लेखन करूं करक की, लिखि-लिखि राम पठाव ।।
साई सेवत जरि गई, मास न रहिया देह।
सांई जब लग सेयही, या तन होइहै खेह ।।
तन मन जोवन यो जला, बिरह अग्नि सू लागि।
मृतक जो पीर न जानही, जानैगी वा आगि ।।
बिरह कमंडल भरि लिया, बैरागी दोउ नैन।
मागे दरसमधूकरी, छके रहै दिन रैन ।।
बिरह बिथा बैराग की, कही न काहू जाय।
गूगा सपना देखिया, समझि समझि पछिताय ।।
भेरै चढिया सरप कै, भवसागर के मांहि।
जो छांडौ तो बूड़िहौ, गहो तो डसिहै बाहि ।।

परबत परबत मैं फिरू, नैन गवाऊ रोय।
सो बूटी पाऊं नही, जासो जीवन होय॥

रस

पिया पियाला प्रेम का, अतर लिया लगाय।
रोम रोम मे रमि रह्या, और अमल क्या खाय॥
राम रसायन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल।
कबिरा पीवन दुर्लभ है, मागै सीस कलाल॥
मोह मता अविगत रता, आसा अकल अजीत।
नाम अमल माते रहै, जीवनमुक्त अतीत॥
राता माता नाम का, पिया प्रेम अघाय।
मतवाला दीदार का, मागै मुक्ति बलाय॥

कुसंगति

कबिरा कुसग न कीजिये, जाका नाव न ठाव।
ते क्यो होसी बापरा, साधु नही जिहि गाव॥
गिरिये पर्वत शिखर ते, परिये धरनि मंझार।
मूरख मित्र न कीजिये, बडियो काली धार॥
कोयल भी होय ऊजला, जरिबरि होय जो श्वेत।
मूरख होय न ऊजला, ज्यो कालर का खेत॥
ऊचे कुल कहा जनमिया, करनी ऊच न सोय।
कनक कलस मद सो भरा, साधन निदा होय॥
काचा सेती मति मिलै, पाका सेती बानि।
काचा सेती मिलत ही, होय भक्ति मे हानि॥

सुसंगति

कबिरा संगति साधु की, नित प्रति कीजै जाय ।
दुर्मति दूरि बहावसी, देसी सुमति बताय ।।
कलह् काल औ कल्पना, सत सगति सो जाय ।
दुख वासो भाजा फिरै, सुख मे रहा समाय ।।
मथुरा जाओ द्वारका, भावे जाओ जगन्नाथ ।
साधु सग हरि भजन बिन, कछू न आवै हाथ ।।
चदन जैसा सत है, सरप जैसा संसार ।
बाके अग लपटा रहै, भागै नही बिकार ।।
ऋद्धि सिद्धि मागू नही, हरि सो मागू एह ।
नित प्रति दर्शन साधु का, कहे कबीर मोहि देह ।।
कबिरा मन पक्षी भया, मन माने तहां जाय ।
जो जैसी सगत करै, सो तैसा फल खाय ।।
कबिरा खाई कोटका, पानी पिये न कोय ।
जाय परे जब गंग मे, सब गगोदक होय ।।
राम बुलाया भेजिया, दिया कबीरा रोय ।
जो सुख साधू सग मे, सो बैकुंठ न होय ।।

साधु

साधु हजारी कापड़ा, ता मे मल न समाय ।
साकट काली कामली, भावे तहां बिछाय ।।
सिह साधु का एक मत, जीवत ही को खाय ।
भावहीन मृत्तक दशा, ताके निकट न जाय ।।

तीन लोक उनमान मे, चौथो अगम अगाध।
पंचम दिशा अलक्ख की, जानेगा कोई साध ।।
रवि को तेज घटै नही, जो घन जुरै घमंड।
साधु वचन पलटै नही, उलटि जाय ब्रह्मड ।।
तन मे शीतल शब्द है, बोलै बचन रसाल।
कहै कबीर ता साधु की, गजि सकै ना काल ।।
बहता पानी निर्मला, बधा गंधीला होय।
साधु जन रमते भले, दाग न लागै कोय ।।
कौन साधु का खेल है, सुमति सुरति का दाव।
कौन अमृत का कूप है, शब्द वज्र का घाव ।।
क्षमा साधु का खेल है, सुमति सुरनि का दाव।
कर्ता अमृत कूप है, शब्द वज्र का घाव ।।
साधु आवत देखि कै, चरनू लागौ धाय।
क्या जाने इस भेष मे हरि ही जो मिलि जाय ।।
साधू आवत देखि कै, हसी हमारी देह।
माथा का ग्रह ऊतरा, नैना बढा सनेह ।।
आवत साधु न हरषिया, जात न दीया रोय।
कहै कबीर ता दास की, मुक्ति कबहू न होय ।।
साधू आया पाहुना, मागे चार रतन्न।
धनी पानी साथरा, शरधा सेती अन्न ।।
निराकार की आरसी, साधुन ही की देह।
लखा जो चाहे अलख को, इन ही मे लखि लेह ।।
सतौ भाई आई ग्यान की आधी रे।

भ्रम की टाटी सबै उडाणी, माया रहै न बांधी।
हित चित की द्वै थूनी गिरानी, मोह बलीडा टूटा।
तृस्ना छानि परी धर ऊपरि, कुबुधि का भांडा फूटा॥
जोग जुगति करि संतौ बाधी, निरचू चुवै न पाणी।
कूड कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाणी॥
आधी पीछै जो जल बूड़ा, प्रेम हरी जन भीना।
कहै कबीर भान के प्रगटे, उदित भया तम खीना॥

काहे री नलिनी तू कुमिलानी, तेरी ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निवास।
ना तलि तपति न ऊपर आगि, तोर हेत कहु कासनि लागि॥
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नही मूए हमरे जान॥

इब तू हसि प्रभू मैं कुछ नाही, पडित पढि अभिमान नसाही।
मैं मैं मैं जब लग मै कीन्हा, तब लग मैं करता नही चीन्हा।
कहै कबीर सुनहु नरनाहा, ना हम जीवत न मूवाले माहा॥

अब का डरौ डर डरहि समाना, जब तै मोर तोर पहिचाना।
जब लग मोरतोर करि लीन्हा, मै मै जनमि जनमि दुख दीन्हा।
आगम निगम एक करि जाना, ते मनवां मन माहि समाना॥
जब लग ऊच नीच करि जाना, ते पसुवा भूले भ्रम नाना।
कहै कबीर मैं मेरी खोइ, तब हि राम अवर नही कोई॥

हरि जननी मै बालक तेरा, काहे न औगुण बकसहु मेरा।
सुत अपराध करै दिन केते, जननी कै चित रहै न तेते।
कर गहि केस धरै जौ धाता, तऊ न हेत उतारै माता।
कहै कबीर एक बुधि बिचारी, बालक दुखी दुखी महतारी॥

राम बिन तन की ताप न जाई, जल मैं अगनि उठी अधिकाई।
तुम जलनिधि मैं जलकर मीना, जल मैं रहौ जलहिं बिन खीना।
तुम्ह पिजरा मैं सुवना तोरा, दरसन देहु भाग बड़ मोरा॥
तुम्ह सतगुर मैं नौतम चेला, कहै कबीर राम रमू अकेला॥

मन रे हरि भजि हरि भजि हरि भजि भाई,
जा दिन तेरो कोई नाही ता दिन राम सहाई।
तत न जानू मत न जानू जानू सुदर काया।
मीर मलिक छत्रपति राजा, ते भी खाये माया॥
वेद न जानू भेद न जानू, जानू एक हि रामा।
पंडित दिसि पछिवारा कीन्हा, मुख कीन्हौ जित नामा॥
राजा अंबरीक कै करणी, चक्र सुदरसन जारै।
दास कबीर कौ ठाकुर ऐसौ, भगत की सरन उबारै॥

का सिधि साधि करौ कुछ नाही, राम रसाइन रसना माही।
नही कुछ ग्यान ध्यान सिधि जोग, ताथै उपजै नाना रोग।
का मन मै बसि भये उदास, मन नही छोड़े आसा पास॥
सब कृत काच हरी हितसार, कहै कबीर तजि जग ब्यौहार॥

ते हरि के आवैहि किहि कामा, जे नही चीन्है आतमा रामा।
थोरी भगति बहुत अहकारी, ऐसे भगता मिलै अपारा।
भाव न चीन्है हरि गोपाला, जानि न अरहट कै गलि माला॥
कहै कबीर जिनि गया अभिमाना, सो भगता भगवत समाना॥

बहुरि हम काहे कूं आवहिगे, बिछुरे पचतत की रचना-
तब हम रामहि पावहिगे।
पिरथी का गुण पानी सोष्या, पानी तेज मिलावहिगे।

तेज पवन मिलि पवन सबद मिलि, सहज समाधि लगावहिगे ।।
जैसे बहु कचन के भूषण, ये कहि गालि तवावहिगे ।
ऐसे हम लोक वेद के बिछुरे, सुनिहि मांहि समावहिगे ।।
जैसे जलहि तरंग तरंगनी, ऐसे हम दिखलावहिगे ।
कहै कबीर स्वामी सुख सागर, हंसहि हस मिलावहिगे ।।

यही घड़ी यह बेला साधो ।

लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ।
ना कोई संगी ना कोई साथी, जाता हंस अकेला ।
क्यों सोया, उठि जागु सवेरे, काल मरेदा सेला ।
कहत कबीर गुरू गुन गाओ, झूठा है सब मेला ।

करम गति टारे नाहिं टरी ।।

मुनि बसिस्ट से पडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दशरथ को बन मे विपति परी ।।
कह वह फंद कहा वह पारधि, कहं वह मिरग चरी ।
सीता को हरि लेग्यो रावन, सोने की लंक जरी ।।

नीच हाथ हरिचंद बिकाने, बलि पाताल धरी ।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी ।।
पांडव जिनके आपु सारथी, तिन पर बिपति परी ।
दुर्योधन को गर्व घटायो, जदुकुल नास करी ।।
राहु केतु और भानु चद्रमा, बिधि से जाग परी ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, होनी होके रही ।।

मन लागो मेरो यार फकीरी मे ।

जो सुख पावो नाम भजन मे, जो सुख नाहि अमीरी मे ।

भला बुरा सब को सुनि लीजै, कर गुजरान गरीबी मे ॥
प्रेम नगर मे रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी मे ।
हाथ मे कूडी बगल मे सोटा, चारो दिसा जगीरी मे ॥
आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहा फिरत मगरूरी मे ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरी मे ।

घूघट का पट खोल रे, तो कू पीव मिलैगे ।
घर घर मे वहि साई रमता, कटुक वचन मत बोल रे ।
धन जोबन का गर्व न कीजै, झूठा पचरग चोल रे ।
सुन्न महल मे दियना बारि ले, आसा से मत डोल रे ।
जोग जुगत से रंग महल मे, पिय आये अनमोल रे ।
कह कबीर आनद भयो है, बजत अनहद ढोल रे ।

मध्ययुग

प्रेममार्गी सूफी भक्तिशाखा

मलिक मोहम्मद जायसी पदमावति

॥ अथ असतुति खंड ॥

सवरउं आदि एक करतारू । जेइ जिउ दीन्ह कीन्ह ससारू ॥
कीन्हेसि प्रथम जोति परगासू । कीन्हेसि तेहि परबत कबिलासू ॥
कीन्हेसि अगिनि पवन जल खेहा । कीन्हेसि बहुतइ रंग उरेहा ॥
कीन्हेसि धरती सरग पतारू । कीन्हेसि बरन बरन अउतारू ॥
कीन्हेसि सपत दीप ब्रहमडा । कीन्हेसि भुअन चउदहउखडा ॥
कीन्हेसि दिन दिनिअर ससि राती । कीन्हेसि नखत तराएन पाती ॥
कीन्हेसि सीउ धूप अउ छाहा । कीन्हेसि मेघ बीजु तेहि माहा ॥

कीन्ह सबइ अस जा कर, दोसर छाज न काहि ।
पहिलइ तेइ कर नाउ लेइ, कथा करउं अउगाहि ॥

कीन्हेसि सात-उ समुद अपारा । कीन्हेसि मेरु खिखिद पहारा ॥
कीन्हेसि नदी नार अउ झरना । कीन्हेसि मगरमच्छ बहु बरना ॥
कीन्हेसि सीप मोति तेहि भरे । कीन्हेसि बहुतइ नग निरमरे ॥
कीन्हेसि बन-खड अउ जरि मूरी । कीन्हेसि तरिवर तार खजूरी ॥
कीन्हेसि साउज आरन रहही । कीन्हेसि पखि उडहि जह चहही ॥
कीन्हेसि बरन सेत अउ सामा । कीन्हेसि नीद भूख बिसरामा ॥
कीन्हेसि पान फूल रस भोगू । कीन्हेसि बहु ओखद बहु रोगू ॥

निमिख न लाग करत ओहि, सबहि कीन्ह पल एक ।
गगन अतरिख राखा, बाजु खंभ बिनु टेक ॥

कीन्हेसि मानुस दीन्ह बडाई । कीन्हेसि अन्न भुगुति तेइ पाई ॥
कीन्हेसि राजा भूजई राजू । कीन्हेसि हसति घोर तेइ साजू ॥
कीन्हेसि तेहि कह बहुत ब्रिरासू । कीन्हेसि कोइ ठाकुर कोइ दासू ॥

कीन्हेसि दरब गरब जेहि होई। कीन्हेसि लोभ अघाइ न कोई ॥
कीन्हेसि जिअन सदा सब चहा। कीन्हेसि मीचु न कोई रहा ॥
कीन्हेसि सुख अउ क्रोड अनदू। कीन्हेसि दुखचिता अउ दद्द ॥
कीन्हेसि कोइ भिखारी कोई धनी। कीन्हेसि सपति बिपति बहु घनी ॥
कीन्हेसि कोई निभरोसी, कीन्हेसि कोइ बरिआर।
छारहि तइ सब कीन्हेसि, पुनि कीन्हेसि सब छार ॥
कीन्हेसि अगर कसतुरी बेना। कीन्हेसि भीमसेनि अउ चेना ॥
कीन्हेसि नाग मुखइ विख बसा। कीन्हेसि मत्र हरहि जो डसा ॥
कीन्हेसि अमी जिअइ जेहि पाई। कीन्हेसि बिक्ख मीचु जेहि खाई ॥
कीन्हेसि ऊख मीठ रस भरी। कीन्हेसि करुइ बेलि बहु फरी ॥
कीन्हेसि मधु लावइ लेइ माखी। कीन्हेसि भवर पखि अउ पाखी ॥
कीन्हेसि लोवा उदुर चाटी। कीन्हेसि बहुत रहहि खनि माटी ॥
कीन्हेसि राकस भूत परेता। कीन्हेसि भोकस देव दएता ॥
कीन्हेसि सहस अठारह, बरन बरन उपराजि।
भुगुति दीन्ह पुनि सब्ब कह सकल साजना साजि ॥
धनपति उहइ जेहि क ससारू। सबहि देइ निति घट न भडारू ॥
जावत जगत हसति अउ चाटा। सब कह भुगुति राति दिन बाटा ॥
ता करि दिसिटि सबहि उपराही। मितर सतरु कोई बिसरइ नाही ॥
पखी पतग न बिसरइ कोई। परगट गुपुत जहा लगि होई ॥
भोग भुगुति बहु भाति उपाई। सबहि खिआवइ आपु न खाई ॥
ता कर इहइ जो खाना पिअना। सब कहं देइ भुगुति अउ जिअना ॥
सबहि आस ता करि हर सासा। ओहि न काहुक आस निरासा ॥
जुग जुग देत घटा नही उभइ हाथ तस कीन्ह।
अउरु जो दीन्ह जगत मह सो सब ता कर दीन्ह ॥

आदि सोइ बरनउं बड राजा । आदिहु अत राज जेहि छाजा ।।
सदा सरबदा राज करेई । अउ जेहि चहहि राज तेहि देई ।।
छतरि अछतरि निछतरहि छावा । दोसर नाहि जो सरबरि पावा ।।
परबत ढाहि देखु सब लोगू । चाटहि करइ हसति सरि जोगू ।।
बजरहि तिन कइ मारि उडाई । तिनहि बजर कइ देइ बडाई ।।
काहुहि भोग भुगुति सुख सारा । काहुहि भीख भवन-दुख मारा ।।
ता कर कीन्ह न जानइ कोई । करइ सोइ मन चित्त न होई ।।

सबइ नास्ति वह असथिर, अइस साज जेहि केरि ।
एक साजइ अउ भाजइ, चहइ सवारइ फेरि ।।

अलख अरूप अबरन सो करता । वह सब सउ सब ओहि सउ बरता ।।
परगट गुपुत सो सरबबिआपी । धरमी चीन्ह ची ह नहि पापी ।।
ना ओहि पूत न पिता न माता । ना ओहि कुटुब न कोइ सग नाता ।।
जना न काहु न कोइ ओहि जना । जह लगि सब ता कर सिरजना ।।
वेइ सब कीन्ह जहा लगि कोई । वह न कीन्ह काहू कर होई ।।
हुत पहिलइ अउ अब हर सोई । पुनि सो रहइ रहइ नहि कोई ।।
अउरु जो होइ सो बाउर अधा । दिन दुइ चारि मरइ कइ धधा ।।

जो बेइ चहा सो कीन्हेसि करइ जो चाहइ कीन्ह ।
बरजन-हार न कोई, सबहि चाहि जिउ दीन्ह ।।

एहि विधि चीन्हहु करहु गिआनू । जस पुरान मह लिखा बखानू ।।
जीउ नाहि पइ जिअइ गोसाई । कर नाही पइ करइ सबाई ।।
जीभ नाहि पइ सब किछु बोला । तन नाही जो डोलाउसो डोला ।।
सुवन नाहि पइ सब किछु देखा । कवन भाति अस जाई बिसेखा ।।
ना कोइ होइ हइ ओहि के रूपा । ना ओहि अस कोइ आहि अनूपा ।।
ना ओहि ठाउ न ओहि बिनु ठाऊं । रूप रेख बिनु निरमर नाऊ ।।

ना वह मिला न बेहरा अइस रहा भरि पूरि ।
दिसिटिवत कह नीअरे अध मुरुख कह दूरि ।।
अउरु जो दीन्हेसि रतन अमोला । ता कर मरम न जानइ भोला ।।
दीन्हेसि रसना अउ रस भोगू । दीन्हेसि दसन जो बिहसइ जोगू ।।
दीन्हेसि जग देखइ कह नयना । दीन्हेसि स्रवन सुनइ कहं बयना ।।
दीन्हेसि कंठ बोलि जेहि माहा । दीन्हेसि कर-पल्लउ बर बांहा ।।
दीन्हेसि चरन अनूप चलाही । सो पइ मरम जानु जेहि नाही ।।
जोबन मरम जानु पइ बूढा । मिला न तरुनापा जग ढूढा ।
दुख कर मरम न जानइ राजा । दुखी जानु जा कह दुख बाजा ।
कथा क मरम जानु पइ रोगी, भोगी रहर निचित ।
सब कर मरम गोसाई, जानइ जो घट घट मे नित्त ।।
अति अपार करता कर करना । बरनि न पारइ काहू बरना ।।
सात सरग जउं कागद करई । धरती सात समुद मसि भरई ।।
जावत जगत साख बन-ढांखा । जावॅत केस रोवँ पँखि पाखा ।।
जावॅत खेह रेह दुनिआई । मेघ बूद अउ गगन तराई ।।
सब लिखनी कइ लिखु ससारू । लिखि न जाइ गति समुद अपारू ।।
अइस कीन्ह सब गुन परगटा । अबहू समुद बूद नहि घटा ।।
अइस जानि मन गरब न होई । गरब करइ मन बाउर सोई ।।
बउ गुनवत गोसाई चहइ सो होइ तेहि बेगि ।
अउ असगुनी सबारइ जो गुन करइ अनेग ।।
कीन्हेसि पुरुख एक निरमरा । नाउं मुहम्मद पूनिउं करा ।।
प्रथम जोति विधि तेहि कइ साजी । अउ तेहि प्रीति सिसिह उपराजी ।।
दीपक लेसि जगत कहं दीन्हा । भा निरमर जग मारग चीन्हा ।।
जउ नहि होत पुरुख उजिआरा । सूझि न परत पंथ अधियारा ।।

दोसरे ठाउ दई बेइ लिखे। भए धरमी जेइ पाढत सिखे ।।
जेइ नहि लीन्ह जनम भरि नाऊ। ता कह कीन्ह नरक महं ठाऊ ।।
जगत बसीठ दई ओहि कीन्हा। दुहु जग तरा नाउजेइ लीन्हा ।।
गुन अउगुन विधि पूछब होइहि लेख अउ जोख।
वह बिनउब आगइ होइ करब जगत कर मोख ।।
चारि मीत जो मुहमद ठाऊ। चहूंक दुहुं जग निरमर नाऊ ।।
अबौ बकर सिद्दीक सयाने। पहिलइ सिदिक दीन बेइ आने ।।
पुनि सो उमर खिताब सोहाए। भा जग अदल दीन जो आए ।।
पुनि उसमान पडित बड़ गुनी। लिख। पुरान जो आयत सुनी ।।
चउथइ अली सिघ बरिआरू। चढ़इ तो कापइ सरग पतारू ।।
चारिउ एक मतइ एक बाता। एक पथ अउ एक संघाता ।।
वचन एक जो सुनावहि साचा। भा पखान दुहूं जग बाँचा ।।
जो पुरान विधि पठबा सोई पढत गरंथ।
अउरु जो भूले आवतहि तेहि सुनि लागहि पंथ ।।
सेरसाहि देहिली सुलतानू। चारिउखंड तपइ जस भानू ।।
ओही छाज राज अउ पाटू। सब राजइ भुइ धरा लिलाटू ।।
जाति सूर अउ खाडइ सूरा। अउ बुधिवत सबइ गुन पूरा ।।
सूर-नवाँई नवो खड भई। सातउ दीप दुनी सब नई ।।
तह लगि राज खरग वर लीन्हा। इसकंदर जुलकरन जो कीन्हा ।।
हाथ सुलेमा केरि अगूठी। जग कह जिअन दीन्ह तेहि मूठी ।।
अउ अति गरू पुहुमि-पति भारी। टेकि पुहुमि सब सिसिरि संभारी ।।
दीन्ह असीस मुहम्मद करहु जुगहि जुगराज।
पातिसाहि तुम जगत के जग तुम्हार मुहताज ।।
वरनउ सूर पुहुमि-पति राजा। पुहुमि न भार सहइ जेहि साजा ।।

हम मय सेन चलइ जग पूरी । परबत टूटि उडहि होइ धूरी ।।
रइनि रेनु होइ रबिहि गरासा । मानुस पंखि लेहिं फिरि बासा ।।
भुइ उड़ि अतरि खगइ म्रित मडा । खडखड धरति सिसिटि ब्रहमडा ।।
दोलइ गगन इदर डरि कापा । वासुकि जाइ पतारहि चापा ।।
मेरु धसमसइ समुद सुखाही । बन खड टूटि खेह मिलि जाही ।।
अगिलहि काहू पानि खर बाटा । पछिलहि काहु न कादउ ऑटा ।।
जो गढ नएउ नहि काहुही चलत होहि सब चूर ।
जबहि चढहि पुहुमी-पति सेरसाहि जग सूर ।।
अदल कहउ पुहुमी जस होई । चाटहि चलत न दुखवइ कोई ।।
नउसेरवा जो आदिल कहा । साहि अदल सरि सोउ न अहा ।।
अदल कीन्ह उम्मर कइ नाईं । भई आहा सगरी दुनिआई ।।
परी नाथ कोइ छुअइ न पारा । मारग मानुस सोन उछारा ।।
गोरु सिघ रेगहि एक बाटा । दूनउ पानि पिअहि एक घाटा ।।
नीर खीर छानइ दरबारा । दूध पानि सब करइ निरारा ।।
धरम निआउ चलइ सत भाखा । दूबर बरी एक सम राखा ।।
पुहुमी सबइ असीसई जोरि जोरि कर हाथ ।
गाग जउन जल जब लगि तब लगि अमर सो माथ ।।
पुनि रुपवत बखानउं काहा । जावत जगत सबइ सुख चाहा ।।
ससि चउदसि जो दई सवारा । तेहू चाहि रूप उजिआरा ।।
पाप जाइ जउ दरसन दीसा । जग जुहारी कइ देइ असीसा ।।
जइस भानु जग ऊपर तपा । सबइ रूप ओहि आगइ छपा ।।
असभा सूर पुरुख निरमरा । सूर चाहि दस आगरि करा ।।
सउंह दिसटि कइ हेरि न जाई । जेइ देखा सो रहा सिर नाई ।।
रूप सवाई दिन दिन चढ़ा । विधि सरूप जग ऊपर गढा ।।

रूपवत मनि माथइ चाँद घाट ओहि वाढि।
मेदिनि दरस लोभानी असतुति बिनवइ ठाढि ।।
पुनि दातार दई बड कीन्हा। अस जग दान न काहू दीना ।।
वलि बिकरम दानी बड अहे। हातिम करन तिआगी कहे ।।
सेरसाहि सरि पूज कोऊ। समुद सुमेरु घटहि नित दोऊ ।।
दान डाक बाजइ दरबारा। कीरति गई समुदर पारा ।।
कचन परसि सूर जग भएऊ। दारिद भागि दिसतर गएऊ ।।
जउ कोइ जाइ एक बेरि मागा। जनमहु भएऊ न भूखा नागा ।।
दस असमेध जग जेहि कीन्हा। दान पुन्न सरि सोउ न दीन्हा ।।
अइस दानि जग उपजा सेर-साहि सुलतान।
ना अस भएउ न होइही ना कोइ देइ अस दान ।।
सइअद असरफ पीर पिआरा। तेइ मोहि पंथ दीन्ह उंजिआरा ।।
लेसा हिअइ पेम कर दीआ। उठी जोति भा निरमर हीआ ।।
मारग हुता अधेर असूझा। भा अजोर सब जाना बूझा ।।
खार समुदर पाप मोर मेला। बोहित धरम लीन्ह कुइ चेला ।।
उन्ह मोर करिअ पोढि कइ गहा। पाएउ तीर घाट जो अहा ।।
जा कह होइ अइस कनहारा। ता कह गहि लेइ लावइ पारा ।।
दस्तगीर गोढ कइ साथी। जहं अउगाह देहित है हाथी ।।
जहागीर वेइ चिसती निहकलंक जस चाद।
वेइ मखदूम जगत के हउं उन्ह के घर बाद ।।
तेहि घर रतन एक निरमरा। राजो सेख सुभागइ भरा ।।
तेहि घर दुइ दीपक उजिआरे। पथ देइ कहं दई संवारे ।।
सेख मुबारक पूनिउ करा। सेख कमाल जगत निरमरा ।।
दुअउ अचल धुब डोलहि नाही। मेरु खिखिंद तिन्हहु उपराही ।।

दीन्ह रूप अउ जोति गोसाई । कीन्ह खभ दुहु जग कइ ताई ॥
दुहु खभ टेकी सब मही । दुहु के भार सिसिटि थिर रही ॥
जो दरसइ अउ परसइ पापा । पाप हटा निरमर भई कापा ॥
मुहमद तेइ निचित पंथ जेहि सग मुरसिद पीर ।
जेहि रे नाउ अउ खेवक बेगि पाउ सो तीर ॥
गुरु मोहिदी खेवक मइ सेवा । चलइ उताइल जेहिकर खेवा ॥
अगुआ भएउ सेख बुरहानू । पथ लाई जेहि दीन्ह गिआनू ॥
अलहदाद भल तेहि कर गुरू । दीन दुनी रोसन सुरुखुरू ॥
सइअद मुहमद के वेइ चेला । सिद्ध पुरुख सगम जेइ खेला ॥
दानिआल गुरु पथ लखाए । हजरत ख्वाज खिजिर तेइ पाए ॥
भए परसन ओहि हजरत ख्वाजे । लेइ मेरए जह सइअद राजे ॥
ओहि सउ मह पाई जब करनी । उघरी जीभ कथा कबि बरनी ॥
वेइ सु-गुरु हउ चेला नीति बिनबउ भा चेर ।
ओहि हुत देखइ पाएउ दिरिस गोसाई केर ॥
एक नयन कबि मुहमद गुनी । सोइ बिमोहा जेइ कबि सुनी ॥
चांद जइस जग विधि अउतारा । दीन्ह कलक कीन्ह उजिआरा ॥
जग सूझा इकइ नयनाहा । उआ सूक जस नखतन्ह माहा ॥
जउ लहि आबहि डाभ न होई । तउ लहि सुगध बसाइ न सोई ॥
कीन्ह समुदर पानि जउ खारा । तउ अति भएउ असूझ अपारा ॥
जउ सुमेरु तिरसूल बिनासा । भा कचन गिरि लागु अकासा ॥
जउ लहि घरी कलक न परा । काचु होइ नहि कचन करा ॥
एक नयन जस दरपन अउ तेहि निरमर भाउ ।
सब रूपवतइ पाउ गहि मुख जोहहि कइ चाउ ॥
चारि मीत कबि मुहमद पाए । जोरि मिताई सरि पहुचाए ॥

यूसुफ मलिक पडित अउ ग्यानी। पहिलइ भेद बात वेद जानी ॥
पुनि सलार कादिम मति माहा। खाडइ दान उभय निनि बाहा ॥
मिआ सलोने सिघ अपारू। बीर खेत रन खरग जुझारू ॥
सेख वडे वड सिद्ध बखाना। कइ अदेस सिद्धन्ह बड़ माना ॥
चारिउ चतुरदसउ गुन पढे। अउ सयोग गोसाईं गढे ॥
बिरिख जो आछहि चदन पासा। चदन होहि बेधि तेहि बासा ॥
मुहमद चारिउ मीत मिलि भए जो एकइ चित्तु।
एहि जग साथ जो निबहा ओहि जग बिछुरहि कित्तु ॥
जाएस नगर धरम असथानू। तहा आइ कवि कीन्ह बखानू ॥
कह बिनती पडितन्ह सउ भजा। टूट सवारहु मेरवहु सजा ॥
हउ सब कवितन्ह कर पछलगा। किछु कहि चला तबल देहि डगा ।
हिअ भडार नग अहइ जो पूजी। खोली जीभ तारु कह कूजी ॥
रतन पदारथ बोली बोला। सुरस पेय मधु भरी अमोला ॥
जेहि कइ बोलि बिरह कइ घाया। कह तेहि भूख नीद कह छाया ॥
फेरइ भेस रहइ भा तपा। धूरि लपेटा मानिक छपा ॥
मुहमद कया जो पेम कइ ना तेहि रक्त न मासु।
जेहि मुह देखा तेइ हसा सुनि तेहि आएउ आसु ॥
सन नउ सइ सइतालिस अहे। कथा अरभ बपन कवि कहे ॥
सिघलदीप पदुमिनी रानी। रतन सेन चित उर गढ आनी ॥
अलाउदीन देहिली सुलतानू। राघउ चेतन कीन्ह उखानू ॥
सुना सहि गढ छेका आई। हिंदू तुरकन्ह भई लराई ॥
आदि अत जस गाथा अही। लिखि भाखा चउपाई कही ॥
कवि बिआस रस कवला पूरी। दूरि सो निअर निअर सो दूरी ॥
निअरहि दूरि फूल जस काटा। दूरि जो निअरहि जस गुर चाटा ॥

भवर आइ बनखड सउ लेइ कवल रस बास ।
दादुर बास न पावई भलहि जो आछइ पास ।।

इति असतुति खण्ड ।।

अथ सिंघल दीप बरनन खंड

सिघलदीप कथा अब गावउ । अउ सो पदुमिनी बरनि सुनावउ ।।
बरनक दरपन भाति बिसेखा । जो जेहि रूप सो तइसइ देखा ।
धनि सो दीप जह दीपक नारी । अउ सो पदुमिनि दइ अउतारी ।।
सात दीप वरनइ सब लोगू । एकउ दीप न ओहि सरि जोगू ।।
दिया-दीप नहि तस उजिआरा । सरन-दीप सरि होइ न पारा ।।
जबू-दीप कहउ तस नाही । लक-दीप नहि ओहि परिछाही ।।
दीप-कुभसथल आरन परा । दीप - महुसथल मानुसहरा ।।

सब ससार पिरिथुमी आए सातउ डीप ।
एकउ दीप न अतिम सिघल दीप समीप ।।

गधरव सेन सुगध नरेसू । सो राजा वह कातर देसू ।।
लका सुना जो राओन राजू । तेहु चाहि बड ताकर साजू ।।
छप्पन कोड कटक दर साजा । सबइ छतरपति अउ गढ राजा ।।
सोरह सहस घोर घोर-सारा । साव-करन अउ बाक तुखारा ।।
सात सहस हसती सिघली । जनु कबिलास इरावति बली ।।
असु-पती क सिर-मउर कहावइ । गज-पती क आकुस गज नावइ ।।
नर-पती क अउ कहउ नरिन्दू । भू-पती क जग दोसर इदू ।।

अइस चक्कवइ राजा चहूं खड भय होइ ।
सबइ आइ सिर नावही सरिबर करइ न कोइ ।।

जबहि दीप निअरावा जाई । जनु कबिलास निअर भा आई ।।

घन अबराउ लाग चहु पासा । उठे पुहुमि हुति लागु अकासा ।।
तरिवर सबइ मलयगिरि लाई । भइ जग छाह रइनि होइ छाई ।।
मलय समीर सोहाई छाहा । जेठ जाउ लागइ तेहि माहा ।।
ओही छाह रइनि होइ आवइ । हरिअर सबइ अकास देखावइ ।।
पथिक जउं पहुचइ सहि घामू । दुख बिसरइ सुख होइ बिसरामू ।।
जेइ वह पाई छाह अनूपा । बहुरि न आइ सहहि यह धूपा ।।

अस अबराउ सघन घन बरनि न पारउ अन ।
फूलइ फरइ छयउ रितु जानउ सदा बसत ।।

फरे आंब अति सघन सोहाए । अउ जस फरे अधिक सिरनाए ।।
कटहर डार पीड सउ पाके । बडहर सो अनूप अति ताके ।।
खिरनी पाकि खाड असि मीठी । जाडनि पाकि भवर अस डीठी ।।
नरिअर फरे फरी फरहुरी । फरी जानु इदरासन पुरी ।।
पुनि महुआ चुअ अधिक मिठासू । मधु जस मीठ पुहुप जस बासू ।।
अउर खलहजा आउ न नाऊ । देखा सब राउन अबराऊ ।।
लाग सबइ जस अंब्रित साखा । रहइ लोभाइ सोइ जो चाखा ।।

गुआ सुपारी जाइफर सब फरफरे अपूरि ।
आस पास घनि इविली अउ घन तार खजूरि ।।

बसहि पखि बोलहि बहु भाखा । करहि हुलास देखि कइ साखा ।।
भोर होत बासहि चुहि चूही । बोलहि पाडुकि 'एकइ तूही' ।।
सारउ सुआ जो रहचह करही । कुरहि परेवा अउ करबरही ।।
पिउ पिउ लागइ करइ पपीहा । तुही तुही करि गुडुरू खीहा ।।
कुहू कुहू करि कोइलि राखा । अउ भगराज बोल बहु भाखा ।।
दही दही कइ महरि पुकारा । हारिल बिनवइ आपनि हारा ।
कुहकहि मोर सोहावन लागा । होइ कोराहर बोलहि कागा ।।

जावत पखि कही सब बइठे भरि अवराउ ।
आपनि आपनि भाखा लेहि दई कर नाउ ।।
पइग पइग कूआँ बाउरी । साजे बइठक अउ पाउरी ।।
अउरु कुड सब टाउहि ठाउ । सब तीरथ अउ तिन्हके नाऊ ।।
मठ मडप चहु पास सवारे । तपा जपा सव आसन मारे ।।
कोइ सु-रिखेसुर कोइ सनिआसी । कोइ सु-राम-जति कोइ मसबासी ।।
कोइ सु-महेसुर जगम जती । कोइ एक परखइ देवी सती ।।
कोई ब्रह्मचरज पथ लागे । कोइ सु-दिगबर आछहि नागे ।।
कोई सत सिद्ध कोइ जोगी । कोइ निरास पथ बइठ बिओगी ।।
सेवरा खेवरा वान पर सिधि-साधक अउधूत ।
आसन मारे बइठ सब जारहि आतम-भूत ।।
मान-सरोदक देखे काहा । भरा समुद अस अति अउगाहा ।।
पानि मोति असि निरमर तासू । अंब्रित आनि कपूर सु-बासू ।।
लक-दीप कइ सिला अनाई । बाधा सरबर घाट बनाई ।।
खड खड सीढी भई गरेरी । उतरहि चढहि लोग चहु फेरी ।।
फूले कवल रहे होइ राते । सहस सहस पखुरिन्ह कह छाते ।।
उलथहिं सीप मोति उतराही । चुगहि हस अउ केलि कराही ।।
कनख पख पहरहि अतिलोने । जानउ चितर कीन्ह गढि सोने ।।
ऊपर पाल चहू दिसा अंब्रित फर सब रूख ।
देखि रूप सरवर कर गइ पियास अउ भूख ।।
पानि भरइ आवहि पनिहारी । रूप सरूप पदुमिनी नारी ।।
पदुम गध तिन्ह अग बसाही । भवर लागि तिन्ह सग फिराही ।।
लक-सिघिनी सारग-नयनी । हस-गाविनी कोकिल-बयनी ।।
आवहि झुड सु पातिहि पाती । गवन सोहाइ सुभातिहि भाती ।।

ताल तलाउ सो वरनि न जाही । सूझइ वार पार तेहि नाही ।।
फूले कुमुद केति उजिआरे । जानउ गए गगन महँ तारे ।।
उतरहि मेघ चढहि लेइ पानी । चमकहि मछ बीजु कइ बानी ।।
पइरहि पंखि सो संगहि संगा । सेत पीत राते सव रंगा ।।
चकई चकवा केलि कराही । निसि क बिछोहा दिनहि मिलाही ।।
कुररहि सारस भरे हुलासा । जिअन हमार मुअहि एक पासा ।।
केवा सोन ढेक बग लेदी । रहे अपूरि मीन जल-भेदी ।।

नग अमोल तिन्ह तालहि दिनहि बरहि जस दीप ।
जो मरजीआ होइ तह सो पावइ वह सीप ।।

पुनि जो लागु वहु अंब्रित बारी । फरी अनूप होई रखवारी ।।
नउ-रंग नीउ सुरंग जभीरी । अउ बदाम वहु भेद अजीरी ।।
गलगल तुरज सदा-फरफरे । नारंग अति राते रस भरे ।।
किसमिसि सेउ फरे नउ पाता । दारिउ दाख देखि मन राता ।।
लागु सोहाई हरिफा-रेउरी । उनइ रही केलाकइ घउरी ।।
फरे तूत कमरख अउ नउजी । राइ-करउंदा बेरी चिरउजी ।।
संख-दराउ छोहारा डीठे । अउरु खजहजा खाटे मीठे ।।

पानि देहि खडवानी कुअहि खाड वहु मेलि ।
लागी घरी रहंटु कइ सीचहि अंब्रित बेलि ।।

पुनि फुल वारि लागु चहु पासा । बिरिख बेधि चंदन भइ वासा ।।
वहुत फूल फूली घन-बेइली । केवरा चंपा कुंद चवेइली ।।
सुरंग गुलाल कदम अउ कूजा । सुगंध-बकाउरि गंधरब पूजा ।।
नागेसर सतिबरग नेवारी । अउ सिंगार-हार फुलवारी ।।
सोनिजरद फूली सेवती । रूप-मंजरी अउरु मालती ।।
जाही जूही बकुचन्ह लावा । पुहुप सुदरसन लागू सोहावा ।।

मउलसिरी बेइलि अउ करना। सब फूल फूले बहु बरना ॥
तेहि सिर फूल चढहि वेइ जेहि माथहि मनि भागु।
आछहि सदा सुगध भइ जनु बसत अउ फागु ॥
सिघल नगर देखु पुनि बसा। धनि राजा असि जा करि दसा ॥
ऊची पवरी ऊच अबासा। जनु कबिलास इदर कर बासा ॥
राउ रांक सब घर घर सुखी। जो दीखइ सो हँसता-मुखी ॥
रचि रचि साजे चदन चउरा। पोते अगर भेद अउ गउरा ॥
सब चउपारिन्ह चदन खम्भा। ओठघि सभा-पति बइठे सम्भा ॥
जनउ सभा देओतन्हि कइ जूरी। परइ दिसिहि इदरासन पूरी ॥
सबइ गुनी पडित अउ ग्याता। ससकिरित सबके मुख बाता ॥
आहक पथ सवारई जनु सिय-लोक अनूप।
घर घर नारी पदुमिनी मोहहि दरसन रूप ॥
पुनि देखी सिघल कइ हाटा। नउ-उनिद्धि लछिमी सब पाटा ॥
कनक हाट सब कुकुहि लीपी। बइठ महाजन सिघल-दीपी ॥
रचहि हतउडा रूपहि ढारी। चितर कटाउ अनेक सवारी ॥
सोन रूप भल भएउ पसारा। धवर सिरीपोतहि घर-बारा ॥
रतन पदारथ मानिक मोती। हीरा पवरि सो अनवन जोती ॥
अउ कपूर बेना कसतूरी। चदन अगर रहा भरि पूरी ॥
जेइ न हाट एहि लीन्ह बेसाहा। ता कह आन हाट कित लाहा ॥
कोई करइ बेसाहना काहू केर बिकाइ।
कोई चलइ लाभ सउ कोई मूर गवाँइ ॥
लेइ लेइ फूल बइठि फुलबारी। पान अपूरब धरे सवारी ॥
सोधा सबइ बइठु लेइ गाँधी। बहुल कपूर खिरउरी बाधी ॥
कतहू पडित पढहि पुरानू। धरम पथ कर करहि बखानू ॥

कतहू कथा कहइ किछु कोई। कतहू नॉच कोड भल होई।।
कतहू छरहटा पेखन लावा। कतहु पखडी काठ नचावा।।
कतहू नाद सबद होइ भला। कतहू नाटक चेटक कला।।
कतहु काहु ठग बिदिआ लाई। कतहुं लेहि मानुस बउराई।।

चरपट चोर गठि–छोरा मिले रहहि तेहि नाच।
जो तेहि हाट सजग रहइ गठि ता करि पइ वाच।।

पुनि आए सिघल–गढ पासा। का बरनउ जनु लाग अकासा।।
तरहि कुरुम वासुकि कइ पीठी। ऊपर इदर लोक पर डीठी।।
परा खोह चहुं दिसि अस बॉका। कापइ जांघ जाइ नहि झाका।।
अगम–असूझ देखि डर खाई। परइ सो सपत पतारहि जाई।।
नउ पउरी वाकी नउ खंडा। नउ–उजो चढइ जाइ ब्रहमडा।।
कचन कोट जरे कउ सीसा। नखतन्ह भरी बीजु जनु दीसा।।
लका चाहि ऊच गढ ताका। निरखि न जाइ दिसिहि मन थाका।।

हिअ न समाइ दिसिहि नहि जानउ ठाढ सुमेरु।
कह लगि कहउ उचाई कह लगि बरनउ फेरु।।

निनि गढ बॉचि चलइ ससि सूरा। नाहित होइ बाजि रथ चूरा।
पउरी नउ-उ बजर कर साजी। सहस सहस तह बइठे पाजी।।
फिरहि पॉच कोटबार सो भवरी। कॉपइ पाउ चपत वेइ पउरी।।
पउरिहि पउरि सिह गढि काढे। डरपहि राइ देखि तिन्ह ठाढे।।
बहु विधान वेइ नाहर गढे। जनु गाजहि चाहहि सिर चढे।।
टारहि पूछि पसारहि जीहा। कुजर डरहि कि गुजरि लीहा।।
कनक–सिला गढि सीढी लाई। जगमगाहि गढ ऊपर ताई।।

नउ–उ खड नउ पउरी अउ तेहि बजर के बार।
चारि बसेरे सउ चढइ सत सउ चढइ जो पार।।

नवउ पउरि पर दसउं दुआरा । तेहि पर बाजु राज-घरिआरा ॥
घरी मो बइठि गनइ घरिआरी । पहर पहर सो आपनि वारी ॥
जबहि घरी पूजइ वह मारा । घरी घरी घरिआर पुकारा ॥
परा जो डाड जगत सब डांडा । का निचित माटी के भाडा ॥
तुम तेहि चाक चढे होइ काचे । आएउ फिर इन थिर होइ बाचे ॥
घरी जो भरइ घटइ तुम्ह आऊ । का निचित सोअहु रे बटाऊ ॥
पहरहि पहर गजर निति होई । हिआ निसोगा जागु न सोई ॥

मुहमद जीअन जल भरन रहंट घरी कइ रीति ।
घरी जो आई जीअन भरी जनमगा बीति ॥

गढ पर नीर खीर दुइ नदी । पानि भरहि जइसे दुरुपदी ॥
अउरु कुड एक मोती चूरू । पानी अम्रित कीचु कपूरू ॥
ओहिक पानि राजा पइ पीआ । बिरिधि होइ नहि जउ लहि जीआ ॥
कंचन विरिख एक तेहि पासा । जस कलप-तरु इदर कबिलासा ॥
मूल पतार सरग ओहि साखा । अमर बेलि को पाउ को चाखा ॥
चाद पात अउ फूल तराई । होइ उंजिआर नगर जह ताई ॥
वह फर पावइ तपि कह कोई । बिरिधि खाइ नउ जोबन होई ॥

राजा भए भिखाटी सुनि ओहि अम्रित भोग ।
जइ पावा सो अमर भा न किछु बिआधि न रोग ॥

गढ पर बसहि झारि गढ-पती । असु–पति गज–पति भू–नर–पती ॥
सबक धउरहर सोनइ साजा । अउ अपने अपने घर राजा ॥
रूपवत धनवत सभागे । परस-पखान पउरि तिन्ह लागे ॥
भोग विरास सदा सब माना । दुख चिन्ता कोइ जनम न जाना ॥
मदिर मदिर सब के चउपारी । बइठि कुअर सब खेलहि सारी ॥
पासा ढरइ खेलि भलि होई । खरग दान सरि पूजन कोई ॥

भाँट बरनि कहि कीरति भली । पावहिँ घोर हसति सिघली ।।

मँदिर मँदिर फुलवारी चोआ चंदन बास ।

निसिदिन रहइ तहँ छवो रितु बरहो मास ।।

पुनि चलि देखा राज-दुआरू । महिघूँबिँअ पाइअ नहिँ बारू ।।

हसनि सिघली बाँधे बारा । जनु सजीउ सब ठाढ पहारा ।।

कवन-उ सेत पीत रतनारे । कवन-उ हरे धूम अउकारे ।।

बरनहिँ बरन गगन जनु मेघा । अउ तेहि गगन पीठि जस ठेघा ।।

सिघल के बरनउँ सिघली । एक एक चाहि एक एक बली ।।

गिरि पहार वेइ पइगहि पेलहिँ । बिरिख उचारि फारि मुख मेलहि ।।

माँते निमते गरजहिँ बाँधे । निसि दिन रहहिँ महाउत काँधे ।।

धरनी भारन अँगवई पाउँ धरत उठ हालि ।

कुरुम टूट फन फाटई तिह हसतिह के चालि ।।

पुनि बाँधे रजबार तुरंगा । का बरनउँ जस उह के रंगा ।।

लीले समुद चाल जग जाने । हाँसुल भवँर किआह बखाने ।।

हरे कुरंग महुअ बहु भाँती । गरर कोकाह बुलाह सो पाँती ।।

तीख तुखार चाँडि-अउ बाँके । तरपहिँ तवहिँ नाँचि बिनु हाँके ।।

मन तहँ अगुमन डोलहिँ बागा । देत उसाँस गगन सिर लागा ।।

पावहिँ साँस समुद पर धावहिँ । बूड न पाउँ पार होइ आवहिँ ।।

थिर न रहहिँ रिसलोहि चबाही । भाजहिँ पूँछि सीस उपराही ।।

अस तुखार सब देखे जनु मन के रथ-बाह ।

नयन पलक पहुँचावही जहँ पहुँचइ कोइ चाह ।।

राज-सभा पुनि देख बईठी । इँदर-सभा जनु परि गइ डीठी ।।

धनि राजा असि सभा सबारी । जानउ फूलि रही फुलवारी ।।

मुकुट बाधि सब बइठे राजा । दर निसान सब जिह के बाजा ।।

रूपवत मनि दिपइ लिलाटा । मॉथर छात बइठ सब वाटा ।।
मानउ कवल सरोबर फूले । सभाक रूप देखि मन भूले ।।
पान कपूर मेद कसतूरी । सुगध बास सब रही अपूरी ।।
माझ ऊच इदरासन साजा । गॅधरब-सेन बइठ तह राजा ।।
छतर गगन लगता कर सूर तवइ जस आपु ।
सभा कबल अस बिगसई माथर बड परतापु ।।

साजा राज-मदिर कबिलासू । सोनइ कर सब पुहुमि अकासू ।।
सात खड धउराहर साजा । उहइ सवारि सकइ अस राजा ।।
हीरा ईटि कपूर गिलावा । अउ नग लाइ सरग लेइ लावा ।।
जावत सबइ उरेस उरेहे । भॉति भॉति नग लाग उवेहे ।।
भाकटाउ सब अनवन भॉती । चितर होतगा पातिह पाती ।।
लाग खभ मनि मानिक जरे । जनु दीआ दिन रइनि बरे ।।
देखि धउरहर कइ उजिआरा । छपि गा चॉद सुरुज अउ तारा ।।
सुने सात बइकुठ जस तस साजे खड सात ।
बीहर बीहर भाउ नस खड खड ऊपर जात ।।

बरनउ राज मदिर रनि बासू । अछरिन्ह भरा जानु कबिलासू ।।
सोरह सहस पदुमिनी रानी । एक एक तइ रूप बखानी ।।
अति सु-रूप अउ अति सु-कुवारी । पान फूल के रहहि अधारी ।।
तिह ऊपर चंपावति रानी । महा सुरूप पार परधानी ।।
पाट बइठि रह किए सिगारू । सब रानी ओहि करहि जोहारू ।।
निति नउ रग सु-रग मे सोई । परथम बयस न सरबरि कोई ।।
सकल दीप मह चुनि चुनि आनी । तिह मह दीपक वारह वानी ।।
कुवरि बतीस-उ लक्खिनी अस सँब माह अनूप ।
जावंत सिघल-दीप मह सवइ वखानहि रूप ।।

अथ जनम खंड

चपावति जो रूप सवारी । पदुमावति चाहइ अउतारी ।।
भइ चाहइ असि कथा सलोनी । मेटि न जाइ लिखी जसि होनी ।।
सिघल-दीप भएउ तब नाऊँ । जो अस दिआ बरा तेहि ठाऊँ ।।
प्रथम सो जोति गगन निरमई । पुनि सो पिता माथइ मनि भई ।।
पुनि वह जोति मातु घट-आई । तेहि ओदर आदर बहु पाई ।।
जस अउधानु पूर भा तासू । दिन दिन हिअर होइ परगासू ।।
जस अचल झीइन महँ दीआ । तस उँजिआर देखावइ हीआ ।।

सोनइ मदिर सवारही अउ चदन सब लीप ।
दिआ जो मनि सिउलोक मह उपना सिघल-दीप ।।

भए दस मास पूरि भइ घरी । पदुमावति कनिआ अउतरी ।।
जानउ सुरुज किरिनि हुत काढी । सूरुज करा घाटि वह बाढी ।।
भा निसि मह दिन कर परगासू । सब उँजिआर भएउ कबिलासू ।।
इते रूप मूरति परगटी । पूनिउ ससि सो खीन होइ घटी ।।
घटत ही घटत अमावस भई । दुइ दिन लाज गाडि भुइ गई ।।
पुनि जो उठी दूइज होइ नई । निह कलक ससि विधि निरमई ।।
पदुम-गध बेधा जग बासा । भवर पतग भए चहुँ पासा ।।

इते रूप भइ कनिआ जेहि सरि पूज न कोइ ।
धनि सो देस रुपवँता जहाँ जनम अस होई ।।

भई छठि राति छठी सुख मानी । रहसि कूद सँड रहनि बिहानी ।।
भा बिहान पडित सब आए । काढि पुरान जनम अरथाए ।।
ऊतिम घटी जनम भा तासू । चाँद उआ भुइ दिया अकासू ।।
कनिआ रासि उदय जग किआ । पदुमावती नाउँ भा दिआ ।।

सूर परस सँड भण्ड गुरीरा । किटिनि जामि उपना नग हीरा ॥
तेहि तई अधिक पदारथ करा । रतन जोग उपना निरमरा ॥
सिघल-दीप भण्ड अउतारा । जबू-दीप जाइ जाइ जमुआरा ॥

रामा आए अजूधिआ लखन बतीस-उ सग ।
रावन रूप सो भूलेहि दीपक जइस पतग ॥

अही जनम-पतरी सो लिखी । देह असीस बहुरे जोतिरनी ॥
पाँच वरिस महँ भई सो बारी । दीन्ह पुरान पढइ बइसारी ॥
भइ पदुमावती पडित गुनी । चहूँ खड के राजन्ह सुनी ॥
सिघल-दीप राज घरबारी । महा सुरूप दई अउतारी ॥
एक पदुमिनि अउ पडित पढी । दहु केइ जोग दई असि गढी ॥
जा कह लिखी लच्छि घर होनी । सो असि पाउ पढी अउ लोनी ।
सपत दीप के बर जो ओनाही । उतर न पावहि फिरि फिरि जाही ॥

राज कहइ गरब मउ हउ रे इदर सिड-लोक ।
को सरि मो सउ पावई का सउ करउ बरोक ॥

बारह वरिस माह भइ रानी । राजइ सुना सजोग सपानी ॥
सात खड धउराहर तासू । सो पदुमिनी कह दीन्ह निवासू ॥
अउ दीन्ही सग सखी सहेली । जो सग करहि रहसि रसकेली ॥
सवइ नउलि पिअ सगन सोई । कवल पास जनु बिगसी कोई ॥
सुआ एक पदुमावति ठाऊ । महा-पडित हीरामनि नाऊ ॥
दई दीन्ह पखिहि असि जोती । नयन रतन मुख मानिक मोती ।
कचन वरन सुआ अति लोना । मानहु मिला सोहागहि सोना ॥

रहहि एक सग दुअऊ पढहि सासतर बेद ।
बरम्हा सीस डोलावई सुनत लाग तस भेद ॥

जग कोइ दिसिटिन आवहि अछरी नयन अकास ।
जोगि जती सनिआसी तप साधहि तेहि आस ।।
एक दिवस पदुमावति रानी । हीरामनि तइ कहा सयानी ।
पिता हमार न चालइ बाता । त्रासहि बोलि सकइ नहि माता ।।
देस देस के बर मोहि आवहि । पिता हमार न आँखि लगावहि ।।
हीरामनि तब कहा बुझाई । विधि कर लिखा मेटि नहि जाई ।।
अगिआ देउ देखउ फिरि देसा । तोहि लायक बर मिलइ नरेसा ।।
जउ लगि मइ फिरि आऊ मन चित धरहु निबारि ।
सुनत रहा कोइ दुरजन राजहि कहा बिचारि ।।
राजइ सुना दिसिटि भइ आना । बुधि जो देइ सग सुआ सयाना ।
भएउ रजाएसु मारहु सूआ । सूर सुनाउ चाँद जह ऊआ ।
सतुर सुआ के नाऊ बारी । सुनि धाए जस धाउ मजारी ।
तब लगि रानी सुआ छपावा । जब लगि आऊ मजारि न पावा ।।
पिता कि आएसु माथइ मोरे । कहहु जाइ बिनवइ कर जोरे ।।
पखि न कोई होइ सुजानू । जानइ भुगुति कि जानु उडानू ।।
सुआ जो पढइ पढाए बयना । तेहि कित बुधि जेहि हिअइ न नयना ।।
मानिक मोती देखि वह हिए न गिआन करेइ ।
दारिऊ दाख जानि कइ तब-हि ठोर भरि लेइ ।।
वेइ तो फिरे उतर अस पावा । बिनवाँ सुअइ हिअइ उरु खावा ।।
रानी तुम्ह जुग जुग सुख आऊ । हउ अब बनोबास कह जाऊ ।।
मोतिहि जो मलीन होइ करा । पुनि सो पानि कहाँ निरमरा ।।
ठाकुर अत चहइ जेहि मारा । तेहि सेवक कह कहाँ उबारा ।।
जेहि घर काल मजारी नाचा । पखी नाउ जीउ नहि बाँचा ।।
मइ तुम्ह राज बहुत सुख देखा । जउ पछहु देइ जाइ न लेखा ।।

जो हीछा मन कीन्ह सो जेवा। यह पछिताउ चलउ बिनु सेवा ॥
मारइ सोई निसोगा डरइ न अपने दोस।
केला केलि करइ का जो भा बेरि परोस ॥
रानी उतर दीन्ह कइ मया। जउं जिउ जाइ रहइ किमि कया ॥
हीरामनि तुं परान परेवा। धोख न लागु करत तोहि सेवा ॥
तोहि सेवा बिछुरन नहि आखउ। पीजर हिअइ घालि कइ राखिउ ॥
हउ मानुस तूं पखि पिआरा। धरम पिरीति तहाँ को मारा ॥
का पिरीति तन माँह बिलाई। सो पिरीति जिउ साथ जो जाई ॥
पिरिति भार लेइ हिअइ न सोचू। ओहि पथ भल होइ कि पोचू ॥
पिरिति पहार भार जो काँधा। तेहि कित छूट लाइ जिउ बाँधा ॥
सुआ न रहइ खुरुकि जिउइ अब-हि काल सो आउ।
सतुर अहइ जो करिया कब-हु सो बोइ नाउ ॥
इति जनम खंड ॥ ३ ॥

अथ मानसरोदक-खंड ॥४॥

एक दिवस पूनिउ तिथि आई। मानसरोदक चली अन्हाई ॥
पदुमावति सब सखी बोलाई। जनु फुलवारि सबइ चलि आई ॥
कोइ चपा कोइ कुद सहेली। कोइ सो केत करना रस-बेली ॥
कोइ सो गुलाल सुदरसन राते। कोइ बकउरि बकुचन बिहसाते ॥
कोइ सो मउल सिरि पुहुपावती। कोइ जाही जूही सेवती ॥
कोई सोनिजरद कोइ केसर। कोइ सिगार-हार नागेसर ॥
कोई कूजा सतिबरग चबेइली। कोइ कदम सुरस रस-बेइली ॥
चली सबइ मालति सग फूली कवल कुमोद।
बेधि रहे गन गधरब बास परिमला मोद ॥६०॥

खेलत मानमरोदक गई । जाइ पालि पर ठाढी भई ॥
अइ रानी मनु देखु बिचारी । एहि नइ हर रहना दिन चारि ॥
जउ लहि आहि पिता कर राजू । खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥
पुनि सासुर हम गवनब काली । कित हम कित यह सरवर पाली ॥
किन आउन पुनि अपने हाथा । कित मिलि कइ खेलब एक-साथा ॥
सासु ननद बोलिन जिउ लीही । दारुन ससुर न निसरइ दीही ॥

पिउ पिआर सब ऊपर पुनि सो करइ दहु काह ।
दहु सुख राखइ की दुख दहु कस जनम निबाह ॥६१॥

मिर्लाह रहसि सब चढहि हिडोरी । झूलि लेहि सुख बारी भोरी ॥
झूलि लेहु नइहर जब ताई । फिरि नहि झूलन दीही साई ॥
पुनि सासुर लेइ राखिहि तहा । नइहर चाह न पाउबि जहा ॥
कित यह धूप कहा यह छाहा । रहबि सखी बिनु मदिर माहा ॥
गुनि पूछिहि अउ लाइहि दोखू । कउनु उतर पाउबि कित मोखू ॥
सासु ननद कित भउहू सकोरे । रहबि सकोचि दुअउ कर जोरे ॥
कित यह रहसि जो आउवि करना । ससुरइ अत जनम दुख मरना ॥

कित नइहर पुनि आउबि कित सासुर यह खेलि ।
आपु आपु कह होइहि परबि पखि जस डेलि ॥६२॥

सरवर तीर पदुमिनि आई । खोपा छोरि केस मुख लाई ॥
ससि मुख अग मलय-गिरि रानी । नागिनि झापि लीन्ह अरघानी ॥
ओनए मेघ परी जग छाहा । ससि कइ सरन लीन्ह जनु राहा ॥
छपि गइ दिन-हि भानु कँइ दसा । लेइ निसि नखत चाद परगसा ॥
भूलि चकोर दिसिरि तह लावा । मेघ घटा मह चद देखावा ॥
दसन दाविनी कोकिल भाखी । भउ हइ धनुखगगन लेइ राखी ॥

सरवर रूप विमोहा पिअइ हिलोर करेइ ।
पाउ छुअइ मकु पावऊ एहि मिस लहरइ देइ ।।
धरी तीर सब कचुकि सारी । सरवर मह पइठी सब वारी ।।
करिल केस बिसहर बिसभरे । लहरइ लेहि कवल मुखधरे ।।
उठी कोपि जस दारिउ दाखा । भई उनत पेम कइ साखा ।।
नवल बसत सवारइ करी । होइ परगढ जानउ रस भरी ।।
सरवर नहि समाइ संनारा । चांद नहाइ परिठ लेइ तारा ।।
धनि सो नीर ससि तरई अई । अब कित दिसिरि कवल अउ कूई ।।
चकई बिछुरि पुकारई कहा कहा मिलन हो नाह ।
एक चाद निसि मरग पर दिन दोसर जल माह ।।
लागी केलि करइ मझ नीरा । हस लजाइ बइठु तेहि तीरा ।।
पदुमावति कउतक कहँ राखी । तुम्ह ससि होहु तरायन साखी ।।
वाद मेलि कइ खेलि पसारा । हार देइ जउ खेलत हारा ।।
सबरिहि सावरि गोरिहि गोरी । आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी ।।
बूझि खेलि खेलहु एक साथा । हार न होइ पराए हाथा ।।
आजु-हि खेलि बहुरि कित होई । खेलि गए कित खेलइ कोई ।।
धनि सो खेलि खेलहि रस पेमा । रउताई अउ कूसर खेमा ।।
मुहमद बारि परेम कइ जठ भावइ तउ खेल ।
तेलहि फूलहि सग जउ होइ फुला एल तेल ।।
सखी एक तेइ खेलि न जाना । भइ अचेत मनि-हार गवाना ।।
कवल डार गहि भइ बिकरारा । का सु पुकारउ आपन हारा ।।
कित खेलइ आइऊ एहि सासा । हार गवाइ चली सइ हाथा ।।
घर पइठत पूछब एहि हारू । कउनु उतर पाउबिपइसारू ।।
नयन सीप आसुन्ह तस भरे । जानउ मोति गिरहि सव ढेर ।।

सखिन्ह कहा भोरी कोकिला । कउनु पानि जेहि पवनन मिला ।।
हार गवांइ सो अइसइ रोआ । हेरि हेराइ लेहु जन खोआ ।।
लागी सब मिलिहेरई बूडि बूडि एक साथ ।
कोई उठी मोती लेइ काहू घोघी हाथ ।।
कहा मानसर चहा सो पाई । पारस-रूप इहा लगि आई ।।
भा निरमर तिन्ह पाएन्ह परसे । पावा रूप-रूप के दरसे ।।
मलय-समीर बास तन आई । भासीतल गइ तपन बुझाई ।।
न जनउँ कउनु पवन लेइ आवा । पून दसा भइ पाप गवाँवा ।।
ततखन हार बेग उतराना । पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना ।।
बिगसी कुमुद देखि ससि-रेखा । भइ तहँ ओप जहाँ जो देखा ।।
पावा रूप-रूप जस चहा । ससि-मुख सब दरपन होइ रहा ।।
नयन जो देखी कँवल भइ निरमर नीर सरीर ।
हँसति जो देखी हंस भइ दसन जोति नग हीर ।।
इति मानसरोदक खंड ।। ४ ।।

अथ—सुआ खंड ।। ५ ।।

पदुमावति तहँ खेल दुलारी । सुआ मन्दिर महँ देख मँजारी ।।
कहेसि चलउँ जउ लहि तन पाखा । जिउ लेइ उडा ताकि बन-ढांखा ।।
जाइ परा बन-खंड जिउ लीन्हे । मिले पखि बहु आदर कीन्हे ।।
आनिधरे आगइ सब साखा । भुगुति न मेटइ जउ लहि राखा ।।
पाई भुगुति सुख मन भएऊ । अहा जो दुख बिसरि सब गएऊ ।।
अइ गोसाइ तू अहस विधाता । जावत जिउ सब कर भक-दाता ।।
पाहन मह न पतंग बिसारा । जहं तोहिं सवंर देहि तू चारा ।।
तउ लहि सोग विछोह कर भोजन परा न पेट ।
पुनि बिसरा या सवरना जनु सपने भइ भेट ।।

पदुमावति पह आइ भंडारी । कहेसि मदिर मह परी मंजारी ॥
सुआ जो उतर देत इहा पूछा । उडिगा पिजर न बोलइ छूछा ॥
रानी सुना सूखि जिउ गएऊ । जनु निसिपरी असत दिन भएऊ ॥
गहनहि गही चाँद कइ करा । आँसु गगन जनू नखतन्ह भरा ॥
टूट पालि सरवर बहि लागे । कवल बूड मधुकर उडि भागे ॥
एहि बिधि आँसु नखत होइ चुए । गगन छाँडि सरवर भरिउए ॥
छिहुरि चुई मोतिन्ह कइ माला । अब सकेत बांधा चहु पाला ॥

उडि यह सुअटा कह बसा खोजहु सखि सो बासु ।
दहुं हइ धरती की सरग पवन न पावइ तासु ॥

चहूँ पास समुझावहि सखी । कहाँ सो अब पाइअगा पखी ॥
जउ लहि पिंजर अहा पेखा । रहा बाँद कीन्हेसि निति सेवा ॥
तेहु बंद हुति छूटइ पावा । पुनि फिर बद होइ कित आवा ॥
वह उड़ान-फर तहिअइ खाए । जब मा पखि पाँख तन पाए ॥
पिंजर जेहिक सउपि तेहि गएऊ । जो जाकर सो ताकर भएऊ ॥
दस बाटइं जेहि पिंजर माहाँ । कइसइ बाँच मंजारी पाहाँ ॥
एहि धरती अस केतन लीले । तस पेट गाढ बहुरि नहि ढीले ॥

जहाँ न राति न दिवस हइ जहाँ न पवन न पानि ।
तेहि बन होइ सुअटा बसा को रे मिलावइ आनि ॥

सुअइ तहाँ दिन दस कलि काटी । आई बिआध ढुका लेइ टाटी ॥
पइग पइग भुइँ चाँपत आबा । पंखिन्ह देखि हिअइ डर खावा ॥
देखहु किछु अचरज अनभला । तरिवर एक आवत हइ चला ॥
एहि वन महत गई हम आऊ । तरिव चलत न देखा काऊ ॥
आजु जो तरिवर चलभल नाही । आवहु एहि बन छाँडि पराही ॥
वेइ तउ उडे अउरु बन ताका । पडित सुआ भूलि मन थाका ॥

साखा देखि राजु जनु पावा । बइठ निचित चला वह आवा ।।
पाँच बानकर खोंचा लासा भरे सो पाच ।
पाख भरे तन अरुझा कित मारइ बिनु बाच ।।
बद भा सुआ करत सुखकेली । चूरि पाख धरि मेलेसि डेली ।।
तहवा पखि बहुत खरभ रही । आपु आपु मह रोदन करही ।।
बिख-दाना कित देइ अंगूरा । जेहि मा मरन डहन धर चूरा ।।
जउ न होत चारा कइ आसा । कित चिरि-हार ढुकत लेइ लासा ।।
एहि बिख-चारइ सब बुधि ठगी । अउ भा काल हाथ लेइ लगी ।।
एहि झूठी माया मन भूला । चूरइ पांख जइस तन फूला ।।
यह मन कठिन मरइ नहि मारा । जार न देखु देखु पइचारा ।।
हम तउ बुद्धि गवाई बिख-चारा अस खाइ ।
तू सुअटा पडित हता तू कित फादा आइ ।।
सुअइ कहा हम-हूं असभूले । टूट हिंडोल गरब जेहि झूले ।।
केला के बन लीन्ह बसेरा । परा साथ तह बइरिन्ह केरा ।।
सुख कुरआर फरहुरी खाना । बिख भा जबहि बिआध तुलाना ।।
काहे क भोग-बिरिख असफरा । आड लाई पंखिन्ह कहँ धरा ।।
होइ निचित बइठे तेहि आडा । तब जाना खों चाहिए गाडा ।।
सुख निचित जोरत धन करना । यह न चित आगइ हइ मरना ।।
भूले हम-हुँ गरब तेहि माहाँ । सो बिसरा पावा जेहि पाहाँ ।।
चरत न खुरुक कीन्ह जब तब रे चरा सुख सोइ ।
अब जो फाँद परा गिउ तब रोए का होइ ।।
सुनि कइ उतर आसु सब पोछे । कउनु पख बाधे बुधि ओछे ।।
पखिन्ह जउँ बुधि होइ उजिआरी । पढा सुआ कित धरइ मजारी ।।
कित तीतर बन जीभ उघेला । सो कित हँकारि फांद गिउ मेला ।।

ता दिन व्याध भएउ जिउ लेवा । उठे पाख भा नाउँ परेवा ॥
भइ बिआधि तिसिना सँग खाधू । सूझइ भुगुतिन सूझ बिआधू ॥
हमहि लोभ वह मेला चारा । हमहि गरब वह चाहर मारा ॥
हम निचित वह आड छपाना । कअनु बिआधहि दोस अपाना ॥
सो अउगुन कित कीजिए जिउ दीजिअ जेहि काज ।
अब कहना किछु नाही मसटि भली पँखि-राज ॥

अथ राजा-रतन-सेन-जनम खंड ॥६॥

चितर-सेन चितउर गढ राजा । कइ गढ कोट चितर जेइ साजा ॥
तेहि कुल रतन-सेन उँजिआरा । धनि जननी जनमा अस बारा ॥
पंडित गुनि सामुदरिक देखहि । देखि रूप अउ लगन बिसेखहि ॥
रतन-सेन बहु नग अउतरा । रतन जोति मनि माँथइ बरा ॥
पदिक-पदारथ लिखी सो जोरी । चाद सुरुज जस होइ अँजोरी ॥
जस मालति कहँ भँवर बिओगी । तस ओहि लागि होइ यह जोगी ॥
सिघल-दीप जाइ वह पावइ । सिद्ध होइ चित-उर लेइ आवइ ॥
भोज भोग जस माना बिकरम साका कीन्ह ।
परखि सो रतन पारखी सबइ लगन लिखि दीन्ह ॥

इति राजा-रतन-सेन-जनम खंड ॥६॥

मध्य युग

सगुन भक्ति धारा

कृष्ण भक्ति शाखा

रसखान

रसखान

प्रेम

प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोय ।
जो जन जानै प्रेम तो, मिटै जगत क्यो रोय ।।
प्रेम अगम अनुपम अमित, सागर सरिस बखान ।
जो आवत यहि ढिग बहुरि, जात नाहिं रसखान ।।
प्रेम बारुनी छान कै, वरुन भये जलधीस ।
प्रेमहि ते विषपान करि, पूजे जात गिरीस ।।
दंपतिसुख अरु विषय रस पूजा निष्ठा ध्यान ।
इनते परे बखानिये, शुद्ध प्रेम रसखान ।।
मित्र कलत्र सुबधु सुत, इनमे सहज सनेह ।
शुद्ध प्रेम इनमे नही, अकथ कथा सबिसेह ।।
जेहि बिनु जाने कछुहि नही, जान्यो जात विसेस ।
सोई प्रेम जेहि जानि कै, रहि न जात कुछ सेस ।।
इक अगी बिनु कारन ही, इक रस सदा समान ।
गनै प्रियहिं सरबस्व जो, सोई प्रेम परधान ।।
डरै सदा चाहै न कछ, सहै सबै जो होय ।
रहै एक रस चाहि कै, प्रेम बखानौ सोय ।।

× × × × ×

मानुष हौ तो वही रसखान,
बसौ संग गोकुल गांव के ग्वारन ।
जौ पसु हों तो कहा बसु मेरो,
चरौ नित नंद की धेनु मंझारन ।।

पाहन हौं तो वही गिरि को,
जौ कियो ब्रज छत्र पुरदर कारन ।
जौ खग हो तो बसेरो करौ वही,
कालिंदी कूल कदंब की डारन ॥
या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहूं पुर कौ तजि डारौ ।
आठहुं सिद्धि नवौ निधि के,
सुख नंद की गाय चराय बिसारौ ॥
नैनन सो रसखान जबै,
ब्रज के बन बाग तडाग निहारौ ।
केतिक हू कलधौत के धाम,
करील के कुजन ऊपर वारौ ॥
मोर पखा सिर ऊपर राखि हो,
गुज की माल परे पहिरौगी ।
ओढि पिताबर लै लकुटी बन,
गोधन ग्वालन संग फिरौगी ॥
भावतो सोई मेरो रसखान,
सो तेरे कहे सब स्वांग करौगी ।
या मुरली मुरलीधर की,
अधरान-धरी अधरा न धरौगी ॥

× × × × ×

बाल्य वर्णन

धूर भरे अति सोहित स्याम जू, तैसी बनी सिर सुदर चोटी ।
खेलत खात फिरै अंगना पग, पैजनी बाजती पीरी कछोटी ॥

वा छवि को रसखान बिलोकत, वारत काम कला निज कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि, हाथ सों ले गयो माखन रोटी ॥
दोउ कानन कुडल मोर पखा, सिर सोहै दुकूल नयो चटको।
मनिहार गरे सुकुमार धरे, नर भेस करे पिय को टटको ॥
सुम काछनि वैजनि पैजनी पायन, आमन मे न लगो झटको ॥
वह सुदर को रसखान अली, जो गलीन मे आय अबै अटको ॥
सौहत है चदवा सिर मौर के, जैसिये सुन्दर पाग कसी है ॥
तैसिये गोरज भाल विराजति, जैसी हिये बनमाल लसी है ॥
रसखान बिलोकत बौरी सोह्वै, दृग मूदि के ग्वालि पुकार हसी है।
खोलरी घूघट, खोलौ कहा, वह मूरति . नैनन मांझ बसी है ॥

कान्हा की बंसी

कौन ठगोरी भरी हरि आज, बजाई है बासुरिया रस भीनी।
तान सुनी जिनही जितही, तिनही तित लाज विदा कर दीनी ॥
घूमै घरी घरी नंद के बार, नवीनी कहा अरु बाल प्रवीनी।
या व्रजमडल मे रसखान, सु कौन भटूजु लटू नहि कीनी ॥

भागीरथी स्तवन

वैद की औषधि खाइ कछू, न करै वह संजम री सुन मोसे।
तो जल पानि किये रसखानि, सजीवन जानि लियो सुख तोंसे ॥
ये री सुधामयी भागीरथी, निपतत्थि बनै न सनै तुहि पोसे।
आक धतूर चबात फिरै, विष खात फिरै शिव तेरे भरोसे ॥

उद्भट

सेस महेस गनेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरंतर गावै।
जाहि अनादि अनन अखड अछेद अभेद सुवेद बतावै ॥

नारद से सुक व्यास रहै पचि हारै तऊ पुनि पार न पावै।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरि छाछ पै नाच नचावै ॥
आयो हुतो नियरो रसखान कहा कहू तू न गई वहि ठैया।
या ब्रज मे सिगरी बनिता सब वारति प्राननि लेत बलैया ॥
कोऊ न काहु कि कानि करै कछु चेटक सोजु करचो जदुरैया।
गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया ॥
द्रौपदि औ गनिका गज गीध, अजामिल जो कियो सो न निहारो।
गौतम गेहिनि कैसे तरी, प्रहलाद को कैसे हरचो दुख भारो ॥
काहे को सोच करै रसखान, कहा करि है रवि नद बिचारो।
ताखन जाखन राखिये माखन, चाखन हारो सो राखन हारो ॥
ब्रह्म मै ढूढचो पुरानन वेदन, मद सुने चित चौगुने चायन।
देख्यो सुन्यो न कबौ कितहूं, वह कैसो स्वरूप है कैसो सुभायन ॥
हेरत हेरत हारि फिरचो, रसखान बतायो न लोग लुगायन।
देख्यो कहा वह कुज कुटीर, कुटीतट, बैठो पलोटत राधिका पायन ॥

कहा रसखान सुख सपति सुमार कहा,
कहा तन जोगी ह्वै लगाये तन छार को।
कहा साधे पचानल कहा सोये बीचानल,
कहा जीति लाये राज सिधु आरपार को ॥
जप बार बार तप संयम बयार ब्रत,
तीरथ हजार अरे बूझत लबार को।
कीन्हों नही प्यार नही सेयो दरबार चित,
चाह्यो न निहार जो पै नद के कुमार को ॥

———

अकबर के युग की
स्फुट रचनाएँ

रहीम

रहीम के दोहे

सर सूखे पछी उडे औ सरन समाहि ।
दीन मीन बिन पच्छ के कहु रहीम केही काज ॥१॥

धूर धरत निज सीस पर कहु रहीम केहि काज ।
जेहि रज मुनिपत्नी तरी सो ढूढत गजराज ॥२॥

दीन सबन को लखत है दीनहि लखै न कोइ ।
जो रहीम दीनहि लखै दीनबन्धु सम होइ ॥३॥

राम न जाते हिरन सग सीय न रावन साथ ।
जो रहीम भावी कहूँ होत आपने हाथ ॥४॥

कहु रहीम कैसे बने केरि बेरि को सग ।
वे डोलत रस आपने उनको फाटत अग ॥५॥

जो रहीम ओछो बढै तो नित ही इतराइ ।
प्यादे से फरजी भयो टेढो टेढो जाइ ॥६॥

नैन सलोने अधर मधु कहु रहीम घटि कौन ।
मीठो भावै लौन पर अरु मीठे पर लौन ॥७॥

जो रहिमन दीपक दशा किय राखति पट ओट ।
समय परे ते होत है वाही पट की चोट ॥८॥

रहिमन राज सराहिये शशि सम सुखद जो होइ ।
कहा बापुरो भानु है तप्यौ तरैयन खोइ ॥९॥

कमला थिर न रहीम कहि यह जानत सब कोइ ।
पुरुष पुरातन की बधू क्यो न चचला होइ ॥१०॥

जो गरीब सो हित करै धनि रहीम वे लोग ।
कहा सुदामा बापुरो कृष्णमिताई जोग ॥११॥

वह रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसग ।
चदन विष व्यापत नही लिपटे रहत भुजग ॥१२॥
आप न काहू काम के डार पात फल फूल ।
औरन को रोकत फिरै रहिमन पेड बबूल ॥१३॥
यो रहीम सुख होत है बढत देखि निज गोत ।
ज्यौ बडरी अखिया निरखि आखिन को सुख होत ॥१४॥
शशि सकोच साहस सलिल मान सनेह रहीम ।
बढत बढत बढि जात है घटत घटत घट सीम ॥१५॥
यह रहीम निज सग लै जनमत जगत न कोइ ।
बैर प्रीति अभ्यास जस होत होत ही होइ ॥१६॥
दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जैयत भागि ।
ठाढे हूजत घूर पै जब घर लागत आगि ॥१७॥
प्रीतम छबि नैनन बसी पर छबि कहा समाय ।
भरी समाय रहीम लखि पथिक आप फिरि जाय ॥१८॥
कौन बडाई जलधि मिली गग नाम भयो धीम ।
केहि की प्रभुता नहि घटी पर घर गए रहीम ॥१९॥
रहिमन नही सराहिए लेन देन की प्रीति ।
प्राणनि को बाजी लगी हार होय कै जीति ॥२०॥
रहिमन रिस सहि तजत नही बडे प्रीति की पौरि ।
मूकनि मारत आवही नीद बिचारी दौरि ॥२१॥
जिहि रहीम तन मन दियो कियो हिये बिच मौन ।
तासो सुख दुख कहन की रही कथा अब कौन ॥२२॥
जो पुरुषारथ ते कहूँ संपति मिलत रहीम ।
पेट लागि बैराट घर तपत रसोई भीम ॥२३॥

ज्यो रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोइ ।
बारे उजियारो लगै बढै अधेरो होइ ॥२४॥
सपति भरम गँवाइ कै रहत हाथ कछु नाहि ।
ज्यो रहीम ससि रहत है दिवस अकासहि माहि ॥२५॥
अनुचित उचित रहीम लघु करहि बडन के जोर ।
ज्यो ससि के सयोग ते पचवत आगि चकोर ॥२६॥
धनि रहीम जल पंक को लघु निज पियत अघाइ ।
उदधि बडाई कोन है जगत पियासो जाइ ॥२७॥
मागे घटत रहीम पद कितौ करो बड काम ।
तीन पैड बसुधा करी तऊ बामने नाम ॥२८॥
नाद रीझि तन देत मृग नर धन हेत समेत ।
ते रहीम पसु ते अधिक रीझेहु नाही देत ॥२९॥
रहिमन अब वे तरु कहा जिनकी छहां गम्भीर ।
अब बागिन बिच देखियत सेहुड कज कबीर ॥३०॥
बिगरी बात बनै नही लाख करो किन कोय ।
रहिमन बिगरे दूध को मथे न माखन होइ ॥३१॥
मथत मथत माखन रहै दही मही बिलगाइ ।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराइ ॥३२॥
रहिमन निज मन की व्यथा मन ही राखो गोइ ।
सुनि अठिलैहै लोग सब बाटि न लैहे कोइ ॥३३॥
रहिमन चुप ह्वै बैठिये देखि दिनन को फेर ।
जब नीके दिन आइ है बनत न लागै बेर ॥३४॥
गहि शरणागत राम की भवसागर की नाव ।
रहिमन जग उद्धार करि और न कछू उपाव ॥३५॥

रहिमन वे नर मरि चुके जे कछु मागन जाहि ।
उन ते पहले वे मुए जिन मुख निकसत नाहि ॥३६॥
जाल परे जल जात बहि तजि मीमन को मोह ।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छाडत छोह ॥३७॥
धन दारा अरु सुतन मे रहत लगाए चित्त ।
क्यो रहीम खोजत नही गाढे दिन को मित्त ॥३८॥
ससि की सीतल चादनी सुन्दर सबहि सुहाय ।
लगे चोर चित मे लगी घटि रहीम मन आय ॥३९॥
अमृत ऐसे बचन मे रहिमन रिस की गांस ।
जैसे मिसिरिहु मे मिली निरस बास को फास ॥४०॥
रहिमन मनहि लगाइ के देखि लेहु किन कोय ।
नर को बस करिबो कहा नारायन बस होइ ॥४१॥
रहिमन अँसुआ नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेइ ।
जाहि निकारो गेह ते कस न भेद कहि देइ ॥४२॥
गुन ते लेत रहीम जन सलिल कूप ते काढि ।
कूपहु ते कहुँ होत है मन काहू को बाढि ॥४३॥
रहिमन मन महाराज के दृग सो नही दिवान ।
जाहि देखि रीझे नयन मन तेहि हाथ बिकान ॥४४॥
शीत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहि चूक ।
रहिमन तिहि रवि को कहा जो घटि लखै उलूक ॥४५॥
नहि रहीम कछु रूप गुन नहि मृगया अनुराग ।
देसी स्वान जु राखिए भ्रमत भूख ही लाग ॥४६॥
कागज का सो पूतरा सहजहि मे घुर जाइ ।
रहिमन यह अचरज लखो सोऊ खैचत बाइ ॥४७॥

रहिमन कहि इक दीप ते प्रगट सबै द्युति होइ ।
तनु सनेह कैसे दुरे दृग दीपक जरु दोइ ॥४८॥
जिहि रहीम चित आपनो कीन्हो चतुर ककोर ।
निशि बासर लागौ रहै कृष्णचन्द्र की ओर ॥४९॥
कहि रहीम धन बढ घटै जात धनिन की बात ।
घटै बढै उनको कहा घास बेचि जे खात ॥५०॥
जो रहीम होती कहूँ प्रभुगति अपने हाथ ।
तो को धौ केहि मान तो आप बडाई साथ ॥५१॥
तिहि प्रमान चलिबो भलो जो सब दिन ठहराइ ।
उमडि चलै जल पार ते जो रहीम बढि जाइ ॥५२॥
यो रहीम सुख दुख सहत बडे लोग सह साति ।
उवत चन्द्र जेहि भाति सो अथवत ताही भाति ॥५३॥
कहि रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहु रीत ।
विपत कसौटी जे कसे तेई साचे मीत ॥५४॥
तब ही लग जीबो भलो दीबो परै न धीम ।
विन दीबो जीबो जग हमहि न रुचै रहीम ॥५५॥
वड माया को दोस यह जो कब हूँ घटि जाय ।
तौ रहीम मरिबो भलो दुख ससि जियै बलाय ॥५६॥
धनि रहीम गति मीन की जल बिछुरत जिय जाय ।
जियत कज तजि अन्त बसि कहा भौर को भाय ॥५७॥
दादुर मोर किसान मन लग्यो रहै घन माहि ।
पै रहीम चातक रटनि सरवर को कोउ नाहि ॥५८॥
अमरबेलि बिन मूल की प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि खोजत फिरिये काहि ॥५९॥

सरबर के खग एक से बाढत प्रीति न ,धीम ।
पै मराल को मानसर एकै ठौर रहीम ॥६०॥
कहि रहीम केती रही केती गई बिलाय ।
माया ममता मोह परि अन्त चले पछिताय ॥६१॥
जे रहीम करिबो हुतो ब्रज को यही हवाल ।
तौ नाहक कर पर धरयो गोवर्धन गोपाल ॥६२॥
दीरघ दोहा अरथ के आखर थोरे आहि ।
ज्यौ रहीम नट कुण्डली सिमिट कूदि कढि जाहि ॥६३॥
जे रहीम बिधि बड किये को कहि दूषन काढि ।
चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखत ते बाढि ॥६४॥
अब रहीम घर घर फिरै मागि मधूकरि खाहि ।
यारो यारी छोड़ दो अब रहीम वे नाहि ॥६५॥
एकै साधे सब सधे सब साधे सब जाय ।
रहिमन मूलहि सीचिबो फूलै फलै अघाय ॥६६॥
पात पात को सीचिबो बरी बरी को लौन ।
रहिमन ऐसी बुद्धि मे कहो बरैगो कौन ॥ ६७॥
रहिमन धोखे भाव से मुख से निकसै राम ।
पावत पूरन परम गति कामादिक को धाम ॥६८॥
रहिमन छमा बडेन को छोटनि को उतपात ।
कहा विष्णु को घटि गयो भृगु जू मारी लात ॥६९॥
रहिमन कठिन चितान ते चिन्ता को चित चेत ।
चिता दहति निर्जीव को चिन्ता जीवसमेत ॥७०॥
पावस देखि रहीम मन कोइल साधे मौन ।
अब दादुर वक्ता भयो हमको पूछत कौन ॥७१॥
समय लाभ सम लाभ नही समय चूक सम चूक ॥
चतुरन चित रहिमन लगी समय चूक की हूक ॥७२॥

मध्ययुग

रीतिमार्गी शाखा

आलम

बाल-लीला

जसुदा के अजिर विराजै मन मोहन जू,
अग रज लागे छवि छाजै सुरपाल की ।
छोटे छोटे आछे पग घूघुर घुमत घने,
जासो चित हित लागै छोहबा दयाल की ।।
आछी बतिया सुनावै छिनु छाडिबोन भावै,
छाती सो छपावै लागे छोहवा दयाल की ।
हेरि ब्रजनारी हारी बारी फेरि डारी सब,
आलम बलैया लीजै ऐसे नन्दलाल की ।।

झीनी सी झँगूली बीच झीनो आगु झलकत,
झुमरि झुमरि झुकि ज्यौ ज्यो झूलै पलना ।
घूघरु घूमत बने घुघुरा के छोर घने,
कारे घुघुरारे मानो घन कारे चलना ।।
आलम रसाल जुग लोचन विशाल लोल,
ऐसे नन्दलाल अन देखे कहू कलना ।
बेर बेर फेरि फेरि गोद ले ले घेरि घेरि,
टेरि टेरि गावे गुन गोकुल की ललना ।।

पालन खेलत नन्दललन छलन बलि,
गोद लै लै ललना करति मोद गान है ।
आलम सुकवि पल पल मैया पावै सुख ।।
पोषति पियूष सुकरत पयपान है ।
नन्द सो कहन नन्द रानी हो महर ! सत,
चद की सी कलनि बढत मेरे जान है ।

आइ देख आनन्द सो प्यारे कान्ह आनन मे,
आन दिन आन घरी आन छबि आन है ॥
दैहो दधि मधुर धरनि धरयो छोरि खै है,
काम से निकसि धौरी धेनु धाइ खोलि है।
धौरि ल्गेटि ऐ है लपटै है लटकत ऐ है,
सुखद सुनै है बैन बतिया अमोलि है ॥
आलम सुकवि मेरे लालन चलन सीखै,
बलन की बाह ब्रज गलिनि मे डोलि है,
सुदिन मुदिन ता दिन गिनैगी माई,
जा दिन कन्हैया मो सो मैया कहि बोलि है।

यमुना निकुंज वर्णन

अरबिद पुज गुज डोर भौर ही ब्रती,
हलोर ओर थोर ज्यो निसा चलत चदनी।
निकुज फूल मौलि बेलि छत्र छाह से धरे,
तटी कलोल नोन पुज सोक सक ददनी ॥
आलम कबित्त चित्र रास के विलासते,
प्रकास बदना करी बिलोक बिस्व वदनी।
समीर मद मद केलि कंद दोष दद यो,
आनद नन्द नन्दक बिराजे हस नदनी ॥

लता प्रमून डोल बोल कोकिला अलाप के कि
बोल कोक कठ त्यो प्रचड भृगगुज की।
समीर बास रास रग रास के बिलास बास,
पास हस नंदिनी हिलोर केलिपज की ॥

आलम रसाल बन गान ताल काल सो,
बिहग बिय बेगि चालि चित्त लाज लुज की ॥
सदा बसंत हतसोक ओक देवलोक ते,
बिलोकि रीझि रही पाति भाति सो निकुज की ॥

शेख़

ईशस्तुति

जथा गुन नाम स्याम तथा न सकति मोहि,
सुमिरि तथापि कछु कृष्ण कथा कहिए।
गोकुल की गोपी कि वे गाइ कि वे ग्वारी की वे,
बन की गुलीला यहै चरचारि बहिए ।।
कुजन के कीट वैजु जमुना के भीट तिनै,
पूजिये कपिल ह्वै कबिलास लहिए।
सेख इस रोष रुख दोषनि को मोष है,
जो एकौ घरी जनम मे घोप माझ रहिए ।।

मिटि गये मौन पौन साधन की सुधि गई,
भूली जोग जुगति बिसारच्यो तप बन को।
सेख प्यारे मनको उजारो भयो प्रेम नेम,
तिमिर अज्ञान गुन नास्यो बालपन को ।।
चरन कमल ही की लोचन मे लोच धरी,
रोचन ह्वै राच्यो सोच मिटच्यो धाम-धन को।
सोक लेस नेक हू कलेस को न लेस रह्यो,
सुमिरि श्री गोकलेस गो कलेस मन को ।।

सीता सत रखवारे तारा हू के गुन तारे,
तेरे हित गौतम को तिरियाऊ तरी है।
हौ हू दीनानाथ हौ अनाथ पति साथ बिनु,
सुनत अनाथिनि के नाथ सुधिकरी है ।।

डोले सुर आसन दुसासन की ओर देखि,
अचल के ऐंचन उघारी और धरी है।
एक ते अनेक अग धाई सेन सारी सग,
तरल तरग भरी गग सी ह्वै ढरी है॥

गंगा वर्णन

नीके न्हाइ धोइ धुरि पैठो नेकु बैठो आनि,
धुरी जटि गई धूरिजटी लौ भवन मे।
पैन्हि पैठ्यो अम्बर सु निकस्यो दिगबर है,
दृग देखौ भाल मे अचभो लाग्यो मन मे॥
जैसो हर हिमकर धरे है गरे गरल,
भारी घर डर वरु छाड्यो एक छन मे।
देखे दुति ना परत पाप रेते पा परत
साप रेगे सुरसरि सांप रेग तन मे॥

ताज

कृष्ण-प्रेम

छैल जो छबीला सब रग मे रगीला,
बडा चित्त का अडीला कहू देवतो से न्यारा है ।
माल गले सोहै नाक मोती सेत सो है कान,
कुडल मन मोहै लाल मुकुट सिर धारा है ।।
दुष्ट जन मारे सत जन रखवारे ताज,
चित हित वारे प्रेम प्रीति नरवारा है ।
नद जू का प्यारा जिन कस को पछारा,
वह वृदावनवारा कृष्ण साहेब हमारा है ।।

ध्रुव से प्रह्लाद गज ग्राह से अहिल्या देख,
सेवरी और गीध औ बिभीषन जिन तारे है ।
पापी अजामिल सूर तुलसी रैदास कहूं,
नानक मलूक ताज हरि ही ने प्यारे है ।।
धनी नामदेव दादू सदना कसाई जानि,
गनिका कबीर मीरा सेन उर धारे है ।
जगत को जीवन जहान बीच नाम सुन्यो
राधा के बल्लभ कृष्ण वल्लभ हमारे है ।।

काहू को भरोसो बेद चारहू जो पढै होत,
काहू को भरोसो गगा न्हाए सहस्त्रधार को ।
काहू को भरोसो सब देवन को पूजे ताज,
काहू को भरोसो विधि शकर उदार को ।।

काहू को भरोसो मनि पाये मिले पारस को,
काहू को भरोसो सूरबीरन के लार को।
तारन तरन कृष्ण सुने जो जहान बीच,
मो को तो भरोसो एक नन्द के कुमार को ॥

काहू को भरोसो बद्रीनाथ जाय पाव परे,
काहू को भरोसो जगन्नाथ जू के भात को।
काहू को भरोसो काशी गया में ही पिड भरै,
काहू को भरोसो प्राग देखे वट-पात को ॥
काहू को भरोसो सेतवन्ध जाय पूजा करै,
काहू को भरोसो द्वारावती गये जान को।
काहू को भरोसो "ताज" पुष्कर में दान दिये,
मो को तो भरोसो एक नन्द जू के तात को ॥

यारी साहिब

निर्गुण स्तुति

जोत सरूपी आतमा, घटघट रह्यौ समाय।
परमतत्व मन भावनो, नेक न इतउत जाय ।।
रूप रेख बरनौ कहा, कोटि सूर परगास।
अगम अगोचर रूप है, पावे हरिको दास ।।
नैनन आगे देखिये तेज पुज जगदीस।
बाहर भीतर रमि रह्यो सो धरि राखो सीस ।।
बाजत अनहद बासुरी, तिरबेनी के तीर।
राग छतीसौ ह्वै रहे, गरजत गगन गभीर ।।
आठ पहर निरखत रहो, सनमुख सदा हजूर।
कह यारी घर ही मिलै काहे जाते दूर ।।
धरति अकास के बाहर "यारी" पिय दीदार।
सेत छत्र तह जगमगै, सेत फटिक उजियार ।।
तारनहार समर्थ है, और न दूजा कोय।
कह "यारी" सतगुरु मिलै, अचल अमर तौ होय ।।

झूलना

गुरु के चरन की रज लै के, दौड नैन के बीच अजन दिया,
तिमिर मेटि उजियार हुआ, निरकार पिया को देख लिया ।।
कोटि सुरज तह छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाइ पिया।
सतगुरु ने जो करी कृपा, मरि के यारी जुग जुग जिया ।।
दोउ मूदि के नैन अदर देखा, नहि चाद सूरज दिन राति है रे,
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सो सबै सिफाति है रे ।।

गोत मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहि सग साथि है रे,
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकूल मौत की जाति है रे ॥

उपदेश

गहने के गढे ते कही सोनो भी जातु है।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है।
भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै।
सोनो तो अचल अत गहनो को मीच है।
सोन को तो जानि लीजै गहनो बरबाद की जै।
यारी एक सोना ता मे ऊच कवन नीच है॥

कवित्त

आधरे को हाथी हरि हाथ जाको जैसे आयो।
बूझो जिन जैसो तिन तैसोई बताया है॥
टका टोरी दिन रैन हिये हू के फूटे नैन।
आधरे को आरसी मे कहा दरसायो है॥
मूल की खबरि नाहि जा सो यह भयो मुलुक।
वा को बिसारि भोदू डोरे अरुझायो है॥
आपनो सरूप रूप आपु माहि देखै नाहि।
कहै यारी आधरे ने हाथी कैसो पायो है॥

नज़ीर

कृष्ण की बाल लीला

यारो सुनो यह ऊधो कन्हैया का बालपन।
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन॥
मोहनस्वरूप कृत्य कन्ैया का बालपन।
बन बन के ग्वाल गऊ चरैया का बालपन॥
ऐसा था बासुर्ी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

जाहिर मे गोकल नन्द यशोदा के आप थे
वरना वह आपी माई थे औ आप बाप थे।
परदा मै बाल.न के यह उनके मिलाप थे।
ज्योतिस्वरूप कहते जिमे मो वह आप थे॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

होता है यो तो बालपन हर तिफल का भला।
पर उनके बालपन मे तो कुछ औरी भेद था॥
इस भेद की भला जी किसी को खबर है क्या।
क्या जाने अपने खेलने आये थे क्या कला॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

वालक हो विरजराज जो दुनिया मे आ गये।
लीला के लाख रग तमाशे दिखा गए॥

इस बालपन के रूप मे कितनो को भा गए।
इक यह भी लहर थी कि जहा को जना गए ।।
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

परदा न बालपन का वह करते अगर जरा।
क्या ताब थी जो कोई नजर भर के देखता।
झाड और पहाड़ देते सभी अपना सिर झुका।
पर कौन जानता था जो कुछ उनका भेद था ।।
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

मोहन मदन गोपाल करै व्यसन मन हरन।
बलिहारी उनके नाम पर तेरा यह तन बदन ।।
गिरिधारी नदलाल हरीनाथ गोवरधन।
लाखो किये बनाव हजारो किये जतन ।।
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

अब घुटनियो का उनके मै चलना क्या करू।
या मीठी बाते मुह से निकलना बयां करू ।।
या बालको मे इस तरह पलना बया करू।
या गोदियो मे उनका मचलना बया करू।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

पाटी पकड़ के चलने लगे जब मदन गोपाल।
धरती तमाम हो गई एक आन मे निहाल॥
वासुकि चरन छुवन को चले छोड कर पताल।
आकास पर भी धूम मची देख उनकी चाल॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

जब पाओ पै चलने लगे बिहारी नवलकिशोर।
माखन उचक्के ठहरे मलाई दधी के चोर॥
मुह हाथ दूध से भरे कपडे भी सराबोर।
डाला तमाम बिरज की गलियो मे अपना शोर॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

करने लगे यह धूम जो गिरिधारी नन्दलाला।
इक आप और दूसरे साथ उनके ग्वालबाला॥
माखन दधी चुराने लगे घर से जा बजा।
जिस घर को खाली देखा उसी घर मे जा छिपा॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

कोठी मे होवे फिर तो उसीको ढढोरना।
मटका हो तो उसीमे भी जा मुख को मोरना॥
ऊचा हो तो भी कधे पै चढ कै न छोडना।
पहुचा न हाथ तो उसे मुरली से फोडना॥

ऐसा था बांसुरी के वजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन।।

गर चोरी करते आगई ग्वालन कोई वहा।
और उसने आ पकड़ लिया तो उससे बोले वा।।
मै तो तेरे दधी की उड़ाता था मक्खिया।
खाता नही मै उसको निकाले था चीटिया।।
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन।।

इक रोज मुह मे कान्ह ने माखन छिपा लिया।
पूछा जसोदा ने तो वही मुह बना दिया।।
मुह खोल तीन लोक का आलम दिखा दिया।
इक आन मे दिखा दिया और फिर भुला दिया।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन।।

सब मिल के यारो कृष्ण मुरारी की बोलो जय।
गोबिद [illegible] कुजबिहारी की बोलो जय।।
दधि चोर गोपीनाथ बिहारी की बोलो जय।
तुम भी नजीर कृष्णबिहारी की बोलो जय।।
ऐसा था वासुरी के वजैया का वालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का वालपन।।

अली मुहम्मद खां "प्रीतम"

खटमलबाईसी

जगत के कारन, करन चारौ वेदन के,
कमल मे बसे वे सुजान ज्ञान धरिकै ।
पोषन अवनि, दुख सोषन तिलोकन के,
समुद मे जाय सोए सेस सेज करिकै,
मदन जरायो जो, सहारै दृष्टि ही मे सृष्टि,
बसे है पहार वेऊ भाजि हरबरिकै ।
विधि हरिहर और इनते न कोऊ,
तेऊ खाट पै न सोवै खटमलन को डरि कै ।।

गढ जिन ढाए बडे रण बिडराए दस,
दिसन को धारा बस कीनै निज बर तै ।
भट जिन मारे देव छिन मे पछारे काज—
कीने मार मारे सब आपने ही कर तै ।।
काहू की न सके चित बीच काहू मन करि,
'प्रीतम' सुजान दबे नाहि काहू अरि तै ।
नीद भरि सोवत न ऐसे ऐसे बली निसि,
चौकि चौकि उठे खटमलन के डरि तै ।।

गिरि ते गिरिन दावानल की दहन काटे—
नाग की डसनि भलो बूड जैबो जल को ।
गोली को जलन तरवार को लगन बहा,
बान घाव कटा तोप गोला हूँ है सल को ।।

जहर लहर केतो अहर तहर करै ,
बीन की तरन दुख मान एक पल को ।
कोऊ ऐसे नाहि जासो ऐसे दुख होत जात ,
सब ते बुरी है एक खाट खटमल को ॥
बाघन पै गयो , देखि सबनन मे रहे छपि ,
सापन पै गयो, ते पताल ठौर पाई है ।
गजन पै गयो, धूल डारत हैं सीस पर ,
बैदन पै गयो काहू दारू ना बताई है ॥
जब हटराय हम हरि के निकट गये ;
हरि मोसो कहि तेरी मति भूल छाई है ।
कोऊ ना उपाय, भटकन जनि डोलै, सुनै ,
खाट के नगर खटमल की दुहाई है ॥

दीन दरवेश

बदा जान मै करौ, करनहार करतार ।
तेरा किया न होयगा, होगा होवनहार ॥
होगा होवनहार बोझ नर योहि उठावे ।
ज्यो विधि लिख्यो ललाट प्रतक्ष फल तैसा पावे ॥
कहै 'दीन दरवेश' हुकम से पाल हलन्दा ।
करनहार करतार क्या तू करिहै ऐ बन्दा ॥

माया माया करत है, खरच्या खाया नाहि ।
सो नर ऐसे जाहिगे, क्यो बादल की छाहि ॥
ज्यो बादल की छाहि जायगा आया ऐसा ।
जाना नहि जगदीश प्रीति कर जोडा पैसा ॥
कहै 'दीन दरवेश' नाहि बोइ अम्मर काया ।
खरच्या खाया नाहि करत नर माया माया ॥

गड़े नगारे कूच के, छिन भर छाना नाहि ।
को है आज को काल को पाव पलक के माहि ॥
पाव पलक के माहि समय ले मनवा मेरा ।
धरा रहे धनमाल होयगा जगल डेरा ॥
कहै 'दीन दरवेश' गर्व मत करे गुमारे ।
छिन भर रहना नाहि कूच के गडे नगारे ॥

हिदू कहै सो हम बडे, मुसलमान कहै हम्म ।
एक मुग की दो फाड़ है, कुण जादा कुण कम्म ॥

कुण जादा कुण कम्म कबी करना नही कजिया।
एक भगत हो राम दुजो रहमान से रजिया ।।
कहै 'दीन दरवेश' भाव क्या भावइयो का।
सब का साहब एक एक ही मुसलिम हिंदू ।।

आधुनिक काल

बहुमुखी अनेक शाखाएँ

सैयद अमीर अली मीर

उलाहनापचक

हिमगिरि

गर कही जीने के काबिल हम रहे,
तो ढहाकर शृग हिमगिरि दे दबा।
शत्रु अथवा जो हमारे हों यहा,
पेट मे अपने उन्हे तू ले दबा॥

गङ्गा

तारीफ सुनते है तुम्हारी हम बहुत,
सारथक करती नही क्यो नाम को।
मात गगे पाप अरि को दो बहा,
शुद्ध कर दो हिद के हृद्धाम को॥

हिंद सागर

हिद सागर तुम हमारे गार्ड थे,
हाय! की तुमने मगर कैसी दगा।
जब घुसा था शत्रु छाती चीर कर,
टाग धर पाताल को देते भगा॥

भारत भूमि

वीरप्रसवा तू भरत की भूमि है,
नाम को कैसा दबा तू ने दिया?
सुत दुखी पर है विरोधी सब सुखी,
देख कर खुद खोल आंखे क्या दिया?

विश्वरक्षक

विश्वरक्षक क्या नही हम विश्व मे ।
क्यो नही देते हमे हो तुम स्वराज ?
गैर है आजाद घर मे हम गुलाम,
क्या यही इसाफ है बन्दे नवाज ।

दशहरा

आ गया प्यारा दशहरा छा गया उत्साह बल
मातृपूजा शक्तिपूजा वीरपूजा है बिमल ॥
हिद मे वह हिदुओ का विजय उत्सव है लला ।
शरद की इस सुऋतु मे है खड्ग पूजा धाम धाम ॥
यह दशहरा क्षत्रियो का प्राण जीवन पर्व है ।
हिद के इतिहास मे इस पर्व का अति गर्व है ।
वीर पुरुषो को यही सजीवनी का काम दे ।
जीत दे फिर कीर्ति दे फिर मान दे धनधाम दे ।
थी विजय दशमी यही जब राम ने दल साज कर
गिरि प्रवर्षण से चढाई की थी लकाराज पर ॥
मार रावण को वहा उद्धार सीता का किया ।
और लका का विभी षण को तिलक माथे किया ॥
उस समय से इस दशहरे का बडा सम्मान है ।
यान गुण का पद प्रवर्तक क्षत्रियों का प्राण है ।
आज करते है विजय की कामना सब वीरवर ।
जाचते है दृष्टि कर गज अश्व दल हथियार पर
श्रेय विजया से भरे इतिहास के बहु पत्र है ।
आज भी प्रतिबिब उसका देखते हम अन्य है ।

जो सबक लेना हमे उससे उचित लेते नही ।
स्वार्थ पशु बलि त्याग की तलवार से देते नही ॥
इद्रियो की वासना ही है असुर शंका नही ।
ज्ञानशर से जीतते है लोम की लका नही ॥
हंत जो कुविचार रावण है उसे तजते नही ।
क्या कहे सुविचार श्रीवर राम को भजते नही ।
नाशकर कुविचार का सद्‌बुद्धि सीता लाइये ।
नृप विभीषण की तरह सतोष को अपनाइये ॥
शात हो प्यारी अवध फिर राज्य उसका कीजिये ।
'मीर' विजया की विजय का इस तरह यश लीजिये ॥

अमीरअली

अन्योक्ति-सुमन

मैना तू बनवासिनी परी पींजरे आन ।
जान दैवगति ताहि मे रहे शान्त सुख मान ।।
रहे शान्त सुख मानि बान कोमल ते अपनी ।
सब पक्षिन सरदार तोहि, कविकोबिद वरनी ।।
कहै "मीर" कवि नित्य बोलती मधुरै बैना ।
तो भी तुझ को धन्य बनी तू अजहूँ मैना ।।

तोता तू पकडा गया जब था निपट नदान ।
बडा हुआ कुछ पढ लिया तौ भी रहा अजान ।।
तौ भी रहा अजान ज्ञान का मर्म नही पाया ।
जीवन पर के हाथ सौप निज घर बिसराया ।।
कहै 'मीर' समुझाय हाय तू अब लौ सोता ।
चेता जो नहि आप किया क्या पढ के तोता ।।

बगला बैठा ध्यान मे प्रात जल के तीर ।
मानो तपसी तप करै मल कर भस्म शरीर ।।
मल कर भस्म शरीर तीर जब देखो मछली ।
कहै मीर ग्रसि चोच समूची फौरन निगली ।।
फिर भी आब शरण बैर जो तज के अगला ।
उसके भी तू प्राण हरे रे छी ! छी! बगला ।।

कैदी होने के प्रथम था अलि मीर स्वतन्त्र ।
उसे पवन ने छल लिया कह के मोहन मन्त्र ।।

कह के मोहन मन्त्र तन्त्र सा फिर कुछ करके ।
उसे गई ले खीच पास मे गहरे सर के ॥
पड़ा प्रेम मे अचल वहा लकड़ी का भेदी ।
था जो कोमल कमल बनाया उसने कैदी ॥

जाने कीन्हों शमन है सतमतगगनमान ।
हाय ! दैववश सिह सो परचौ पीजरे आन ॥
परचौ पीजरे आन स्वान के गन ढिग भूकैं ।
बिहँसै ससा सियार कान पै आके कूकैं ॥
मीर बात है सत्य लोक मे कहिगे स्याने ।
कापै कैसो समय कबै परिहै को जाने ॥

कोयल तू मन मोह के गई कौन से देस ।
तो अभाव मे काग मुख लखनी परो भदेस ॥
लखनी परो भदेस बेस तो ही सो कारो ।
पै बोलत है बोल महा कर्कस कटु न्यारो ॥
कहै 'मीर' हे दैव काग को दूर करो दल ।
लाओ फर बसन्त मनोहर बोले कोयल ॥

———

मौलवी लतीफ हुसेन नटवर

स्मृति या विस्मृति

सदिया बीती, किन्तु न बतिया उन दिन रनिया की भूली ।
जिनमे प्रकृति, प्रिया रसिमानी रगरलियो पर थी फूली ।।

कली कली विकसित हो, जिस पर करती थी यौवन का दान ।
उस नटखटी माधुरी मुरली पर, उत्सुक है अब भी कान ।।

सखी सखाओ की वह क्रीड़ा, गैया, मैया का आव्हान ।
करते है हियपर पर मेरे, आख मिचौनी के अनुमान ।।

व्रज वनिता की विरह व्यथा से, गूज रहा अब भी आकाश ।
किस छलिया की मधुर मूर्ति का, आता है अभिनव आभास ।।

जड़ चेतन वृक्षो पत्तों मे, रज-रज मे इक गुप्त प्रकाश ।
प्रगटित करता है यह किसका, छिपा हुआ उज्ज्वल इतिहास ।।

री वृन्दा ! तू सत्य बतादे, क्या है– यह सब माया है ?
या स्मृति है ? अथवा वह कवि की कल्पित विस्मृत छाया है ?

दाराब खां अभिलाषी

फूलों का हार

निशे मधुमय है तेरा प्यार ॥
सहन नही कर सकता दिन जब पीडाओ का मारा,
स्वर्ण वर्ण से हार लिखाकर कहता बारम्बार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

उज्ज्वल खिलता हुआ चन्द्र है तेरा ही मुखचन्द्र ।
और तारिकाओ से अकित है अचल सुकुमार ॥
लेते हैं गोदी मे तेरी जीव जन्तु विश्राम,
इस से बढ कर देवि और क्या किसे चाहिये प्यार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

रगती है पाटल प्रसून से नित ऊषा के गाल ।
तेरी कृपा कोक से बनता है मादक ससार ॥
भग्न हृदय के लिये एक है स्वप्नो की मधु माल ॥
मिलती तू ! तममे प्रियतम से और लुटाती प्यार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

पल पल मे रंगती है जग की आशाओं का रूप ।
उसी रूप पर लाती है तू अमल ओसका हार ॥
मै भी लाया हूं पहिनाने मधु फूलो का हार ।
हसी न रोक सकी है कलियां तेरी ओर निहार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

संध्या का आगमन

प्राची दिशि से दिनकर का, इकले रथ पर चढ आना ।
धीरे-धीरे पश्चिम मे, उस लाली मे लुट जाना ।।
सध्या की स्वर्ण किरण का, फिर बदला रूप निराला ।
छबि सिमिट गई सूरज की, सरकाया घूघट काला ।।

——

सैयद कासिम अली

पथिक से

अरे पथिक ! क्यो पूछ रहा है मेरी करुण कहानी ?
क्यो मैंने निर्जन कानन मे, है रहने की ठानी ।।
ग्रीष्म, शीत, वर्षा के दिन औ यह अधियारी राते ।
आधी लपटे क्यो सहता हू, सारे जग की घाते ।।

निर्जन बन मे घर क्यो है मेरा गम खा भूख भगाता ।
क्यो नयनो के सारे जल को पीकर प्यास बुझाता ।।
पूछोगे ही पथिक हमारी सारी करुण कथाए ।
सही आज तक क्यो है मैंने भारी विरह व्यथाएं ।।

अरे इसी निर्जन कानन मे वह मन मोहन मेरा ।
छिपा हुआ है खोज थका मै हाय जिसे बहुतेरा ।।
खोज रहा हू उसे आज भी करता हुआ तपस्या ।
देख रहा हू कब सुलझेगी मेरी भाग्य समस्या ।।

टिप्पणी

जगनिक

पृष्ठ १

हरकारा—चिट्ठी ले जाने वाला

हकीकति—वास्तविक बात

रारि—राड, झगड़ा

धावन—हरकारा, दूत

अरगाय—चुप्पी के साथ अलग हो कर

सम्हा—संमुख, सामने

साइति—साइत, शुभ घड़ी

साढे साती—शनिग्रह की साढे सात वर्ष साढे सात मास या साढे सात दिन आदि की दशा

पृष्ठ २

सिगरे—सकल सब

पृष्ठ ३

भहराय—डोलकर

खांडा—तलवार

पृष्ठ ४

गुर्ज—गदा, सोटा

बराय—बचकर

खाले—नाले

पृष्ठ ५

साँगि—एक प्रकार की बरछी

सिरोही—तलवार

औझड़—लगातार

चंद बरदाई

पृष्ठ ६

मम—मास

अरधग-अर्धांग

करवत—आरा

ध्रम—धर्म

लषिय—लक्षित

पृष्ठ ७

सुर्षडिय—सुखंडिय, खंडित कर के

जुज्झ—युद्ध

नद्द—नर्द, बजे

निसान—नगाड़ा, धौंसा

अमागह—अमार्ग में

लष्ष—लक्ख, लाख

मद्द—मद

भद्द—भाद्र मास

रुद्द—रुद्र

पष्षर—पाखर, लोहे की वह झूल जो लड़ाई में हाथी या घोड़े पर डाली जाती है

सनाह—कवच

मइमान—मदमत्त

मीर—प्रधान, सेनापति

ध्रंम—धर्म
साइय—स्वामी, ईश्वर
वषत्त—वख्त, समय
सबद्दय—शब्द कर के
पषि—पक्षी
ब्रन—वर्ण
क्रन—कर्ण

पृष्ठ ८

सुसद्धिय—अच्छी प्रकार साफ कर
सुअ—सुत
सुसथ—सुस्थ, स्वस्थ

तुलसीदास

पृष्ठ ११

भृगुपतगा—भृगुवशरूपी कमल के सूर्य ।
बाज-लुकाने—जैसे बाज की झपट देख कर बटेर छिपे हो ।
रिसराते—क्रोध से रक्त (लाल)
जेहि-खुटानी—जिस की ओर वे सहज स्वभाव से हित समझ कर भी देख लेते है वह समझता है कि मानो मेरी आयु पूरी हो गई है ।
ढोटा—पुत्र
मारमदमोचन—कामदेव के मद को नष्ट करने वाला ।
अनत—अन्यत्र

पृष्ठ १८

बिलगाउ—अलग हो जाय
त्रिपुरारि—शिव जी
कोही—क्रोधी

पृष्ठ १३

महिदेव—ब्राह्मण
गरभन-घोर—मेरा परशु गर्भ के बालको को भी मार डालने वाला बडा भयकर है ।
इहा-नाही—यहा कोई कुम्हडे (कूष्माण्डनिहर) की बतिया। नही है जो तर्जनी अगुली देख कर मर जाती है । नन्हे-निहर को अंगुली दिखाते ही वह मर जाता है ।
पा—चरण
भानु-कलंकू—सूर्यवशरूपी पूर्ण चद्रमा का कलक है ।
खोरि—दोष
हटकहु—मना कर दो
तुम्ह बोलावा—आप तो मानों काल को साथ ही लेते आए है और उसे बारंबार मेरे लिए बुला रहे है ।

पृष्ठ १४

मुनि-सूझ—परशुराम को हरी हर सूझती है । अथवा यहा हरि विष्णु आई अडे है । सामान्य

शत्रु नही स्वय विष्णु है। अथवा हरि अरई हरा ही हरा दीखता है। नही जानते कि अब सूखने का मौका आ गया। अथवा स्वय हरि शत्रु के रूप मे दीख पडते है।

अजगव--महादेव का धनुष

अब-खोली—अब किसी व्यवहारी (साहूकार) को बुला लाइए।

सैन—इशारा

लखन उतर भानु—लक्ष्मण की उत्तर रूपी आहुति पाकर परशुराम की क्रोधरूपी अग्नि को बढते देख रघुवश के सूर्य रामचद्र जल के समान ठडे बन कर बोले।

अयाना—अज्ञान

अचगरि—नटखटी

समसील—समस्वभाव

पृष्ठ १५

जुडाने—ठडे हुए।

काल-नही—यह दुधमुहाँ नही, इसके मुह मे कालकूट विष है।

बैठिये-पिराने—खडे खडे पाव दुखने लगे होगे।

मष्टकरहु—बस चुप करो

नयन तरेरे—आखों से डाटा

अनैसे—टेटेय

पृष्ठ १६

बहइ न हाथू—हाथ नही चलता

गर्भ-घोर—इस कुठार की भयंकर गति को सुनते ही राजाओ की स्त्रियो के गर्भ गिर जाते है।

बाइ-कृपा—वाह री कृपा। जैसी कृपा वैसी ही आपकी मूर्ति है।

करहु किन—क्यो नही करते।

गुनहु-लषनकर—अपराध तो लक्ष्मण का और क्रोध हम पर। क्या कही सीधेपने से भी बड़ा कोई दोष है।

पृष्ठ १७

सरवर—बराबरी

देव एक तुम्हारे—देव ! हमारा धनुष ही एक गुण है पर आपके परम पवित्र नौ गुण है। (नौ गुण शम, दम, तप, शौच, सतोष ऋजुता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता), अथवा हमे तो एक चाप वाले धनुष मात्र का बल है, पर आपको ९ तार वाले यज्ञोपवीत का बल है। अथवा हमारा धनुष तो एक गुण है (शत्रुवध) आपका यज्ञोपवीत नौ गुण वाला है। नौ का गुण ऐसा है कि १ से

गुणे तो ९, २ मे गुणे तो १८। ९ के गुण मे ९ ही बने रहते है। साराश यह है कि आप कुछ भी करे, ब्रह्म तेज के आगे सब ज्यो का त्यो है।

चतुरंग—चतुरगिणी, रथ, हाथी, घोड़े और प्यादे।

समरजग्य—युद्ध रूपी यज्ञ।

विप्र के भोरे—ब्राह्मण के भरोसे

अहमिति—मानो सारे जगत को जीत लिया, ऐसा अहकार करके खड़ा है।

प्रचारई—नौते।

सकाना—शका करना (डरना)

विप्रवस—ब्राह्मणवंश का यह स्वभाव है कि जो आप से डरे, वह और सब जगह से निडर हो जाता है।

पृष्ठ १८

रघुवस-भानू—रघुवशरूपी कमल-वन के सूर्य।

गहन कृसानू—गहरे राक्षस कुल को जलाने के लिए अग्निस्वरूप।

वचन-नागर—वचनों की रचना मे अति निपुण आपकी जय हो।

महेस'हंसा—महादेव के मनरूपी मानसरोवर के हंस

पृष्ठ १९

सुनी'राती—देवताओं की प्रार्थना सुनकर सरस्वती खड़े खड़े पछताने लगी कि हाय! मै कमल के वन के लिए पाले की रात बनती हू।

खारी—बदनामी

विबुध-पोची—देवो की बुद्धि पोच है।

गई फेरी—सरस्वती उसकी बुद्धि को फेर गई।

देखि-भाति—जिस प्रकार कुटिल भीलनी शहद के छत्ते को लगा देख कर मौका ताकती है कि इसको किस प्रकार लू।

उसासू—लम्बे सास

गालु बड़ तोरे—तेरे बड़े गाल है, तू बड़ी बढकर बोला करती है।

गालु करब—मुहजोरी करू

पृष्ठ २०

भयउ-दाहिन—कौसल्या के लिये विधाता बहुत दाहिना (अनु-कूल) है।

नीद-तुराई—तुम्हे नीद और तोशक तकिये से सजी सेज प्यारी लगती है।

रहु अरगानी—चुप रहो

रउरेहि—आपको

पृष्ठ २१

रहसी-काबी—दासी मथरा अपना दॉव लगा समझ कर प्रसन्न हो गई।

सजि-बोली—बहुत प्रकार की बात बना (छील छाल) किसी तरह अपने ऊपर भरोसा जमवा कर मथरा आगे ऐसे वचन बोली कि मानो उन वचनो मे उस समय अयोध्या के लिये साढसाती (साढे सात वर्ष की शनि की दशा) आ गई है।

भानु-सुभाऊ—जैसे सूर्य कमल के समूह को पालने वाला है, पर बिना पानी वही सूर्य उन्ही कमलों को जला डालता है वैसे ही कोसल्या तुम्हारी जड़ को उखाडना चाहती है। उपाय रूपी श्रेष्ठ जल से इसे रोको।

सवति—सौते

मोह सुठि नीका—मुझे और भी अच्छी लगती है।

सुठि—सुष्ठु

पृष्ठ २२

कुबरी चापी—तब कूबरी मथरा ने अपनी जीभ दातों के नीचे दबा ली।

जिमि-कुकाठू—जिस प्रकार गठीला टेढा लक्कड़ नमता नही इसी तरह कैकेयी अपने हठ से नही हटी।

कुबरी-टेई—कबरी ने कैकेयी को कुबलि का पशु बना कर अपनी कपट रूपी छुरी को हृदयरूपी पत्थर पर टेया (शान दी)।

पृष्ठ २३

माहुर—विष

याती—धरोहर

चषपूतरी—आख की पुतली

पृष्ठ २४

दलकि-तोरु—यह सुनते ही उसका कठोर हृदय दहल उठा मानो किसी पके हुए बालतोड को ठेस पहुची हो।

ऐसउ-गोई—ऐसी पीडा को भी कैकेयी ने हस कर छिपाया

पृष्ठ २६

आगे-बनाई—राजा ने अपने समक्ष क्रोध से जलती हुई कैकेयी को देखा। मानो यह क्रोधरूपी तलवार को म्यान से बाहर निकाल कर खडी है, जिस तलवार पर कुबुद्धिरूपी मूठ है और निष्ठुरता धार है और कूबरी मथरा मानो उसकी

धार धरी गई है।

पृष्ठ २७

छूछे—निष्फल

पाप जोई—वह नदी पापरूपी पहाडी से पैदा हुई है, उसमे क्रोधरूपी जल भरा है, वह देखी नही जाती।

दोउ-प्रचार—दोनो वर इस नदी के किनारे है, कठिन हठ ही इसकी धारा है, मथरा के वचनो का प्रचार ही भवर है।

हसब ठठाई—खिलखिलाकर हसना और गाल फुलाना दोनों काम एक साथ कैसे हो सकते है।

पृष्ठ २८

होइ-ताई—शूरता भी चाहते हो और कुशलक्षेम भी चाहते हो।

गोइ—छिपा कर

मारसि-जामी—तू बाज के लिये गौ को मारना चाहती है। अथवा सिह के बच्चे (नहारुह) के लिये गौ को मारना चाहती है।

भिनुसारा—प्रातःकाल

पृष्ठ २६

सतिभाऊ—सद्भाव

पृष्ठ ३३

खभारू—चिता

प्रतीत—भरोसा

कोटि-कुटिलाई—करोडो प्रकार की कुटिलताओ की कल्पना करके अथवा करोड़ो प्रकार की कुटिलताए करके (कल्प—करना)

गजाली—हाथियो की पक्ति

ससि-समान—चद्र ने देवो के गुरु बृहस्पति की स्त्री तारा के साथ प्रेम किया था। नहुष ने अपनी पालकी ब्राह्मणो से उठवाई थी। राजा बेन जन्म से ही पतित तथा अभिमानी था। पिता के दुखी होकर वन चले जाने पर, गद्दी पा उसने प्रजा पर अत्याचार किये। अत मे ब्राह्मणों ने उसे शाप देकर भस्म कर दिया।

पृष्ठ ३४

रिपु-काऊ—कभी किसी को शत्रु और ऋण नाम के लिए भी शेष नही रखने चाहिए।

पृष्ठ ३५

जौ-सेई—जिन्होंने साधुसभा का सेवन नही किया वे राजमद का आचमन लेते ही मतवाले हो जाते है।

तिमिर—चाहे अधेरा तरण (मध्यान्ह के) सूर्य को निगल

जाय, आकाश मार्ग बादलो मे मिल जाय, अगस्त्य चुल्लू भर पानी मे डूब जाय और पृथ्वी अपनी स्वाभाविक क्षमा को छोड दे ।

मगुनषीर—सद्‌गुणरूपी दूध और अवगुणरूपी जल को मिला कर ब्रह्मा सृष्टि की रचना करता है ।

अंगद-रावण-संवाद

बिरचि—ब्रह्मा

पृष्ठ ३६

किवा—अथवा

जगदबा—जगत की माता

दसन—दशन, दात

आरत—आर्त, दुखी

कपिपोत—बदर का बच्चा

अनल—अग्नि, देखो अनिल

बोरा—डुबाया

बिसरना—फटना।

त्रिय—स्त्री

कल—तट

पृष्ठ ३७

समरारूढ़ा—लड़ाई के लिये चढने वाला (समर+आरूढ)

जारा—जलाया

कीस—बदर

पुर दाहा—नगर का जलाना

धावन—दूत

कोह—क्रोध

पृष्ठ ३८

माखा—क्रोध

हयसाला—घुडसाल

पृष्ठ ३६

सुराई—शूरता

साला—शल्य, बाण

अलीक—सत्य

खर्व—छोटा, तुच्छ

उपल—पत्थर

रूखा—वृक्ष

बयर—वैर

पृष्ठ ४०

चौगान—पोलो का खेल

परजरा—प्रज्वलित हुआ

बसीठ—दूत

पृष्ठ ४१

इद्रजालि—माया दिखाने वाला

बतबढ़ाव—बात बढाना

गजारि—शेर

बरजोरा—जबरदस्ती

मीजत—दबाता है, मसलता है

पृष्ठ ४२

कपिद्र—कपीद्र

पबारे—भेज दिए

लूक—लपट

पृष्ठ ४३

लबारा—गप्पी, लफ्फाडिया

सुरअराती—देवो के शत्रु

उरगारी—गरुड़

परचारे—चैलेंज करने पर

पृष्ठ ४४

निअराना—पास आया हुआ

तुलसी-सतसई

सुरतरु—पारिजात

पृष्ठ ४५

निरबान—निर्वाण, मोक्ष

जोय—स्त्री

गाडर—भेड

पृष्ठ ४६

सासति—घोर कष्ट

वारिधर-धार—बादल का पानी

करिया—मल्लाह

अव्यय—अक्षय

पृष्ठ ४७

सात्त्विक—सत्व गुण (प्रकाश) वाला

राजस—रजोगुण (कर्म) वाला

तामस—तमोगुण (अंधकार) वाला

सोग—शोक

असथूल—अस्थूल

अंब—आम

रज—पृथ्वी

अप—पानी

अनल—अग्नि

अनिल—वायु

नभ—आकाश

अयन—घर, आश्रम (चाल)

अध्यैन—अध्ययन

पृष्ठ ४८

बरनात्मक—वर्णात्मक, अक्षरमय

अकल—कलारहित

बिबुध—बुद्धिमान

मृगजल—मृग तृष्णा

वाजी—घोड़ा

अधवर—आधा रास्ता

तरनिसुता—यमुना

न्यग्रोध—वट

पृष्ठ ४९

उरध...ऊर्ध्व, ऊपर

जातरूप—सोना

रजनीस—चंद्रमा

धरा—पृथ्वी

दुरत—दूर होता है, छिपता है

सीता-रमन—राम

मृनमय—मट्टीका

पृष्ठ ५०

स्वरनकार—सुनार

पृष्ठ ५१

अनुहार—अनुकाम, उसकी इच्छा से

अघ—पाप

निसेनी—पीढी, निश्रेणी

कृसानु—अग्नि

पृष्ठ ५८

मधूकरी—वह भिक्षा, जिसमें केवल पका अन्न लिया जाता है

चारु—सुदर

मोहमहोदधिमीन—मोह रूपी समुद्र की मछली

गोड—एक असभ्य जाति

पलीता—तोप की बत्ती

पहुमीपाल—भूमिपाल

सूरदास

पृष्ठ ५६

पेखत—देखता है, प्रेक्षते

भाल—मस्तक

कुलहि—टोपी, कुल्ला

मघवा—इद्र

चिकुर—केश

बगराइ—फैलाकर

पृष्ठ ६०

कज—कमल

भौम—मगल ग्रह, भूमि-सबधी

विज्जु—विद्युत्

जलपाइ—बोलना

सुवन—सुत

अरबराय—घबडाकर, डोलकर

था—स्थान

महिरि—मालकिन, मुखिया की स्त्री यशोदा

गुहत—गूथते हुए

पृष्ठ ६१

बल की बेनी—बाट वाली चोटी

कजरी—काली गौ

अचवन—आचमन

कच—बाल

टटोवे—टटोलना

हलधर—बलराम

पृष्ठ ६२

अकोरे—गोद, अंक

पृष्ठ ६३

सीके—छीके

ढोटा—लड़का

हाऊ—हव्वा

पृष्ठ ६४

झाऊ—वृक्ष विशेष

व्याल—सर्प

खसाऊ—खसना, रगड़ना

कमठ—कछुआ

शखासुर—नागराज

सुरराऊ—सुरराज

गरबाऊ—अभिमान करना

अगाऊ—अग्रभाग

परग—पइग, पग

परसाऊ—स्पर्श किया

पृष्ठ ६५

क्षार—धूल, राख

डरपाऊ—डरी

निगम—वेद
वज्रघातनि—वज्र की चोट मे
भहराय—जोर से
कादर—कदर्य, डरपोक

पृष्ठ ६६

छगन मगन—काका (छागल—बकरी का बच्चा)
मधुपुरी—मथुरा
कमलनयन—कृष्ण
मथानी—मंथन, रई
बहुरेउ—फिर
हिलराऊ—हिलोरे दू
धर—घरा, पृथिवी
अधर बदन—ओठ और मुह
फेट—कमर बद
कृत—कर्म

पृष्ठ ६७

भौन—भवन
छोह—ममता
विषान—सीग का बाजा
अबेर सबेरो—देर और जल्दी, थोडा बहुत ठहर कर
कलेऊ—कल्यवर्त, प्रातराश
धैया—गौ का दूध

पृष्ठ ६८

अठान—सताना
पहुनईसूतर—मेहमानी की रीति
प्रतिपार—प्रतिपालन, पोषण
अबर—आकाश
वारे—बाल्य, बचपन
टेव—आदत
छलछेव—धोखे की मार

पृष्ठ ६९

कानि—लज्जा, सकोच
पजरे—प्रज्वलित, जला
अधार—आधार
आराधन मौन—मौन साधन (अथवा पौव-पवन प्राणायाम आदि)
पोत—काचकी गुडिया
पोहत—पिरोना

पृष्ठ ७०

स्यदन—रथ
सुरसरिसुवन—गागेय, भीष्म
औसान—होश
भीर—आपत्ति
अवनि—पृथ्वी
स्वेद—पसीना

पृष्ठ ७१

अंबुज—कमल
भटराऊ—भाटो के सरदार
गजयूथ—हाथियो के समूह
शारग—धनुष
निषग—तूणीर
पग—पंगु

पृष्ठ ७२

शिरत्रान—छत्र

पान—पर्ण, पत्ता

हुताशन—अग्नि

दुरि जाई—छिप जाय (दूर)

पृष्ठ ७३

भिलडी—भीलन

अघाये—तुष्ट

चोलना—चोला

रसाल—रसीला, मधुर

पखावज—मृदंग

घट—अन्त.करण

काछि—लाग, धोती का अंतिम छोर

अनत—अन्यत्र

अकृती—दुष्कर्मी

विरद—उपाधि

पृष्ठ ७४

सेंत्यो—बिना मोल

बूडत—डूब

अजामील—अजामिल, यह ब्राह्मण प्रथम अवस्था मे सच्चरित्र था किंतु पीछे से कुसंगति मे दुराचारी हो गया। दासी के पेट से इसके दस पुत्र थे। इनमे से ज्येष्ठ का नाम नारायण था। मरते समय उसने अपने पुत्र नारायण को पुकारा. इसी कारण विष्णु दूत इसे विष्णुलोक मे ले गए।

गारो—गर्व, क्रोध

भुवंग—भुजंग, साप

खर—गधा

अरगजा—सुगंधित द्रव्य विशेष

पाहन—पाषाण

अरसात—अलसात

पृष्ठ ७६

सिरानी—शीर्ण होगई

शारंगपानी—विष्णु, कृष्ण

नरोत्तमदास

पृष्ठ ७७

वैजयंती माला—पचरंगी माला, भगवान का हार

सिगरे—सकल

तिय—स्त्री

कन—कण, दाना

पृष्ठ ७८

कोदौ—अन्नविशेष

सवा—सावक

हठौती—हठ करती

सिसिआतहि—सिसियाते हुए

पठौती—भेजती

कठौती—कनाला, लकडी की परात

ठक—ठोक-पीट, रट

लढा—छकडा

अटा—बुर्ज

छानी—छान, छप्पर
अगत्रई—आगे ही, पहले से
सरसाइये—सरस बनाइये

पृष्ठ ७६

चटसार—पाठशाला, मकतब
झक—रट
छडिया—द्वारपाल, दड हाथ मे लिए हुए
हुलास—उल्लास, उमग
वारवधू—वारागना, वेश्या

पृष्ठ ८०

कीर—शुक
केकी—मोर
पत्ति—पदाती
भौन—भवन
गौन—गमन
पाग—पगड़ी
झगा—चोला
उपानह—जूता
सामा—सामान
खखेट्यो—दबा

पृष्ठ ८१

बिवाई—पैरो का फटना
जोये—देखे
तंदुल—चावल
त्रिय—स्त्री
चापि—रखकर
भीने—मिश्रित
गोपि—छिपाकर

पृष्ठ ८२

धौको—कपा, (जैसे धौकनी की हवा से)
हियरा—हृदय
थरहरै—थरथरावै, कापे
नाकलोक—स्वर्ग
ओक—घर
थोक—समूह, कुल
सुखमा—सुषमा, सौदर्य

पृष्ठ ८४

सकेलि—एकत्रकर
गयद—हाथी
सामुहे—समुख

पृष्ठ ८५

हेम—सुवर्ण
गिलन—निगरण
कथारी—कथा, गुदड़ी
पथरौटा—सिल पत्थर

गुरु नानक

पृष्ठ ८६

दारा—स्त्री
बिरिया—वेला, समय
सिरायो—गवायो

पृष्ठ ६०

बर्त—वृत
मनुवा—मन
प्रब—प्रभु

नियारी—पृथक्
परसैं—छुए
बौरा—बाला, वातूल

पृष्ठ ९१

पत—लाज
मुकुर—दर्पण
छाई—प्रतिबिंब
द्याल—दयालु
रिदे—हृदय मे
सरनाई—शरण मे

पृष्ठ ९२

बैंसदर—वैश्वानर, अग्नि
रैंन—रजनी रात्रि

दादू

पृष्ठ ९३

मिरगला—मृग
अहेडी—अहेरी, शिकारी
मसाण—श्मशान
बिहाइ—विहान हो गया (प्रात·)

पृष्ठ ९४

नेह—स्नेह
सवाहणहार—सभालने वाला
मरजीवा—मरजिया, मरकर जीने वाला
मद्धिभाई—मध्यभाव

पृष्ठ ९५

दिसतरा—दिगतर, दिशातर
अमली—नशा करनेवाला

पृष्ठ ९६

गिलै—हड़पै
परस—स्पर्श
गुडी—गुड्डी, पतग

पृष्ठ ९७

कादर—काहिल, सुस्त

पृष्ठ ९८

इब—अब

मलूकदास

पृष्ठ ९९

महत्तव—महत्त्व
भेव—भेद
ऊपट—कठिन मार्ग

सुंदरदास

पृष्ठ १०१

अहि—सर्प
डरा—डेला, ढेला

पृष्ठ १०२

जुझाऊ—युद्ध मे काम आनेवाल
सहनाई—नफीरी नामक बाजा
परबोधिये—समझाइये
धीजिये—तुष्ट कीजिये

पृष्ठ १०३

अन्यारहि—अधिक
म्हारु—हम
पेड़ो—रास्ता

पृष्ठ १०४

रच—अल्प

दारु—द्रु, लकडी

पृष्ठ १०५

डासन—बिस्तर, बिछावन

गेहरा—गृह

धरणीदास

पृष्ठ १०७

परबल— प्रबल

निरबेरे—निर्वैर

जुग—युग, जुआ

भीखा साहिब

पृष्ठ १०६

अजायब—अजीब

तूर—तुरही, नगाडा

उरध—ऊर्ध्व

पलान्यो—भागी

नौबत—सहनाई, नगाडा

साबिक—पहले का

पलटू साहब

पृष्ठ ११०

कमठ—कछुआ

पृष्ठ १११

दिहा—दहा, जलाया

तारू—तालु

गरीबदास

पृष्ठ ११७

तीन गुन—सत्त्व, रज, तम

सबत्तर—सर्वत्र

इला—नाडी विशेष

पिंगला— ,,

सुखमन—सुषुम्ना नाडी

पेग—झूल

धर्मदास

पृष्ठ ११६

चौरासी लख—चौरासी योनिया

केशवदास

पृष्ठ १२३

रदन—दात

ओप—काति

पृष्ठ १२४

चमू—सैन्य

हय—हाथी,

गय—गज

पयदर—पैदल

सुनिज्जिय—सुनिये

पैंज—प्रतिज्ञा, प्रण

अच्छरिय—अक्षर, नित्य

सगर—सग्राम

पति—पत, लाज

पृष्ठ १२५

सजन—सज्जन

घरनी—गृहिणी

पृष्ठ १२६

दिष्षित—दर्शित

पृष्ठ १२७

तूण—तूणीर

तन त्राण—कवच

अतक—मृत्युदेव

पृष्ठ १२८

शरावलि—बाणो की पक्ति

सिकता—रेत

खते—क्षत

नैकृत्यन—निशाचर

पुरदर—विष्णु, पुरको भेदने वाला

अक्षरिपु—सर्पारि, विष्णु

दुखदावन—दु.खदायक

वर्म—कवच

मर्म—नरम स्थल

पट्टशि—शिला

परिध—भाला, बरछी

तोमर—असचविशेष

कुत—बरछी

पृष्ठ १२९

द्वैभुज—द्विभुज (दो भुजाओ वाला) सबन्धी

निकदन—नाशक

वपु—शरीर

बिहारी

पृष्ठ १३१

नागरि—नागरिक स्त्री, सुसभ्य

झाईं—छाया

छाके—छके हुए

लाव—रस्सा

गुहारि—दोहाई, रक्षा के लिये पुकार

दई—दैव

दई—दत्त

आहि—आह, है

मूरु—मूल्य

पीनस—नाक का एक रोग, जिसमे घ्राणशक्ति नष्ट हो जाती है।

तूठे—तुष्ट

पृष्ठ १३२

बानि—बान, आदत

जग-बाइ—जगत् की हवा

ओप—काति

उजास—प्रकाश

रतिरग—प्रेम रस

ताते—तप्त

सवादिलु—स्वादिष्ठ

पृष्ठ १३३

कनक—धतूरा, सुवर्ण

धध—जंजाल

जोन्ह—ज्योत्स्ना, चांदनी

मोषु—मोक्ष

पगार—तगार, कीचड़

करौट—करवट

गुन—गुण, रस्सी

पृष्ठ १३४

बानक—वेश

काछनी—काछी
विससियहि—विश्वाम करिये
आटे—दाव
मतीर—तरबूज
मरुधर—मारवाड
मारू—निर्जल प्रदेश
उदोतु—शोभा
लिलार—ललाट

पृष्ठ १३५

तार—नौका
रज-राजसु—क्रोध रूपी धूल
बरिया—बल्ली ?
औथरो—कम गहरा
मरु—तालाब
अकस—अदावत

पृष्ठ १३६

चग—गुड्डी
निर्गुन—गुणरहित, रस्सी रहित
तियछविछायाग्राहिणी—स्त्री सौदर्य रूपी छायाग्राहिणी मछली।
पखु—पक्ष
बाइसु—काक
आलवाल—थावला

पृष्ठ १३७

काकगोलक—कौएकी आख का गोला
चहलै—कीचड मे
बैनै—आयुरूपी नौका
कहलाने—क्लांत
पोत—चाल
गिरिधर—कृष्ण, पहाड उठाकर.

पृष्ठ १३८

मयक—चद्रमा
गैन—गमन
सतर—सीधा
परेवा—पारावत

मतिराम

पृष्ठ १३६

मन-तम-तोम—मन के अधकार का समूह
मजु—मनोहर
तिमिर—अधकार
सनरौही—कुपित

पृष्ठ १४०

चखनि—चक्षु
इदीबर—नीलनमल
अरबिंद—कमल
अरुन—लाल
गोप-इद्र—गोपेद्र, कृष्ण
इंद्रगोप—बीरबहूटी, तीजो
जीवन-मूरि—जीवन-मूल

पृष्ठ १४१

साँकरे—श्रृंखला
हौ—मै

पृष्ठ १४२

सकु—कील, बरछी
लकुटिया—छडी

रसनिधि

पृष्ठ १४३

पोहनबारो—पिरोने वाला

ज.हनिहारो—देखने वाला

पृष्ठ १४४

दाना—काबुली अनार, बिदाना

ऐन—ठीक, पूरा-पूरा

अरे—आड़े, आरा

पृष्ठ १४५

पाद—पैर

दुज—द्विज, विप्र

रस—पानी

छीर—दूध

पृष्ठ १४६

औघट—दुर्गम

गर—गला

पखेरुआ—पक्षी

दाव—आग

अघ—पाप

पृष्ठ १४८

भूषणहू—म.र्चो की, जिसकी आड मे बैठकर लड़ाई की जाती है।

भट-जोट—योद्धाओं का समूह

किम्मति—कीमत

कंगूरन—बुर्ज, किले की दीवार में वह स्थान जहां से सिपाही लडते हैं

कोट—किला

पुरुहूत—इंद्र

पृष्ठ १४९

कुभभव—अगस्त्य

सचीपति—इंद्र

पच्छिराज—गरुड

पन्नग—सर्प

गाजी—गर्जने वाला

दाडिम—अनार

दरके—फटे

पृष्ठ १५०

देवल—मदिर

गयद—हाथी

करवाल—तलवार

कलेऊ—प्रातराश

भुजगेस—सांपो का राजा

दीह—दीर्घ

पाखरिन—पाखर, लोहे की झूल

परछीने—पंख रहित

पृष्ठ १५१

जोम—आवेश

अगार—घर

पगार—कीचड

तुरो—घुडसवार

पद्माकर

पृष्ठ १५२

बमके—अभिमानो

करखा—बढ़ावा

सेलैं—शिलाए

अत्रनि—अस्त्र
पनारी—पतनाला

पृष्ठ १५३

जुग्गिननि—योगिनियो को
पृथुरित—विस्तृत, अधिक
कित्ति—कीर्ति

सबलसिंह चौहान

पृष्ठ १५४

अनी—फौज

पृष्ठ १५५

खग—तलवार

पृष्ठ १५६

फणिक—सर्प

वृंद

पृष्ठ १५८

मलयज—चदन
अयान —अज्ञानी

पृष्ठ १५६

मधु—शहद
भेख—भेक, मडूक

पृष्ठ १६०

खर—खल
कामरी—कबल

पृष्ठ १६१

नग—पर्वत
भुवाल—राजा

पृष्ठ १६२

विहान—विभान, प्रात
मकरालय—समुद्र

पृष्ठ १६३

जोह—जीभ
लबार—गप्पी
सियरात—शीतल होती है

पृष्ठ १६४

तोय—पानी
आफू—अफीम

सूदन

पृष्ठ १६६

गाजी—गरजी
भुसडी—तोप
जलद्दा—बादल
नैजाब—भाला

पृष्ठ १६७

श्रौनरगी— रक्त मे रगी
ब्याल—सर्प
छवा—पशु का बच्चा

हरिश्चंद्र

पृष्ठ १७१

छहरना—छितराना, बिखरना
पोहति—पिरोती है
सरिस—सदृश
मज्जन—स्नान
त्रिविधमय—आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक क्लेश
हरि-रस—हरि के चरणनखरूप जो चद्रकात मणि उस से बहने

वाला अमृत रस
ऐरावत—इद्र का हाथी
गिरि-कल—हिमालय के गले का सुदर हार
अकम-राई—बगलगीर होकर मिली
जोहत—देखत
मढी—मडप
साका—शका, धाक
नौबत—नगाडा

पृष्ठ १७२

सुच्छ—स्वच्छ
करन—हाथ
बारिधि—समुद्र
नवल—नवीन
दीठि—दृष्टि
कालिंदी—यमुना
तरनि-तनूजा—सूर्य की कन्या, यमुना
किधौ—या
उझकि—आगे को झुक कर
नै रहे—झुक रहे
सैवा न—सिवार
गोभा—गोभ, कली

पृष्ठ १७३

व्रज-कमल—व्रज की स्त्रियो के समूह के मुखरूपी कमल
राका—रात्रि
जुडात—प्रसन्न होते है
पारावत—कपोत
कारडव—हस विशेष

पृष्ठ १७४

रजतसिढी—चादी की सीढी
पावडे—पार पोश
बगराए—फैलाए
शाक्य—बुद्ध

पृष्ठ १७५

ख्वारी—खराबी
टिक्कस—टैक्स

पृष्ठ १७८

निशानाथ—चद्र
उडुगन—तारे

पृष्ठ १७६

घनपटली—बदली
बिट—खल

बदरीनारायण

पृष्ठ १८०

धर्मसूर—धर्म रूपी सूर्य

नाथूराम शंकर

पृष्ठ १८२

उबरै—ऊपर उठै
छिके—जाति से पृथक कर दिये जाय
कुलबोर—कुल को डुबोने वाले
खर्व—हेच
सगर—सग्राम
सुरभी—गौ

कमला—लक्ष्मी
अघदंभ—पाप और छल

पृष्ठ १८३

शबुक—सीप
रेणु—रेत
खर—गधा

पृष्ठ १८४

कर्पूर न होगा—दूर न होगा
पाग—पगडी
होड़—स्पर्धा

पृष्ठ १८५

विरद—उपाधि

पृष्ठ १८७

रंक—दरिद्र

पृष्ठ १८८

मनोज—काम, प्रेम

श्रीधर पाठक

पृष्ठ १८९

नाऊ—नापित, नाई

पृष्ठ १९०

ओक—घर
बानक—वेश

पृष्ठ १९१

जग-हार—जगत् के सार
बकतीय-हार—बगुलियो को उडाने वाले
रवि-प्रहार—सूर्यकिरणो के प्रचड प्रताप

पृष्ठ १९२

धुरवान—धुरा वाले
विज्जुपतन—बिजली गिरना
तिय-तान—स्त्रियो के समूहो का गान
पागहु—अनुरक्त होओ

अयोध्य सिह उपाध्याय

पृष्ठ १९३

मयक—चद्र
लोक-काल—ससार के अधकार को नष्ट करनेवाला
अवनीप—राजा
राका-रजनीश—रात्रि का चद्रमा
उत्ताल—ऊची
पवि—वज्र
अनल रूत—अग्नि फेंकने में सलग्न

पृष्ठ १९४

तोम—समूह
तमी-तामस—रात्रि अंधकार
कलानिधि—चद्र
अविकच भाव—न खिलना
कृमि—कीट

पृष्ठ १९६

वारिधि-प्रवाह—समुद्र की धारा का वेग

पृष्ठ १९७

कुसुमाकर—वसत
काकली—मधुर ध्वनि

पृष्ठ १९८

अबीर—रंगीन कडनी

तमोरि—सूर्य=तमस्+अरि

पृष्ठ १९९

खजडता—चुप्पी

नभनिधि—आकाश

रामचंद्र शुक्ल

पृष्ठ २०४

अप्रमेय—अज्ञेय, जो प्रमाणो से न जाना जा सके

थहाइये—थाह लीजिये, जानिये

प्रसग—प्रकरण

महा-अखड—सृष्टि के आदि का अखड अधकार

अगम्य—जो न जाना जा सके

उछाह—उत्साह

तार लगाय—लगातार

सिंधु दिशि—समुद्र की ओर

पृष्ठ २०५

सत्वोन्मुख—तत्त्व गुण की ओर ले जाने वाली, सत्ता की ओर ले जाने वाली।

सर्गगति—ससार की गति

घनपुज—बादल समूह

कला—अश

दुति—द्युति

दामिनि—बिजली

उरोज—स्तन

छीर रसाल—मधुर दुग्ध

व्याल दशनन—साप के दांत

गरल कराल—तीव्र विष

जयशंकर प्रसाद

पृष्ठ २११

स्वर्ण-किजल्क—सोने के कमल का

विकल-दूती—कलपाने वाली पीडा को बताने वाली

अरुण—लाल

सम—ठीक समय पर

कोक-धारा—लाल कमलके मिठास की धारा

पृष्ठ २१२

विरज—निष्काम

वियोगि हरि

पृष्ठ २१३

मधुरिपु—मधुराक्षस का शत्रु

कलियमदमर्दन—कालिय की मस्ती को झाडने वाला

लोकोत्तर—उत्तम

उछाह—उत्साह

आन—अन्य

मजु—स्निग्ध, मधुर

ओज—वीरता (वीर रस)

नैन सरोज—नयनकमल

पेड—डिग

घालक—घातक

प्रकृतिसूर—प्रकृत्या शूर, स्वभाव

से ही वीर
बलि—बलि नामक राजा
अनूप—अनुपम
मरमी—ज्ञाता
विगस्यौ—विकसित हुआ है
सुरभित—सुगधित हो रहा है

पृष्ठ २१४

समर—भिडना, युद्ध
कादर—कायर
भभरि—भभराकर, डर कर
समर धार—युद्ध की नदी
मंझधार—मध्य धार
नाखि—लघन करके, पार करके
करबाल—तलवार
कल—सुदर

पृष्ठ २१५

अजुरिन—अजलि
शोणिनु—रुधिर
कदुक—गेद
ओजमद—वीरता का मद
जूझिबै—लडने
अवगाहि—उतारना, नीद मे होकर चलना
सुरसरी—देवो की नदी, गगा
कबन्ध—धड़
अनल—कुड—अग्निकुड
तारण तरण—पार लगाने वाला
कुरुखेत—कुरुक्षेत्र
प्रतिरूप—प्रतिरूपक, मूर्ति

पृष्ठ २१६

अकोर—(गोदी मे) लेना
गय—गयद हाथी
सरिस—सदृश
सिवा-मधुकर—शिवाजी के यश रूपी कमल काभौरा
रसभूषण-भूषण—रसो मे श्रेष्ठ रस की महिमा को बढाने वाला
सरविद्ध—तीर से जखमी
पचानन—केसरी
केहरी—केसरी, सिह
कुम्भ—मस्तक
करीन्द्र—हस्तिराज

पृष्ठ २१७

तनुवारिधि—शरीर रूपी समुद्र
अतनुतरंग—कामदेव की लहर
ताँमधि—उसके मध्य
अनल बर्न—अग्नि के रग वाली
दुबनदीह दलु—शत्रुओं की दृष्टिओ के समुदाय की
उमाह—उत्साह
रतिरगली—प्रेमरगरजित
अवदात—सफेद
तडित—बिजली
दुरि जाय—दूर हो जाती हैं
सारग—शार्ग, धनुष
अग—शरीर

मूररस—प्रेम का मूल्य

पृष्ठ २१८

अच्छरनिधि—विद्या, पुस्तके
पयोधर—स्तन
परिच्छा—परीक्षा
धूरधूसरित—धूल से लिपटे हुए
धरनी—धरा, पृथ्वी

पृष्ठ २१९

जारि हौ—जलाऊगा
क्लीब – नपुसक
पुजहीन—पूजा हीन
छवाय - छान बंधवा कर
परखति—प्रतीक्षा करती हुई
बिसिखहारु—तीरो की माला
प्रसून – पुष्प
प्रकृत बीरबर—स्वभाव से ही बड़ा वीर
हीय—हृदय
दुर्ग—किला, वह स्थान जिस मे जाया न जासके
अथयौ—अस्त हो गया
भावन—भव्य, सुन्दर
माझ—मध्य
निजता —अपनापन
दई—दैव
परिधान—वस्त्र जो चारो ओर लपेटा जाय
अहै—अस्ति, है
घरीक—एक घडी मे

पृष्ठ २२०

छार—धूलि
भूभार—भूमि पर भारभूत
मर्म—रहस्य
मसक—मच्छर
पाट्यो—पाटा है
पयोधि—समुद्र
हेरति—देखती है
उतग—उत्तुग, ऊचा
पतधर—प्रतिष्ठा को बचाने वाले
अकाल—तीनो कालो मे विद्यमान

पृष्ठ २२१

तीछन—तीक्ष्ण
सुमनहार—पुष्प माला
माननि-गढ=अभिमानिनी स्त्रियो के मानरूपी किले को
पौढे—लेटे
पत—प्रतिष्ठा
एहै— आयेगे
कादर—कायर
कामअधीर—इच्छा से सताए गए
तियमृगईछन—स्त्री रूपी मृग की आख
छार—धूलि
उर—छाती
घाय—घाव
नवकीन—नया किया है

उसीर कुटीर—खसखस की कुटी
वृषरवि—वृषरासि का सूर्य
मनोजअधीर—कामतप्त

पृष्ठ २२२

दाप—दर्प, अभिमान
मेड—मर्यादा
रसालरस—आम्ररस
घलाघली—मारकाट
हियौ—हृदय
पोत—जहाज
अहेरी—व्याध, शिकारी
ऐंड—ऐंठ
अथयौ—अस्त हुआ
उनयौ—उदय हुआ

पृष्ठ २२३

जिमि—जैसे
तिमि—तैसे

सूर्यकांत त्रिपाठी

पृष्ठ २२७

नलिन नयन—कमल के समान नेत्र
शर्वरी—रात्रि
ताल तरग—उच्च लहर
वेणु-निर—सुन्दर बीणा के बजाने मे रत
अलक—घुघराले बाल
पुलक—रोमाच
सन्तत—लगातार
द्रुतगतमयी—तेज गति वाली
अतीत—भूत
किसलय—पत्ता
मृदुल—मृदु

पृष्ठ २२८

सुरसरिता—गगा
उच्छवास—भाव
कातकामिनी—रसिको को लुभाने वाली
सुरापान—मद्यपान से होने वाले

पृष्ठ २२९

घने अधकार (नशा)
भ्राति—चक्कर आना
दिनकर—सूर्य
खर—कठोर
सरसिज—कमल
रागानुग—प्रेमोन्मुख
समृद्धि—सम्पत्ति
घन विटप—घने वृक्ष
वेणी—गूथ
रेणु—धूल

पृष्ठ २३०

सरद-हास—शरद ऋतु के चद्रमा की कला की हसी
निशोथमधुरिमा—रात्रि का आनद
गध कुसुम—सुगधित पुष्प
पराग—पुष्प धूलि
युक्त—प्रकृति मे बधे हुए
मधुमास—बसत

कल—सुमधुर

मदन—कामदेव

पचशर हस्त—पाच तीर हाथ मे लिए हुए (कामदेव)

दिग्वसना—नगा=दिशा ही है कपडे जिसके

घन पटल—बादलो की तहे

तडि तूलिकारचना—बिजली की पेंसिल से बनी हुई चित्रकारी

ता०-नृत्य=युद्ध रूपी ताडव (कठोर नृत्य) का मस्त नाच

नाद—ध्वनि

इदु—चद्रमा

अरविंद—कमल

सुमित्रा नन्दन पंत

पृष्ठ २३१

दुर्विधुरा—क्लेश पीडित

भू—पृथ्वी

मानस पट—मन का कपडा

द्रुत—जल्दी

प्रावट्—बरसात

दरावे—घिराव

निदान—अत मे

नीरव—मौन

निर्भर—विस्रब्ध, भरोसे मे

दिनकर कुल—सूर्यवंश

जुडाले—मिलकर ठडे हो ले

पृष्ठ २३३

स्मिति—मुसकाना

मृन्मरण—मिट्टी की तरह रहना और मरना

ससृति—सृस्टि

श्रीगुलाबरात्न

पृष्ठ २३४

गयदिनी—हथिनी

पृष्ठ २३५

धाराधर—बादल

गाज—बिजली

तरिणी—किश्ती

कबीर

पृष्ठ २५१

पाय—पाद, पैर

पृष्ठ २५२

बेहद—असीम, परमात्मा

गिरही—गृही, गृहस्थ

निगरह—निग्रह, रोक

पृष्ठ २५३

हुलीचा—हौदा

स्वान—कुत्ता

मता—मत, मति, समझ

औसर—अवसर

मिलसी—मिलेगा, मिलिष्यति

पृष्ठ २५४

मधि—मध्य

कर्मना—कर्म से
सरिता—नदी
अगाद—अगाध, जिसकी गाध (=गाह) न हो
केरी—की

पृष्ठ २५५

खालरी—खाल, खलडी
भावे—चाहे
पाँवरी—पावडी, पादुका
खेह—राख
रैन—रजनी, रयनी, रैन रात

पृष्ठ २५६

अमल—नशा
अविगतरता—अज्ञात मे रमे हुए
माते—मत्त, मस्त
राता-माता—रक्त, मत्त, प्रेमी
जरिवरि—जलबल करके
कनककलस—सोने का घडा
मद—मद्य, शराब
सेती—से, के साथ

पृष्ठ २५७

एह—यह
मृत्तक—मृतक, मरा हुआ

पृष्ठ २५८

पाहुना—अतिथि, प्राघुणिक
शरधा—श्रद्धा, देखो गिरही

पृष्ठ २५९

थूनी—स्थूणा, खभा
भान—भानु, सूर्य
खीना—क्षीण हुआ
नरनाहा—नरनाथ
मूवाले—मृत्युवाले
आगमनिगम—वेदशास्त्र
गहि—पकडकर

पृष्ठ २६०

मीना—मछली
सुवना—शुक, तोता
नौतम—नवतम, नया, भक्त
तत मत—तत्र मत्र
पछिवारा—पछवाडा, पीठ
आसापास—आशा के पास
काच—कच, नि सार
गलिमाला—गले की माला टिंडरो की माल

पृष्ठ २६१

सोधिवे—देखकर, शोध कर

पृष्ठ २६२

सबूरी—सब्र, सतोष
कटुक—कटु, कडवा
पचरग—पाच रग का, पाचतत्त्वो का
सुन्न महल—शून्य का महल द्वैता-भाव
दियना—दीया, दीपक, देखो सुवना

जायसी

पृष्ठ २६५

परगासू—प्रकाश

कविलासू—कैलाश
खेहा—मट्टी, धूल पृथ्वी
उरेहा—उद्रेख, उल्लेख, रचना
दिनिअर—दिनकर, सूर्य
नखत—नक्षत्र
तराएन—तारागण
सीउ—शीत
बीजु—वज्र
छाज—सज्ज, छज्ज, साज
अउगाहि—अवगाह करके घुस करके
खिखिद—किष्किधा, कुखड
निरमरे—निर्मल
जरिमूरी—जड-मूल
तरिवर—तरुवर, विशाल वृक्ष
साउज—शिकार के योग्य जीव
आरन—अरण्य
ओखद—औषध
भुगुति—भुक्ति, भोग
भूजई—भोज
बिरासू—विलास

पृष्ठ २६६

दरब—द्रव्य
मीचु—मृत्यु
ददू—द्वन्द्व, रागद्वेष आदि
बरिआर—बड़ा
बिखबसा—विष भरा
अमी—अमिय, अमृत
लोवा—लोमाशिका, लोमडी
भोकस—बुभुक्षु भुक्कड़
दएता—दैत्य
दिसिटि—दृष्टि
उपराही—ऊपर

पृष्ठ २६७

सरबरि—बराबरी
भाँजइ—भनक्ति, तोडता है।
बाउर—बातूल, बावला
हिय—हृदय
अनूपा—अनुपम

पृष्ठ २६८

नी रे—पास
बयना—वचन
तराई—तारे

पृष्ठ २६९

वसीठ—वशिष्ठ, दूत
लिलाटू—ललाट, मस्तक
पुहुमिपति—भूमिपति

पृष्ठ २७०

हय—घोडा
रइनि—रजनी, रात्रि
मिरतमडा—मार्तंड, सूर्य
धसमसइ—धमता है
नाँथ—नाथ नथ आभूषण
गोरू—गाय, पशु
निराश—पृथक
बरी बली

आगरि---आगर, आकर

पृष्ठ २७१

मेदिनि---पृथिवी
लेसा---जलाया जोड़ा
अँजोर---उज्वल
बोहित---पोत, जहाज
पोढकइ---मजबूती से देखो प्रौढ
कनहारा---कर्णधार, खिवैया
अउगाह---अवगाह
दई---दैव
धुब---ध्रुव

पृष्ठ २७२

अलहदाद---सैयद मुहम्मद के शिष्य
परसन---प्रसन्न
नयनाँहा---नयन से, देखो उपराही

पृष्ठ २७३

खाडइ---तलवार मे
जुझारू---जूझने वाला, योद्धा

खंड २

पृष्ठ २७४

सरनदीप---श्रवणद्वीप, अरब वाले लका को सरनदीप कहते थे, भूगोल का ज्ञान न होने से कवि ने सरनदीप और लकामे भेद किया है।
आरन---अरण्य
अतिम---उत्तम
कटक---सेना
चक्रवर---चक्रवर्ती

पृष्ठ २७५

अबराउ---आम्रराज
हरिअर--हरा
भवर---भ्रमर
डीठी---दीखी
अम्रित---अमृत
परेवा---पारावत
हारिल---तोते जैसे हरे रग का पक्षी, जो पृथ्वी पर नही उतरता और बड पीपल तथा पालर पर रहता है।

पृष्ठ २७६

पइग--पग, पद
तपा---तपस्वी
जपा---जप करनेवाले
सुरिखेसुर---सुऋषीश्वर, ऋषियो मे श्रेष्ठ
आछहि---है
सेवरा---साधुविशेष जो मद्य को दूध बनाकर पी जाते है।
खेवरा---सेवराओ का अवातर भेद
बानपर---वानप्रस्थ
अनाई---लाकर, आनाय्य
गरेरी---गले के ऐसी, घुमौआ
रति---रक्त, लाल
रूख---वृक्ष

पृष्ठ २७७

उए–उदय हुए
मछ—मत्स्य
मरजीआ—मोती निकालने वाला
नउपाता—नवपत्र, नए पत्तो वाले

पृष्ठ २७८

अबासा—आवास
रक, गरीब
ओठँघि—रुगकर, उपस्थगित
आहक—गधर्वविशेष
हतउडा—हथौडा
बेस.हा—विसाधन, खरीद का सामान
सोधा—सुगधक
गाधी—गधी

पृष्ठ २७९

छरहटा—नकल करने वाले क्षार (भस्म) लपेटने वाले
पेखन—प्रेक्षण, तमाशा
चरपट—चरकटा, गठकटा
खोह—खदक
पाजी—पाद्य, पदाति
नाहर—शेर

पृष्ठ २८०

गजर—गजल
नउ—नव
झारि—झाडकर, केवल (चारि?)

पृष्ठ २८१

ठेघा—सहारा (देखो हिन्दी डेंगा)
पइगहि—पैर से ही
माते—मत्त
निमेते—निमित्त, अत्यधिक मस्त
अगवई—अगीकार करती है
किआह—पके ताडके रगका घोड़ा
अग्रमन—आगमन, आगे।

पृष्ठ २८२

उरेहे—उद्रेख, उल्लेख
धउरहर—धवलगृह
अछरिन्ह—अप्सराओ से
जोतारू—प्रणम्म

खंड ३

पृष्ठ २८३

ओदर—उदर, पेट
अउधानु—अवधान, गर्भाधान
रहसिकूद—खेलकूद
उआ—उदित हुआ

पृष्ठ २८४

गुरीरा—सयोग
बइसारी—बिठादी
लच्छि—लक्ष्मी
ओनाही—झुकते है, अवगमन्ति
बरोक—वर-रोक, वर को वचन मे बाधना
धउराहर—धरहरा

पृष्ठ २८५

रजाएसु—राजादेश, राजा की आज्ञा

हउँ—मैं, अहम्

पृष्ठ २८६

हीछा—इच्छा

गैवा—जीमा, खाया

कया—काया

आखउ—कहू, आख्या

खंड ४

पृष्ठ २८७

पुहुयावती—पुष्पावती

पाली—प्रान्त, तट

दहु—दोनो मे से

डेलि—जलिया, पिजरा

खोपा—जूडा केशो का

ओनए—अवन मे झुके

दाविनी—दामिनी, बिजली

पृष्ठ २८८

बिसहर—विषधर, साप

उनत—उन्नत

रउताई—राजपुत्रता, ठकुरई

पइसारू—पैठसाल

पृष्ठ २८९

उतराना—ऊपर आया

ओप—काति

खंड ५

मंजारी—मार्जारी

भखदाता—भक्ष्यदाता

पाहन—पाषाण, पत्थर

पृष्ठ २९०

छूछा—तुच्छ, शून्य, खाली

तहिअइ—तदैव, तभी

सुअटा—शुक

आउ—आयु

पराही—परे जाय

पृष्ठ २९१

डहन—डयन डैना पख

बइरिन्ह—बेरी का

बेरा—का

गिउ—ग्रीवा

खाघू—खाद्य, खाजा

मसटि—चूप्पी

पृष्ठ २९२

खंड ६

बारा—बालक

पृष्ठ ३०९

छालम

अजिर—आगन

छंहगा—शोभा

सीनी—क्षीण, पतली

सगूली—झगा, कुरती

ललना—स्त्रिया

पियूप—पीयूष, अमृत

पयपान—दुग्धपान

पृष्ठ ३१०

आनन—मुख

आन—अन्य

धौरी—धौली, धवल

धाइ—दौडकर

धौरि—धूलि

बैन—वचन

अरविंद—कमल

निकुज—कुज

बिस्वबदनी—विश्व बद्या, ससार की पूज्य

अलाप—आलाप

केकी—मोर

शेख

पृष्ठ ३१२

मोष—मोक्ष

घोष—ब्रज

पौनसाधन—प्राणायाम

तिमिर—अधकार

रोचन—प्रकाशक, सुदर, रोचक

गो—गया

तिरिया—स्त्री, अहल्या

पृष्ठ ३१३

धुरि—धुल

धूरिजटि—धूर्जटि, महादेव

गरे—गले मे

मिहकर—चद्रमा

पा—पैर

ताज

पृष्ठ ३१४

सेवरी—भीलन

गनिका—गणिका

पृष्ठ ३१५

लार—लाड

प्राग—प्रयाग

बटपात—वटपत्र

सेतबध—सेतुबध

यारी साहब

पृष्ठ ३१६

जोतसरूपी—प्रकाश रूप, चिद्रूप

परगास—प्रकाश

सूर—सूर्य

अनहद—अनाहत अथवा असीम

फटिक—स्फटिक

नजीर

पृष्ठ ३१७

आपी—आपकी

तिफल—व्यक्ति, शय

बिरजराज—ब्रज के राजा

पृष्ठ ३२०

बासुकि—सर्प, जिस पर पृथ्वी धरी है।

प्रीतम

पृष्ठ ३२२

अवनि—पृथ्वी

सेस—शेषनाग
हरबारिकै—हरबरायकर, घबड़ाकर

पृष्ठ ३२३

दारू—

दरवेश

पृष्ठ ३२४

प्रतक्ष—प्रत्यक्ष
कुण—कौन

सैयद अमीर अली

पृष्ठ ३२६

हिमगिरि—हिमालय
हृच्दाम—हृदय-मंदिर
वीर प्रसवा—वीरो को जन्मानेवाली

पृष्ठ ३३०

ललाम—ललित सुदर
पर्व—उत्सब

पृष्ठ ३३२

कविकोविद—कवियो मे श्रेष्ठ
बैंना—वचन, वाणी

पृष्ठ ३३३

सतमतगगनमान—सौ हाथियो के समूह का मद
स्वान—कुत्ता
ससा—खरगोश

रहीम

पृष्ठ ३०१

मुनि पत्नी—अहल्या, राम-पद-रज से पत्थर से स्त्री बन गई थी।
सीय—सीता
केरि—केला
दशा—वत्ती
तरैयन—तलैया, ताल
कमला—लक्ष्मी

पृष्ठ ३०२

भुजग—साप, हाथो से चलनेवाले
बडरी—वडी
घूर—तेजी से
जलधि—समुद्र, उदधि
मूकनि—मुक्का
बैंराट—विराट् (राजा) का

पृष्ठ ३०३

बारे—बलाने पर, बचपन मे
बढै—बुझने पर, बडा होने पर
भीर—मुसीबत
बिलगाह—अलग हो जाती है।
गोइ—गोइ छिपाकर

पृष्ठ ३०४

गाम—फास
गुन—गुण, रस्सी
मृगया—शिकार

पृष्ठ ३०५

अथवत—अस्त होता है
दीवो—दीपक, दान
कंज—कमल